इस्लाम और बर्थ कन्ट्रोल

सैयद अबुल आला मौदूदी

अनुवाद

डा० कौसर यज़दानी नदवी

विषय सूची

क्या ? **कहां ?**

क्या ? **कहां ?**

भूमिका

यह निबन्ध १९३५ ई० में लिखा गया था। इस के बाद से कभी इस को दुबारा देखने का मौक़ा न मिल सका, यद्यपि बाद में इस विषय से सम्बन्धित बहुत सी जानकारियां एकत्र करने का अवसर हुआ, परन्तु इतनी फ़ुर्सत न मिल सकी कि उनको एकत्र एवं संकलित कर के इस पुस्तक में कुछ बढ़ा दिया जाता। इसी इन्तिज़ार में यह पुस्तक कई वर्ष तक पड़ी रही, अन्ततः अब यह इसी प्रकार पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो रही है।

जिस नैतिक संकट का अनुभव कर के अब से सात-आठ बर्ष पहले मैंने यह निवन्ध लिखा था, वह कम नहीं हो रहा, बल्कि नित्य प्रति बढ़ रहा है और शायद वर्तमान युद्ध के बाद इस में कुछ और वृद्धि ही होगी। इसलिए पश्चिम से आई हुई हर वबा का अभिवादन करने वालों को सीधा मार्ग दिखाने की आवश्यकता अब पहले से भी अधिक तीव्र है। इस युद्ध में एक महान राष्ट्र (अर्थात फ्रांस) उन ग़लत नैतिक एवं सांस्कृतिक सिद्धांतों का अति शिक्षाप्रद परिणाम देख चुका है जो अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी की विवेकशून्य विचार-स्वतंत्रता से प्रभावित होकर अख़्तियार किए गए थे। जो शक्ति एक लम्बी मुद्दत तक संसार की प्रथम शक्तियों में गिनी जाती रही है, अब वह एक दूसरी, बल्कि तीसरी श्रेणी की शक्ति बनती दिखाई देती है। इस का वह राज्य जो चार महाद्वीपों पर फैला हुआ था, हमारी आंखों के सामने टुकड़े-टुकड़े हो रहा है। इसके महान नीतिज्ञ मार्शल पीतां (Marshall Petaina) ने स्वयं जून १९४० ई० की पराजय के बाद खुले तौर से इसको स्वीकार कर लिया है कि हमारी

यह पराजय हमारी अपनी विषय-वासना का फल है, और विश्व के विवेकियों ने एकमत होकर इस हार के कारणों में से एक अहम कारण इस के जन्म-दर की लगातार कमी को क़रार दिया है।[1] इस के बाद विश्व के दूसरे महान् राष्ट्र (अर्थाम ब्रिटेन) को भी अब यही संकट घेरे हुए है। चुनांचे हाल ही में मिस्टर चर्चिल के सुपुत्र मिस्टर रेंडोल्फ चर्चिल ने भाषण देते हुए कहा—

"मैं नहीं समझता कि हमारा राष्ट्र सामान्य रूप से इस संकट को जान चुका है कि अगर हमारा जन्म-दर इसी प्रकार घटता रहा तो एक शताब्दी के भीतर ही ब्रिटिश द्वीप समूह की जन संख्या केवल ४०,००,००० रह जाएगी और इतनी कम आबादी के बल-बूते पर ब्रिटिश द्वीप समूह एक बड़ी शक्ति बाक़ी न रह सकेगा।" फिर इस जन्म-दर की कमी के कारणों पर वार्ता करते हुए वह कहते हैं—

ब्रिटिश द्वीप समूह के लोगों में अपने सामाजिक सम्मान का विचार बहुत ज्यादा है और वे पूरे मुबालग़े के साथ अपनी इस प्रतिष्ठा को क़ायम रखने की कोशिश करते हैं। उन के यहां जान-बूझ कर परिवार के सदस्यों की संख्या कम कराई जाती है, क्योंकि बच्चे एक-दो से अधिक हो जाने की शक्ल में उन्हें भय होता है कि हम अपने बच्चों को उस शान के साथ स्कूल न भेज सकेंगे जिस के साथ उन के पड़ोस के बच्चे जाते हैं और इस से समाज में उन की साख गिर जायेगी।"

यूरोप के जिन दूसरे देशों को पिछले दिनों युद्ध के दैत्य ने कुचल कर रख दिया है, उन में से अधिक तो इन्हीं अशुद्ध सांस्कृतिक सिद्धांतों की भेंट चढ़े हैं, क्योंकि उन्होंने अपनी मूर्खतावश जीवन की उन प्रणालियों को अख़्तियार कर लिया, जिन्होंने उनकी राष्ट्रीय

---

१. स्वयं मार्शलपीतां के शब्दों में इस का मूल कारण बच्चों की कमी (Too few children) है।

शक्ति को खोखला कर दिया। परन्तु जो लोग संसार में अन्धों की तरह चलने के आदी हैं, वे इन घटनाओं से कोई शिक्षा नहीं हासिल करते और विज्ञान की मायावी भाषा में जो सिद्धान्त क़ागज़ पर लिखे गये हैं, उन्हीं का अनुकरण किये चले जाते हैं, यद्यपि तजुर्बे की कसौटी ने, जिसने आज तक किसी पालिश करने वाले के साथ रियायत नहीं की है, इस चमकदार खोट का रहस्य कभी का खोल दिला है।

मेरी इस छोटी सी पुस्तक का विषय, यद्यपि बर्थ कंट्रोल तथा इस के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक आधारों का निषेध है, परन्तु अंशतः इस में संस्कृति एवं संस्कृति-दर्शन की विस्तृत समस्याओं पर भी कुछ संकेत कर दिये गए हैं, जिन से चिन्तनशील व्यक्तियों को जीवन-समस्याओं पर विचार करने के लिए पश्चिम के पद-दलित मार्गों से अलग एक दूसरा मार्ग मिल सकता है। मेरी पुस्तक 'पर्दा' और 'पति-पत्नी के अधिकार' के साथ मिलाकर यह पुस्तका इस्लामी समाज-व्यवस्था तथा उस के सैद्धान्तिक आधारों को समझने में सम्भवतः अच्छी सहायक सिद्ध होगी।

—अबुलआला
९ मार्च १९४३ ई०

प्राक्कथन

भारत-पाक उपमहाद्वीप में पिछली चौथाई सदी से बर्थ कन्ट्रोल (Birth Control) का आन्दोलन ज़ोर पकड़ रहा है।[1] इस के पक्ष में प्रचार व प्रसार करने और लोगों को इसका प्रलोभन देने और इसके अमली तरीक़ों के बारे में जानकारियां जुटाने के लिए समितियां स्थापित हो चुकी हैं और पत्रिकायें प्रकाशित की जा रही हैं। पहले लन्दन के बर्थ कन्ट्रोल इन्टरनेशनल इन्फार्मेशन सेन्टर की डायरेक्टर मिसेज एडिथ हो मार्टिन (Mrs. Edith Howe Martyn) ने इस आंदोलन के प्रचार व प्रसार के लिए इस उपमहाद्वीप का दौरा किया, फिर सन् १९३१ ई० की जनगणना के कमिश्नर डा० हटन (Dr. Hutton) ने अपनी रिपोर्ट में भारत की बढ़ती हुई आबादी को भयानक बता कर बर्थ कन्ट्रोल के प्रचार पर ज़ोर दिया। इसके बाद संयुक्त भारत की कौन्सिल आफ स्टेट के एक "मुसलमान" सदस्य ने सरकार के ध्यान को आकर्षित किया कि वह भारत में आबादी की वृद्धि को रोकने के लिए व्यावहारिक उपाय अपनाये। यद्यपि भारत सरकार ने उस समय इस प्रस्ताव को रद्द कर दिया था, लेकिन लखनऊ में

---

१. अब इस आंदोलन का नया नाम 'परिवार नियोजन' (Planned Parent hood) है। इस शब्द का इस्तेमाल अमेरिका में शुरू हुआ और फिर धीरे-धीरे इस आन्दोलन का यही नाम पड़ गया। सन् १९४२ ई० में अमेरिका के बर्थ-कंट्रोल फेडरेशन का नाम बदल करके Planned Parent hood Federation of America कर दिया गया (देखिए इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटानिका भाग ३, पृष्ठ ६४७)

औरतों की अखिल भारतीय संस्था ने इसके पक्ष में एक प्रस्ताव पारित कर दिया। कराची और बम्बई के नगर निगमों में इसकी व्यावहारिक शिक्षा चालू करने पर वार्ता की गई। मैसूर, मद्रास और कुछ दूसरी जगहों पर इसके लिए अस्पताल (Clinics) खोल दिए गए और साफ़ नज़र आने लगा कि पश्चिम से आई हुई दूसरी चीज़ों की तरह यह आन्दोलन भी इस उपमहाद्वीप में फैल कर रहेगा। इसके बाद भारत और पाकिस्तान दो स्वतन्त्र देश बन गये और कुछ ज़्यादा मुद्दत न गुज़री थी कि दोनों देशों की सरकारों ने अपनी-अपनी सीमाओं में इस आन्दोलन को एक राष्ट्रीय नीति के रूप में अपना लिया।

जहां तक भारत का सम्बन्ध है, वह तो एक धर्मनिरपेक्ष राज्य होने का दावा करता है, इसलिए उसे अपनी किसी सरकारी नीति के लिए धर्म से प्रमाण लाने की ज़रूरत नहीं, लेकिन पाकिस्तान तो एक इस्लामी राज्य है, इसलिए वहां यह भी सिद्ध करने की कोशिश की जाती है कि यह आन्दोलन ठीक इस्लाम के अनुसार है। इसके बाद अगर इस्लामी क़ानूनों का ज्ञान रखने वाले ख़ामोश रहें, तो आमतौर पर यही समझ लिया जायेगा कि इस्लाम सचमुच इस आन्दोलन की पुष्टि करता है या कम से कम उसे जायज़ रखता है।

यह पुस्तक इसी ग़लतफ़हमी को दूर करने के लिए लिखी जा रही है, लेकिन इसके पहले कि इस समस्या पर इस्लामी दृष्टिकोण से वार्ता की जाये, यह समझ लेना ज़रूरी है कि बर्थ कन्ट्रोल का आन्दोलन है क्या? कैसे आरम्भ हुआ? किन कारणों से उसे तरक़्क़ी हुई? और जिन देशों में वह लोकप्रिय हुआ, वहां उसके क्या परिणाम निकले! जब तक ये बातें अच्छी तरह बुद्धिगम्य न हो जायेंगी, इस्लाम का फ़तवा ठीक-ठीक समझ में न आएगा, न मन ही को संतोष होगा, इसए सब से पहले हम इन्हीं प्रश्नों पर प्रकाश डालेंगे और अन्त में इस सम्बन्ध में इस्लामी दृटिकोण की व्याख्या करेंगे।

इस सिलसिले में जो सामग्री इन पृष्ठों में प्रस्तुत की जा रही है, हम आशा रखते हैं कि देश का शिक्षित वर्ग भी और हमारा शासक-वर्ग भी गम्भीरता के साथ इस पर विचार करेगा। सामूहिक जीवन की समस्यायें इतनी उलझी हुई होती हैं कि किसी एक ही दृष्टि से उन पर सोचना और उन का एक हल तज्वीज़ कर देना कभी लाभकरी नहीं होता। एक सामूहिक समस्या को हल करने के लिए यह ज़रूरी है कि उस के तमाम सम्बंधित अंगों पर पूरी व्यापकता के साथ दृष्टि डाली जाए और किसी समय भी खोज व गवेषणा का द्वार बन्द न किया जाए। अगर किसी समस्या के बारे में एक राष्ट्रीय नीति बना भी ली गयी हो, तो उसे पुनर्विचार और पुनर्दृष्टि से उच्च न समझ लेना चाहिए।

—०—

उद्देश्य तथा पृष्ठभूमि

बर्थ कन्ट्रोल का मूल उद्देश्य नस्ल की वृद्धि को रोकना है। पुराने ज़माने में इसके लिए अज़्ल (पार्थक्य), गर्भपात, सन्तान-वध तथा ब्रह्मचर्य, (भले ही वह कौमार्य-व्रत के रूप में हो, अथवा गार्हस्थ्य जीवन होने के बाद भी संभोग से संयम के रूप में हो) के तरीक़े अपनाये जाते थे। आजकल आख़िरी दोनों तरीक़ों को छोड़ दिया गया है और उनके स्थान पर यह तरीक़ा निकला है कि संभोग तो किया जाए परन्तु दवाइयों अथवा यन्त्रों द्वारा गर्भाधान को रोक दिया जाए। गर्भपात के तरीक़े का भी अधिकता के साथ यूरोप और अमेरिका में प्रचलन है। परन्तु बर्थ कन्ट्रोल का आन्दोलन सिर्फ़ गर्भ बाधक उपायों पर बल देता है और इस का उद्देश्य यह है कि इन उपायों का ज्ञान इस अधिकता से फैला दिया जाए, और उनके साधन इतनी मात्रा में इकट्ठे किये जायें कि प्रत्येक बालिग पुरुष-स्त्री उससे फ़ायदा उठा सके।

आन्दोलन का आरम्भ

यूरोप में इस आन्दोलन का आरम्भ अठारहवीं शताब्दी के आख़िर में हुआ। इसका प्रथम प्रेरक शायद इंग्लैंड का सुप्रसिद्ध अर्थ-शास्त्री माल्थस था। उसके समय में अंग्रेज़ी राष्ट्र की दिन दूनी रात चौगुनी ख़ुशहाली के कारण इंग्लैंड की आबदी तेज़ी से बढ़नी शुरू हुई। आबदी की इस अविवृद्धि को देखकर उसने हिसाब लगाया कि ज़मीन पर बसने के क़ाबिल जगह सीमित है और इसी तरह आर्थिक-साधन भी सीमित हैं, परन्तु नस्ल की वृद्धि असीम है। अगर नस्ल

अपने प्राकृतिक वेग के साथ बढ़ती रही, तो धरती उसके लिए तंग हो जाएगी। आर्थिक साधन उसकी पूर्ति न कर सकेंगे और नस्ल की वृद्धि के साथ जीवन-स्तर भी घटता चला जायेगा। अतएव मानव-नस्ल की स्मृद्धि, सुख एवं कल्याण के लिय ज़रूरी है कि उसकी वृद्धि आर्थिक-साधनों के फैलाव के साथ संतुलित रहे और उससे आगे न वढ़ने पाये। इस उद्देश्य के लिए उसने ब्रह्मचर्य के पुराने तरीक़े को जारी करने का सुझाव दिया। अर्थात बड़ी आयु में विवाह किया जाये और गार्हस्थ्य जीवन में संयम से काम लिया जाए। ये विचार पहली वार १७९८ ई० में उसने अपनी एक पत्रिका (An essay on population as it affects the future improvement of Society में प्रस्तुत किए थे।

इसके वाद फ़ान्सिस प्लास ने फ्रान्स में नस्ल की वढ़ौतरी को रोकने की जरूरत पर ज़ोर दिया। परन्तु उसने नैतिक साधनों को छोड़कर दवाइयों और यन्त्रों द्वारा गर्भ निरोध का सुझाव रखा। इस मत के समर्थन में अमेरिका के एक प्रसिद्ध डाक्टर चार्ल्स. नोल्टन ने १८३३ में आवाज़ उठाई। उसकी पुस्तक 'दर्शन के फल' शायद पहली कितव है, जिस में गर्भ-निरोध के डाक्टरी तरीक़ों की व्याख्या कं। गई थी और उनके फ़ायदों पर ज़ोर दिया गया था।

प्रारम्भिक आन्दोलन की असफलता और उसका कारण

प्रारम्भ में पश्चिमवासियों ने इसकी ओर कोई ध्यान न दिया, इसलिए कि सिद्धान्त मूलत: ग़लत था। माल्थस हिसाब लगाकर यह तो देख सकता था कि जनसंख्या किस रफ़्तार से बढ़ती है, लेकिन उसके पास यह मालूम करने का कोई यन्त्र न था कि आर्थिक-साधन किस रफ़्तार के साथ वढ़ते हैं और ज़मीन में प्रकृति के कितने खज़ाने

छिपे हुए है जो ज्ञान की उन्नति, बुद्धि की कार्य-क्षमता, तथा कार्य-शक्ति से निकलते चले आते हैं और मनुष्य के आर्थिक-साधनों में वढ़ौतरी करते रहते हैं। उस का विचार आर्थिक उन्नति की उन सम्भावनाओं तक पहुंच ही नहीं सकता था, जो उसकी निगाहों से ओझल थे और उसके बाद शक्ति द्वारा गतिशील हुए। उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चौथाई भाग तक यूरोप की जनसंख्या तेज़ी से बढ़ती रही, यहां तक कि ७ वर्ष के भीतर-भीतर लगभग दुगनी हो गई। खास तौर पर इंग्लैण्ड की जनसंख्या में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई जिसका उदाहरण मानव-जाति के इतिहास में नहीं मिलता। १७७६ ई० में इस देश की जनसख्या १२ मिलियन (१२००००००) थी। १८६० ई० में ३८ मिलियन (३८०००००००) तक पहुंच गई। परन्तु इस वृद्धि के साथ-साथ आर्थिक-साधनों में ज़बरदस्ती तरक़्क़ी हुई। उद्योग तथा व्यापार में ये देश पूरे संसार के ठेकेदार वन गए। इनके जीवन का आश्रय स्वयं अपनी धरती की पैदावार पर न रहा, वल्कि वे अपने उद्योगों के विनिमय में अन्य देशों से खाद्य पदार्थ प्राप्त करने लगे और नस्ल की वरावर वढ़ौतरी के बाद भी उनको कभी यह महसूस न हुआ कि ज़मीन उनकी बढ़ती हुई नस्लों के लिए तंग हो गई है या प्रकृति के ख़ज़ाने उनकी नस्ल की वृद्धि का साथ नहीं दे रहे हैं।

वर्तमान आन्दोलन

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चौथाई भाग में एक नवीन आंदोलन उठा, जो नव माल्थोसी आंदोलन (The Neo-Malthusin movement) कहलाता है। १८७६ ई० में श्रीमती एनीबेसेंट और चार्ल्स ब्रेडला ने डाक्टर नोल्टन की पुस्तक (दर्शन के फल) को इंग्लैड में प्रकाशित किया। राज्य ने इस पर मुक़दमा चला दिया और मुक़दमे की प्रसिद्धि ने जनता को इस आंदोलन की ओर आकृष्ट कर दिया।

१८७७ ई० में डा० ड्रेसडेल की अध्यक्षता में एक समिति स्थापित की गई, जिसने वर्थ कन्ट्रोल के समर्थन में प्रचार व प्रसार आरम्भ कर दिया। इसके दो वर्ष बाद श्रीमती बेसेन्ट की पुस्तक 'जन-संख्या का नियम' (Law of Population) छपी, जिसकी एक लाख पचहत्तर हज़ार प्रतियां प्रथम वर्ष ही निकल गईं। १८८१ ई० में यह आंदोलन हालैंड, बेल्जियम, जर्मनी और फ़ास में पहुंचा और उस के बाद धीरे-धीरे यूरोप और अमेरिका के तमाम सुसभ्य देशों में फैल गया। वाक़ायदा समितियां क़ायम की गईं जिन्होंने बयानों और लेखों के ज़रिए लोगों को वर्थ कन्ट्रोल के फ़ायदे और उसके अमली तरीक़ों से सूचित किया। उसको नैतिक दृष्टिकोण से जायज़ वल्कि प्रशंसित, और आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद, वल्कि हर सूरत से अनिवार्य वताया गया। उसके लिए दवाइयों का आविष्कार किया गया, यन्त्र वनाए गए, साधारण लोगों तक पहुंचाने का प्रबन्ध किया गया। जगह-जगह वर्थ कन्ट्रोल के अस्पताल (Birth Control Clinics) क़ायम किए गए जहां औरतों और मर्दों को वर्थ कन्ट्रोल के लिए महारत भरे सुझाव दिए जाने लगे। इस तरह इस नये आंदोलन ने वहुत जल्दी ही तरक़्क़ी कर ली और अव दिन प्रति दिन बढ़ता चला जा रहा है।

उन्नति के कारण

आधुनिक युग में इस आंदोलन के फैलने के मुख्य कारण वे नहीं हैं, जिनकी बुनियाद पर शुरू में माल्थस ने नस्ल-वृद्धि की रोक-थाम करने का सुझाव दिया था। वल्कि सच तो यह है कि यह नतीजा है पश्चिम की मौजूदा औद्योगिक क्रान्ति, पूंजीवादी-व्यवस्था, भौतिकवादी सभ्यता और कामुक संस्कृति का। आइए, अब हम इन कारणों में से एक-एक पर दृष्टि डाल कर देखें कि उसने पश्चिमी राष्ट्रों को किस प्रकार वर्थ कन्ट्रोल पर मजबूर किया।

१—औद्योगिक क्रान्ति

यूरोप में जव मशीनों का आविष्कार हुआ और संयुक्त पूंजी से बड़े-बड़े कारखाने क़ायम करके अधिक उत्पत्ति (Mass Production) का क्रम चल पड़ा, तो गांव की आबादियां खेती-वाड़ी को छोड़कर कारख़ानों में काम करने के लिए शहरों की ओर आने लगीं, यहां तक कि देहात उजाड़ हो गए और बड़े वड़े भव्य नगरों का जन्म हुआ, जहां लाखों व्यक्ति एक तंग जगह पर इकट्ठा हो गए। इस चीज़ ने आरम्भ में यूरोप की ख़ुशहाली में बहुत ज्यादा वृद्धि की, परन्तु वाद में इसने अगणित आर्थिक कठिनाइयां खड़ी कर दीं। जीवन के लिए कड़ा परिश्रम बढ़ गया, मुक़ाबला सख़्त हो गया, समाज का स्तर ऊंचा उठा, जीवन की आवश्यकतायें फैल गईं और उनका मूल्य इतना वढ़ गया कि सीमित आय रखने वालों के लिए अपनी इच्छाओं के मुताविक़ अपने समाज के उच्च स्तर को वाक़ी रखना अति कठिन हो गया। मकानों में जगह कम और किराये अधिक हो गए। कमाने वालों के लिए खाने वालों का भार दूभर होने लगा। पिताओं के लिए औलाद और पतियों के लिए पत्नियों तक की परवरिश असह्य भार वन गयी। प्रत्येक व्यक्ति मजबूर हो गया कि अपनी आमदनी को अपने ही ऊपर खर्च करे और अन्य साझीदारों की संख्या जहां तक सम्भव हो, घटा दे।[1]

---

१. एक नये क़लमकार प्रो० पाल लैंडुस ने बड़े अर्थपूर्ण ढंग से इसे स्वीकार किया है—

'औद्योगिक समाज में इंसान प्रजनन, परिवार और उपजाऊपन के मामले में बेहद ग़लतकार और ग़लतफ़हमियों का शिकार हो गया है, यहां तक कि सेक्स (वासना) का ताल्लुक़ प्रजनन से कर दिया गया है, अर्थात वासना का असल काम अब नस्ल की वृद्धि (Procreation) नहीं, बल्कि मात्र मन-बहलाना (Recreation) बन गया है'। देखिए—Landis : Social Problems, Chicago 1959, P. 102

२—स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता

इन हालात में स्त्रियों को विवश होकर अपना संभरण आप करना और कुटुम्ब के कमाने वाले व्यक्तियों में सम्मिलित होना पड़ा। समाज का पुरातन तथा स्वाभाविक कार्य-विभाजन, जिसके अनुसार पुरुष का कार्य कमाना और स्त्री का कार्य घर का काम करना था, बेकार हो गया। स्त्रियां, कारखानों और दफ़्तरों में काम करने के लिए पहुंच गईं और जब रुपया पैदा करने का भार उनको संभालना पड़ा तो उनके लिए कठिन हो गया कि नस्ल की वृद्धि और संतान की परवरिश की इस खिदमत को भी उसके साथ पूर्ण कर सकें जो प्रकृति ने उनके सुपुर्द की थी। एक नारी, जिसे अपनी ज़रूरतों को पूर्ण करने या पारिवारिक संयुक्त बजट में अपना हिस्सा अदा करने के लिए प्रतिदिन काम करना आवश्यक हो, किस प्रकार इस बात पर तैयार हो सकती है कि वह इस हालत में बच्चे भी जने। गर्भावस्था की विपदायें बहुधा स्त्रियों को इस योग्य नहीं रखतीं कि वे घर के बाहर कुछ अधिक शारीरिक अथवा मानसिक परिश्रम कर सकें, मुख्यतः गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में तो उनके लिए बेकार रहना ज़रूरी है। फिर शिशु-प्रसव के समय और उसके बाद भी कुछ समय तक वे काम करने के योग्य नहीं रहतीं। इसके बाद बच्चे को दूध पिलाना और कम से कम चार साल तक उसकी देख-भाल, हिफ़ाज़त और लालन-पालन करना ऐसी अवस्था में किसी प्रकार भी सम्भव नहीं। न तो माता अपने दूध पीते बच्चे को दफ़्तर या कारखाने में ले जा सकती है, न अपनी थोड़ी सी आमदनी में इतनी गुंजाइश निकाल सकती है कि बच्चे की देख-भाल के लिए एक नौकर रख ले और यदि वह अपने इस नैसर्गिक कर्त्तव्यों को पूर्ण करने के लिए एक लम्बी अवधि तक बेकार रहे, तो भूखी मर जाये, या पति के लिए असह्य भार बन जाए। उसके अतिरिक्त जिसकी सेविका है, वह भी पसन्द नहीं कर सकता कि वह बार-बार कई महीने के लिए

छुट्टी लेती रहे। तात्पर्य यह कि इन कारणों से नारी अपनी प्राकृतिक सेवा से विमुख होने पर विवश हो जाती है और पेट की आवश्यकतायें उसकी इन शक्तिशाली भावनाओं को ठंडा कर देती हैं जो प्रकृति ने, माता वनने के लिए उसकी छाती में रख दी हैं।

३—वर्तमान संस्कृति एवं सभ्यता

वर्तमान संस्कृति एवं सभ्यता ने भी ऐसे कारण उत्पन्न कर दिए हैं जो औलाद की वढ़ोतरी से आम नफ़रत पैदा करने वाले हैं।

भौतिकवाद ने लोगों में हद दर्जे की स्वार्थपरायणता उत्पन्न कर दी है। प्रत्येक व्यक्ति अपने श्रृंगार के लिए अधिक से अधिक सामग्रियां एकत्र कर लेना चाहता है और पसन्द नहीं करता कि उसकी आजीविका में कोई दूसरा भाग ले, भले ही वह उसका पिता, भाई, वहन, यहां तक कि उसकी सन्तान ही क्यों न हो। धनी-मानियों ने कामुकता के लिए भोग-विलास के अगणित तरीक़े और सामान ईजाद कर लिए हैं, जिनको देख-देख मध्यम एवं निम्न श्रेणी के लोग भी उनसे रेस करना चाहते हैं। उसका फल यह है कि वहुत सी भोग-विलास की सामग्रियां लोगों के लिए जीवन की आवश्यकता बन गई हैं और लोग यह समझने लगे हैं कि इन वस्तुओं के बिना वे किसी प्रकार जीवित ही नहीं रह सकते। इस चीज़ ने सामाजिकता के स्तर को इतना ऊंचा कर दिया है कि एक अल्प आय वाले मनुष्य के लिए अपनी ही इच्छाओं की ज़रूरत को पूरा करना कठिन हो जाता है और कहां यह कि वह स्त्री और औलाद के तक़ाजों को भी पूरा करे।[1]

---

१. एक फ्रांसीसी लेखक लिखता है कि फ्रांस में संतति-निरोध पर अमल करने वाले जोड़ों से, जब उन वजहों को मालूम करने की कोशिश की

स्त्रियों में शिक्षा, स्वतंत्रता, और पुरुषों के साथ स्वतंत्रतापूर्वक मेल-मिलाप ने एक नवीन प्रवृत्ति उत्पन्न कर दी है, जो प्राकृतिक कर्त्तव्यों से उनको दिन प्रति-दिन विमुख करतीं चली जा रहा है। वे घर की सेवा और बच्चों के भरण-पोषण को एक घृणित काम समझतीं और उससे जी चुराती हैं। उन की संसार की प्रत्येक वस्तु में रुचि है परन्तु नहीं है तो घर और उसके काम-काज और बच्चों की देख-रेख में। घर के बाहर के आनन्द को छोड़कर घर के भीतर की कठिनाइयों को सहन करना वे मूर्खता समझने लगी हैं। पुरुषों के लिए दृष्टाकर्षक बनने के लिए वे दुबली-पतली, नम्र व कोमल, सुन्दर तथा युवती बनना चाहती हैं, इन उद्देश्यों के लिए वे विषयुक्त दवाइयां तक खा कर प्राण तज सकती हैं,[1] परन्तु बच्चे जन कर स्वास्थ्य नष्ट करना

गयी, जिन से सन्तान का जन्म रोकने की कोशिश करते हों, तो पता चला कि बहुत ही कम लोग ऐसे हैं जो बच्चों की ज़्यादती और धन की कमी पर ऐसा करते हैं। अधिकांश लोगों के प्रेरक तत्व ये हैं —

'अपनी आर्थिक स्थिति बेहतर बनाना और जीवन-स्तर ऊंचा रखना, अपनी जायदाद को छोटे-छोटे हिस्सों में बंटने से बचाना, इकलौते बच्चे को बहुत ऊंचे दर्जे की शिक्षा देना और शानदार भविष्य के लिए तैयार करना, पत्नी के सौन्दर्य और कोमलता को गर्भ और बच्चों के पालने-पोसने की खखेड़ से बचाना, अपनी सैर-सपाटे की आज़ादी को बचाए रखना, इस ख़तरे की रोकथाम कि बच्चों वाली होकर बीवी-बच्चों ही की होकर न रह जाए और पति का मज़ा किरकिरा न हो जाए।'

१. कुछ दिनों पहले न्युयार्क के हेल्थ कमिश्नर ने एक चेतावनी छपवाई थी कि स्त्रियां दुबली-पतली बनने के लिए एक दवाई अधिकता से प्रयोग में ला रही हैं, जिस का नाम Dinitrophenol है। अनुभव से सिद्ध हुआ कि यह दवाई अति-विषयुक्त है और अब तक बहुत सी स्त्रियां इस के विषैलेपन से मर चुकी हैं।

सन्द नहीं करतीं। करोड़ों रुपए अपने बनाव-सिंगार और अपने स्त्र पर व्यय कर सकती हैं, परन्तु बच्चों के भरण-पोषण के लिए नके बजट में गुंजाइश नहीं निकल सकती।

संस्कृति तथा सभ्यता ने अति तीक्ष्ण कामुकता पैदा कर दी है। ोग चाहते हैं कि अधिक से अधिक आनन्द प्राप्त करें, परन्तु इस ानन्द के साथ जो परिणाम और दायित्व प्रकृति ने निश्चित किए उनसे बचे रहें। गर्भावस्था में और उसके बाद बच्चों के भरण-ोषण से अपने भोग-विलास को किरकिरा करना उन्हें नापसन्द ोता है।

बालकों की शिक्षा-दीक्षा तथा आगामी जीवन में उन के लिए फलता के मौक़े पैदा करने के लिए बहुत से लोग (मुख्यतय: मध्यम र्ग वाले) जरूरी समझते हैं कि एक-दो बच्चों से अधिक न पैदा रें। उनका जीवन-स्तर और उनकी विचार-धारायें इतनी उच्च हो ई हैं कि उनके आर्थिक साधन उनकी विचार-धाराओं का साथ नहीं सकते और ऐसी उच्च विचार-धाराओं के अनुसार अधिक बच्चों ा भरण-पोषण, शिक्षा दिलवाना और जीवन में अच्छे आरम्भ Start) के अवसर जुटाना उन के लिए कठिन हो गया है। इस साथ सभ्यता ने शिक्षा-दीक्षा के साधनों को बहुत ज़्यादा क़ीमती ना दिया है।

अनीश्वरवाद ने लोगों के दिलों से ईश्वर का विचार ही मिटा दिया है, तो इसकी क्या आशा कि वे उस पर भरोसा करें और उसके न्नदाता होने पर विश्वास रखें। वे केवल अपने वर्तमान साधनों ही र नज़र रखते हैं और स्वयं अपने आप को अपना और अपनी संतान ा अन्नदाता समझते हैं।

ये कारण हैं जिनसे पश्चिमी देशों में बर्थ-कन्ट्रोल के आंदोलन का तने तीव्र गति से प्रचार एवं प्रसार हुआ। यदि आप इन कारणों का यानपूर्वक निरीक्षण करेंगे, तो मालूम होगा कि पश्चिम-वासियों ने

सर्व प्रथम स्वयं ही ग़लती की कि अपनी सभ्यता, सामाजिकता और अर्थ-व्यवस्था को पूंजीवाद, भौतिकवाद तथा मनोकामनाओं की ग़लत नींव पर गठित किया, फिर जब यह निर्माण अपनी पराकाष्ठा को पहुंच कर अपने दुष्परिणामों को प्रगट करने लगा, तो उन्होंने उस पर दूसरी मूर्खता यह की कि प्रकट छल-युक्त अर्थ एवं समाज-व्यवस्था और संस्कृति एवं सभ्यता के ढांचे को यथावस्था बाक़ी रहने देकर उसे दुष्परिणामों से बचने का प्रयास किया। यदि वे बुद्धिमान होते तो उन असली ख़राबियों की खोज करते, जिनके कारण जीवन में उनके लिए ये कठिनाइयां पैदा हुई थीं, और उन के सुधार का प्रयत्न करते। परन्तु उन्होंने असली ख़राबियों को समझा ही नहीं और यदि समझा भी तो प्रकट छल-युक्त संस्कृति एवं सामाजिकता उनके लिए इतनी अधिक सुशोभित हो चुकी थी कि उन्होंने उसको किसी शुद्ध जीवन-व्यवस्था से बदलना पसन्द न किया। इस के विपरीत उन्होंने चाहा कि इस सभ्यता एवं संस्कृति और इस अर्थ एवं समाज-व्यवस्था को क़ायम रख कर अपने जीवन की कठिनाइयों को दूसरे तरीक़ों से हल करें। इस खोज और छानबीन में उनको सबसे अधिक आसान तरीक़ा यही दिखाई पड़ा कि अपनी नस्लों को बढ़ने से रोक दें। ताकि उनको आर्थिक साधनों तथा भोग-विलास की सामग्रियों से निर्विघ्न रूप से आनन्द लूटने का मौक़ा मिल जाए और भावी नस्लें उनके साथ हिस्सा बटाने तथा उनके जीवन को अ-लाभप्रद और नीरस ज़िम्मेदारियों से बोझिल करने के लिए पैदा ही न हों।

परिणाम

अब एक दृष्टि इस आंदोलन के उन परिणामों पर भी डाल लीजिए जो पिछले १०० वर्षों के अमली तजुर्बों से प्रकट हुए हैं। एक सदी की मुद्दत एक ऐसे आंदोलन के गुण तथा दोष का अंदाजा लगाने के लिए काफ़ी है, जिस को विभिन्न राष्ट्रों तथा देशों में इतनी अधिकता के साथ प्रसारित किया गया और जिसके परिणामों की बार-बार जांच की जा चुकी हो।

बर्थ कन्ट्रोल को अपनाने वाले देशों में से इंग्लैंड और अमेरिका को एक नमूने के देश की हैसियत से लीजिए, क्योंकि हमारे पास अन्य देशों की अपेक्षा इससे सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करने के अधिक साधन हैं और परिस्थितियों के एतबार से इंग्लैंड, अमेरिका और अन्य पश्चिमी राष्ट्रों में कुछ अधिक अन्तर भी नहीं है।

वर्गों का असंतुलन

इंग्लैंड के रजिस्ट्रार जनरल की रिपोर्टों और नेशनल बर्थ रेट कमीशन की खोजों से मालूम होता है कि बर्थ कन्ट्रोल का चलन सब से अधिक उच्च एवं मध्यम वर्ग में है। अधिकतर अच्छे वेतन प्राप्त करने वाले कर्मचारी, उच्च श्रेणी के शिक्षित व्यापारी, मध्यम वर्ग की हैसियत वाले लोग, धनी-मानी व्यापारी, और मिल मालिक इस आंदोलन को अपनाए हुए हैं।

रहे निम्न वर्ग के श्रमिक तथा काम करने वाले, तो उनमें बर्थ-कन्ट्रोल का रिवाज शून्य के समान है। न तो उनके जीवन-स्तर उच्च हुए हैं, न उनके दिलों में उच्च विचार हैं, न उनमें धनी-मानियों की

शानदार समाजिकता अपनाने का लोभ है, और सब से अधिक य
कि उनके यहां अभी तक वही पुराने तरीक़े का चलन है कि म
कमाए और औरत घर-गृहस्थी संभाले। यही कारण है कि धन क
कमी, जीवन-साधनों की मंहगाई, और मकानों की तंगी के बाद भ
वे बर्थ कन्ट्रोल की आवश्यकता नहीं समझते। उन में जन्म-द
चालीस प्रति हज़ार के लगभग है। इसके विपरीत मध्यम एवं उच्च
वर्गों में जन्म-दर इतना कम हो गया है कि इंग्लैंड का सामूहिक जन्म
दर १९५५ में केवल १५.३ प्रति हज़ार था। शारीरिक परिश्रम
करने वालों के परिवार बड़े-बड़े हैं और नवीनतम आंकड़ों के अनुसा
जिन जोड़ों की शादी १९०० और १९३० के बीच में हुई थी, उनमे
औसतन मज़दूरों के परिवार कम से कम ४० प्रतिशत बड़े हैं।[1]

आबादी का अमेरिकी विशेषज्ञ प्रो० वारन थम्पसन, इंग्लैंड
अमेरिका, जर्मनी, फ़्रांस और स्वीडन की आवादी के वार्गिक विभा
जन का विस्तृत अध्ययन करने के बाद इस नतीजे पर पहुंचा है—

"अगर आवादी का विभाजन शारीरिक परिश्रम करने वाल
और सफ़ेद कालर वाले कर्मचारियों के बीच किया जाए, तो पहल
गिरोह का उपजाऊपन अधिक है। अगर शारीरिक परिश्रम कर
वालों को भी किसानों और शेष मज़दूरों में बांट दिया जाय त
किसानों का उपजाऊपन अधिक है। अ-कृषि श्रमकों में उस मज़दू
का परिवार बड़ा है जो कलात्मक कौशल नहीं रखता और जिस क
काम कठोर और गन्दा है और जिस का जीवन स्तर निम्नतर है—
और जब शिक्षा को मेयार बनाया जाए तो लगता है कि कम पढ़े-लिख
लोगों के परिवार बड़े हैं और उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों के छोटे औ
संक्षिप्त हैं।[2]

1. Britain: An Official Hand book 1954 P. 8.
2. Thompson, Warren S. Population Problems, New Yor

इसका फल यह है कि बर्थ कन्ट्रोल पर अमल करने वाले समाज में शारीरिक परिश्रम करने वाले वर्ग बढ़ रहे हैं और उन लोगों की तायदाद दिन प्रतिदिन घटती चली जा रही है, जो मानसिक एवं बौद्धिक दृष्टि से उच्च स्थान रखते हैं, जिनमें कार्यशीलता तथा नेतृत्व की योग्यता है। यह वस्तु आखिरकार एक राष्ट्र के पतन का कारण बनती है, इसलिए कि इसका अनिवार्य परिणाम मनुष्यों का अकाल है और मनुष्यों के अकाल के बाद कोई राष्ट्र विश्व में श्रेष्ठ नहीं रह सकता।

योग्य व सक्षम वर्गों की कमी, सामान्य बौद्धिक व मानसिक स्तर की गिरावट और मनुष्यों का अभाव, ये ऐसे खतरे हैं जिनके बर्थ-कंट्रोल पर अमल करने वाले देश आज शिकार हो चुके हैं और इस वस्तुस्थिति से उनके विचारक व चिन्तक अत्यधिक परेशान हैं। अल्डुस हक्सले अपनी नवीनतम पुस्तक (Brave New World Revisited) में कहता है कि हमारे कर्मों के आधार पर अब यह बात बिल्कुल निश्चित होती जा रही है कि हमारी तायदाद में जो वृद्धि हो, वह जैविक दृष्टि से घटिया स्तर की हो।[1] भविष्य के बारे में यही लेखक कहता है—

'नयी दवाओं और इलाज के श्रेष्ठ तरीक़ों के बावजूद (और कुछ हालात में तो इन्हीं के कारण) आम आबादी के सामान्य स्वास्थ्य-स्तर में न केवल यह कि कोई वृद्धि नहीं होगी, बल्कि कमी ही होगी और स्वास्थ्य का स्तर गिरने के साथ सामान्य मानसिक स्तर की गिरावट भी पैदा होगी।'[२]

हक्सले जीव विज्ञान के एक विशेषज्ञ डाक्टर शील्डन की यह

1953, P. P. 194-195

1. Huxley Aldous, Brave New World Revisited 1959, P. 57

१. वही, पृष्ठ ३८

राय भी नक़ल करता है ।

"वर्तमान स्थिति में श्रेष्ठ वर्ग के मुक़ावले में निचला और कमज़ोर वर्ग अधिक तेज़ी के साथ बढ़ रहा है । इंसानी नस्ल बढ़ाने के सिलसिले में यह ग़लती और टेढ़ एक जैविक़ और मौलिक तथ्य है ।"

शील्डन यह भी बताता है कि अमेरिका में ओषधीय तजुर्बों से यह सत्य प्रकट हुआ है कि सन् १६१६ के मुक़ाबले में सामान्य बौद्धिकता का स्तर अब घटिया है ।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध चिन्तक व विचारक बर्ट्रेन्ड रसेल ने भी इस स्थिति पर बड़ी चिन्ता व्यक्त की है और यह एक दिलचस्प मामला है कि रसेल और हक्सले दोनों बर्थ कंट्रोल के—मुख्य रूप से पूर्वी देशों में उस के प्रचार के—बड़े ज़ोरदार हामी हैं । रसेल लिखता है—

फ्रांस में आज आबादी व्यावहारिक रूप से बिल्कुल ठहरी हुई है (अर्थात् एक हालत पर क़ायम है) और इंग्लैंड में बड़ी तेज़ी के साथ उस हालत सर आ रही है जिस का खुला अर्थ यह है कि कुछ वर्गों में कमी आ रही है और कुछ दूसरे वर्ग बढ़ रहे हैं और जब तक कोई मौलिक परिवर्तन न हो जाये, होगा यह कि जो वर्ग कम हो रहे हैं, वे व्यावहारिक रूप से लुप्त हो जायेंगे और आबादी केवल उन वर्गों पर सम्मिलित होगी जो बढ़ रहे हैं । जो वर्ग कम हो रहे हैं, वे कुशल कारीगरों और मध्यम वर्ग के लोगों पर सम्मिलित हैं और जो बढ़ रहे हैं, वे ग़रीब, कुंठाग्रस्त, बदमस्त और अल्पबुद्धि के लोग हैं । जो वर्ग दिन प्रति दिन कम हो रहे हैं, उनमें सब से अधिक तीव्र गति से वही लुप्त हो रहे हैं जो मानसिक दृष्टि से श्रेष्ठ हैं । इस का फल यह है कि हमारी हर नस्ल में से उस का सर्वश्रेष्ठ तत्त्व निकल जाता है और कृत्रिम रूप से बांझ कर दिया जाता है, कम से कम उन लोगों

के मुक़ाबले में जो बाक़ी रह जाते हैं।[1]

रसेल इसके ख़तरनाक प्रभावों को स्पष्ट करने के बाद आगे लिखता है कि—

'अगर इंग्लैंड की आबादी में से बच्चों का एक आम नमूना (Sample)[2] लिया जाए और उन की माता-पिता के हालात का अध्ययन किया जाए तो यह मालूम होगा कि विवेक, बुद्धि, शक्ति और उदारता में वे देश की आम आबादी के स्तर से निम्न ही होंगे और अकर्मण्यता, मन्द बुद्धि, मूर्खता और अंधविश्वास में उस से बढ़-चढ़ कर। हमें इस से यह भी मालूम होगा कि जो समझदार, कर्मठ, बुद्धिमान, और उदारप्रिय हैं, वे अपनी तायदाद के बराबर तायदाद को जन्म नहीं दे सकते, अर्थात् दूसरे शब्दों में आमतौर पर उन के यहां औसतन दो बच्चे भी ज़िंदा नहीं रहते। इस के मुक़ाबले में वे जो इसके प्रतिकूल गुण रखते हैं और उपर्युक्त श्रेष्ठ गुणों के विपरीत मात्र हैं, उनके यहां दो से ज्यादा बच्चे होते हैं और वे नस्ल बढ़ा कर अपनी तायदाद बराबर बढ़ा रहे हैं।[3]

फिर इस परिवर्तन के प्रभावों का सर्वेक्षण करते हुए रसेल कहता है कि आबादी के श्रेष्ठ तत्त्वों में जो असाधारण कमी होती जा रही है, उसका फल यह है कि—

१. अंग्रेज, फ्रांसीसी और जर्मन व्यक्तियों की संख्या बरबर कम हो रही है।

---

1. Russel Bertrand, Principles Of Social Reconstruction 1951, P, 124.
२. यह statistics का एक पारिभाषिक शब्द है। इस का अर्थ यह है कि अध्ययन के लिए एक नुमाइन्दा गिरोह चुन लिया जाए जिस में समूह के आवश्यक गुण मौजूद हों।
३. वही पृष्ठ १२४-१२५

२. इस कमी के कारण उन जातियों पर अल्प सभ्य जातियों की श्रेष्ठता स्थापित हो रही है और उन की उज्चतम परम्पराएं लुप्त होती जा रही हैं।

३. स्वयं उन जातियों में भी वृद्धि निचले वर्ग में हो रही है और जिन तत्त्वों की संख्या बढ़ रही है, वे दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता से कोरे हैं।

इसी सिलसिले में बरट्रेंड रसेल वर्तमान स्थितियों का मुक़ाबला रूमी सभ्यता से करता है और कहता है कि उसके पतन में भी कुछ ऐसे ही तत्त्वों का हाथ था।

'दूसरी, तीसरी और चौथी सदी ई० में रूमी साम्राज्य के भीतर कार्य-शक्ति और बुद्धिमत्ता का जो पतन हुआ था, यह सदैव ही न समझ में आने वाली चीज रही है, लेकिन यह राय बना लेने के लिए दृढ़ आधार मौजूद हैं कि उस जमाने में भी वही कुछ हुआ था जो आज स्वयं हमारी सभ्यता में हो रहा है अर्थात रूमियों की हर पीढ़ी में इनके सर्वोत्तम तत्त्व कपनी समान संख्या को जन्म देने में असफल होते रहे और आबादी की बढ़ोत्तरी उन तत्त्वों द्वारा होती रही जिन की कार्य-शक्ति कम थी।"[1]

इन तमाम वार्त्ताओं के बाद रसेल जैसा विचारक भी, जो बर्थ कंट्रोल का हामी है, इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि—

"इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि अगर हमारी वर्तमान आर्थिक व्यवस्था और हमारे नैतिक मूल्य बदलते नहीं, तो आगामी दो-तीन पीढ़ियों में तमाम सभ्य देशों की आबादी के चरित्र में सबसे खराब परिवर्तन बड़ी तेजी के साथ होगा और सभ्यतम लोगों की

---

१. यह Statistics का एक पारिभाषिक शब्द है। इसका अर्थ यह है कि अध्ययन के लिए एक नुमाइन्दा गिरोह चुन लिया जाए जिसमें समूह के आवश्यक गुण मौजूद हों।

तायदाद में प्रभावपूर्ण कमी हो जाएगी।...अगर हम इस नतीजे से बचना चाहते हैं तो हम को जन्म-दर में अपने प्रचलित मनहूस चयनत्त्व[१] (Selectiveness) को किसी न किसी तरह समाप्त करना होगा।

इस तरह बर्थ कंट्रोल के कारण एक ओर तो देश का वर्गीय सन्तुलन बिगड़ जाता है और कार्यकारी तत्त्व धीरे-धीरे समाप्त होने लगता है, दूसरी ओर इस का फल यह भी होता है कि आबादी में बच्चों और बूढ़ों का अनुपात बिगड़ जाता है और उस के आर्थिक व सांस्कृतिक प्रभाव बड़े दूरगामी और बड़े दुखद होते हैं। बच्चों की संख्या और कुल आबादी में उन का अनुपात कम और बूढ़ों की संख्या और उन का अनुपात अधिक होते चले जाने से राष्ट्र में नया खून अपने स्वाभाविक रफ़्तार से नहीं आता। बच्चों की कमी की वजह से मात्र उपभोग्य वस्तुओं की मांग ही प्रभावित नहीं होती, बल्कि पूरे राष्ट्र में कार्य और गति की जगह ठहराव और काहिली राह पाने लगती है। ख़तरा सहने और सिर धड़ की बाज़ी लगा देने की भावना कम होने लगती है और राष्ट्र का बड़ा भाग लकीर का फ़क़ीर होकर रह जाता है। यह चीज धीरे-धीरे एक राष्ट्र को ज्ञान, अर्थ, विज्ञान, और दूसरे क्षेत्रों में उन राष्ट्रों से बहुत पीछे कर देती है जिन में नई नस्ल की बढ़ोतरी स्वाभाविक रफ़्तार से होती रहती है और नव-जवानों की भारी संख्या समूचे राष्ट्र में उमंगों को उच्च और संकल्पों को दृढ़ बनाये रखती है।

पश्चिमी देशों में बर्थ कंट्रोल के कारण जिस वेग से बच्चों और नव-जवानों का अनुपात बराबर कम हो रहा है और बूढ़ों का अनुपात बढ़ रहा है, उस के प्राकृतिक प्रभाव प्रकट होने शुरू हो गए हैं। जिन्हें

---

१. इस से तात्पर्य है उच्च वर्ग को घटने के लिए और निम्न वर्ग को बढ़ने के लिए मुख्य कर लेना।

आज हर विवेकी व्यक्ति विवेक की आंखों से देख सकता है । पिछले ७० साल में जो रुझान सामने आया है, वह अगले पृष्ठ में दी गयी तालिका से स्पष्ट है।

आबादी में उम्रों का अनुपात

देश	उम्र	१० साल से कम उम्र के बच्चे	१० साल से १६ साल	५० साल से ६४ साल	६४ साल से अधिक
इग्लैंड	१८८०	२५.७%	२०.६%	६.८%	४.६%
और वेल्ज	१९५०	१५.५%	१२.४%	१६.८%	१०.९%
जर्मनी	१८८०	२५.१%	१९.७%	८.१%	७.६%
	१९५०[1]	१४.५%	१६.३%	१६.४[2]%	६.३%
फ्रान्स	१८८१	१८.३%	१७.१%	१४.५%	८%
	१९४६	१४.१%	१५.७%	१६.५%	११%
अमेरिका	१८८०	२६.७%	२१.४%	८.४%	३.४%
	१९५०	१६.५%	१४.४%	१४.३%	८.१%

(थोमेसन, 'आबादी की समस्या' पृ० ९५ के सौजन्य से)

---

१. ये आंकड़े पश्चिमी जर्मनी के बारे में हैं, पूर्वी जर्मनी इसमें शामिल नहीं।

२. यहां अनुपात में अधिक कमी शायद इस लिए नहीं है कि यह नस्ल हिटलर की रीति के तहत विकसित हुयी थी और हिटलर बर्थ कन्ट्रोल का कट्टर विरोधी था।

इन तमाम देशों में बिना किसी अपवाद के आबादी के आंतरिक गठन में यही परिवर्तन हो रहा है। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र संघ ने आबादी के बुढ़ापे के इस रुझान पर एक खोजपूर्ण रिपोर्ट प्रकाशित की है, जिस में इस बात पर चिन्ता व्यक्त की गई है। इस रिपोर्ट के जुटाए हुए आंकड़ों[1] से मालूम होता है कि आबादी में ६५ साल या उससे ज्यादा उम्र के लोगों के अनुपात में सन् १९०० ई० और सन् १९५० ई० के बीच असाधारण वृद्धि हुई है। अगर १९०० को १०० मान लिया जाए, तो १९५० में विभिन्न देशों में अनुपात का इंडेक्स यह था—

न्यूजीलैंड	२३६
ब्रिटेन	२३१
आस्ट्रिया	२१२
अमेरिका	२००
जर्मनी	१९०
बेल्जियम	१७३
फ्रांस	१४४

रिपोर्ट में यह बात भी बताई गई है कि अनुपात को परिवर्तित करने में बड़ा दखल उपजाऊपन और जन्म-दर की तब्दीली का है। इस सिलसिले में मृत्यु-दर की तब्दीली इतनी प्रभावकारी नहीं रही जितनी जन्म-दर की तब्दीली।[2]

पश्चिमी देशों में बूढ़ों और बच्चों का अनुपात बिगाड़ने पर प्रोफेसर थाम्पसन बड़ी चिन्ता व्यक्त करता है। वह कहता है—

---

1. The aging of population its economic and social implications, United Nation Department of Economics and Social affairs, New yark 1956.

२. वही, पृष्ठ २२

'यह वास्तविकता (अर्थात् बूढ़ों की तायदाद का बढ़ना) बहुत अर्थपूर्ण और प्रभावपूर्ण है, क्योंकि बूढ़े की अधिकता का अर्थ यह है कि मृत्यु-दर बढ़ेगा और जन्म-दर में कमी होगी और बूढ़े लोग नव-जवानों के मुक़ाबले में आर्थिक दृष्टि से कम लाभप्रद और कम उपयोगी होते हैं।"[१]

अर्थ व्यवस्था के स्वस्थ आधारों पर उन्नति करने के लिए ज़रूरी है कि बूढ़ों और ज़वानों में एक विशेष अनुपात बाक़ी रहे, ताकि संस्कृति की गाड़ी खींचने वाले मजबूत हाथ कभी कमज़ोर न पड़ने पायें। प्रकृति ने इस की पूरी-पूरी व्यवस्था की है, पर वर्थ कंट्रोल के कारण प्रकृति के कार्य में जो हस्तक्षेप किया जाता है, उस के कारण यह प्राकृतिक संतुलन बिगड़ जाता है। बूढ़ों की तायदाद तो बराबर बढ़ती रहती है, लेकिन बच्चों में उचित रफ़्तार से वृद्धि नहीं हो सकती और अनुपात बराबर विषम होता जाता है। इस का अंतिम फल कार्यकर्त्ताओं का अभाव, राष्ट्रीय शक्ति का ह्रास और आर्थिक शक्ति का अभाव है, फिर जब नवजवानों के अनुपात में कमी के साथ-साथ कार्यकारी तत्त्वों की कमी और व्यक्तियों का अकाल भी शामिल हो जाता है, तो अंततः एक राष्ट्र शासक से शासित बन जाता है और उच्चता व श्रेष्ठता के पद से गिरकर नीचता व निम्नता के स्थान पर पहुंच जाता है। सच तो यह है कि प्रकृति अपने द्रोहियों को कम ही माफ़ करती है। स्वयं उस के द्रोह के भीतर ही ऐसे तत्त्व मौजूद होते हैं जो अंततः इस अपराध की सजा का काम अंजाम दे डालते हैं और दूसरों के लिए शिक्षा सामग्री जुटा देते हैं।

२. ज़िना और गन्दे रोगों की अधिकता

वर्थ कंट्रोल से ज़िना और गंदे रोगों का बड़ा पोषण हुआ है।

---

१. प्रोफेसर थाम्पसन 'आबादी की समस्यायें', पृष्ठ ६५

औरतों कोअल्लाह के डर के अलावादो चीज़ें चरित्र के उच्च स्तर पर क़ायम रखती हैं। एक उन की स्वाभाविक लज्जा, दूसरे यह भय कि हरामी बच्चे का जन्म समाज में उन को तिरस्कृत कर देगा। उन में से पहली रोक तो आधुनिक सभ्यता ने बड़ी हद तक दूर कर दी। नाच-रंग, सिनेमा, नाइट क्लब तथा मद्यपान की सभाओं में पुरुषों के साथ स्वच्छन्दता-पूर्वक मेल-मिलाप के बाद लज्जा कहां बाक़ी रह सकती है? रहा हरामी संतान के जन्म का भय, तो बर्थ कंट्रोल के आम चलन ने उसे भी बाक़ी न रखा। अब औरतों और मर्दों को ज़िना का आम लाइसेंस मिल गया है और ज़िना की अधिकता के साथ गंदे रोगों का पाया जाना आवश्यक है।

इंग्लैंड का हाल यह है कि हर साल वहां ८० हज़ार से भी अधिक नाजायज़ बच्चे पैदा होते हैं। डेवसेज़ान कांफ्रेंस की रिपोर्ट के अनुसार १९४६ में हर आठ में से एक बच्चा नाजायज़ था और हर वर्ष लगभग एक लाख औरतें विवाह क्षेत्र के बाहर गर्भवती होती थीं। डाक्टर आज़बाल्ड श्वारज़ लिखता है।

"हर साल औसतन ८० हज़ार औरतें नाजायज़ औलाद को जन्म देती हैं (तमाम प्रसवों का १/३) सावधानी के साथ लगाए गए अनुमान के अनुसार हर दस में से एक औरत विवाह क्षेत्र से बाहर संबंध स्थापित कर लेती है। इस सूची में जो औरतें शामिल हैं, उनमें से ४० प्रतिशत की उम्र नाजायज़ बच्चा पैदा करते समय २० साल से कम, ३० प्रतिशत की २० साल और ३० प्रतिशत की २१ साल थी। ये आंकड़े स्वत: बड़े चिन्ताजनक हैं, लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि ये केवल उन मामलों के आंकड़े हैं, जिन में कुछ न कुछ खराबी पैदा हो गई थी (अर्थात् बर्थ कंट्रोल के तमाम उपायों के बावजूद जिन में गर्भ ठहरने की घटना घटी) इस का अर्थ यह है कि जो कुछ वास्तव में हो रहा है, ये आंकड़े उस के केवल एक छोटे से

भाग ही को प्रस्तुत करते हैं।"[१]

डा० श्वारज़ के प्रस्तुत आंकड़ों से मालूम होता है कि हर दस में से एक औरत पापिनी है, पर नवीनतम जानकारियां इससे भी अधिक घिनौना चित्र प्रस्तुत करती हैं। चेसर रिपोर्ट जो १९५६ ई० में प्रकाशित हुई है और जो ६ हजार औरतों से प्राप्त जानकारियों के आधार पर तैयार की गई है, यह दावा करती है कि हर तीन में से एक औरत विवाह से पहले ही अपना सतीत्त्व खो चुकी होती है।[२]

इस की पुष्टि डा० चेसर अपनी ताजा पुस्तक "क्या सतीत्त्व बीते दिनों की बात है?" में भी करता है।[३]

अमेरिका के बारे में किंज़े रिपोर्ट (Kinsey Report) से मालूम होता है कि वहां ज़िना और दूसरे यौन-अपराधों का इतना आधिक्य है कि समाज की बुनियादें हिल गई हैं। मर्दों में से ४७ प्रतिशत और औरतों से में ५० प्रतिशत निस्संकोच भाव से नाजायज़ तालुक़ात क़ायम किए हुए हैं।[४]

प्रसिद्ध इतिहासकार और समाज शास्त्र के विशेषज्ञ डाक्टर सोरोकिन निम्न आंकड़े प्रस्तुत करता है और इस स्थिति पर खून के आंसू बहाता है—

---

1. Schwarz, Oswald, The Psychology of sex, Pelican Book, 1951. P. 88
2. Chesser, Fr. Eustaco The Sexual, Morital and Family Relationship of the English women 1956.
3. Chesser, Is Chastity out moded? London, 1960, P. 75
4. Sexual Behavior in Human Male, P. 552

विवाह से पहले यौन सम्बन्ध

औरतें	:	७ से ५० प्रतिशत
मर्द	:	२७ से ८७ प्रतिशत

विवाह के बाद नाजायज ताल्लुक़ात

औरतें	:	५ से २६ प्रतिशत
मर्द	:	१० से ४५ प्रतिशत

नाजायज औलाद

१६२७	:	हर एक हज़ार में २८
१६४७	:	हर एक हज़ार में ३८.७

गर्भपात

वार्षिक ३३,३०० से १०,००,००० तक

'और इस का सूचक यह तथ्य है कि गर्भ निरोधक दवाइयों और साधनों (Contraceptives) के क्रय-विक्रय में वृद्धि आज आकाश को छू रही है।'

इस के बाद सोरोकिन कहता है—

"शायद इस की ज़रूरत नहीं कि हम यह भी बतायें कि इस अबाध कामुकता के क्या व्यापक प्रभाव व परिणाम, व्यक्ति, समाज और पूरे राष्ट्र पर पड़ रहे हैं, भले ही उसका नाम 'यौन उच्छृंखलता' रख दो या 'यौन अराजकता।' यह वास्तविकता तो नहीं बदल सकती कि इस रवैये के नतीजे उन तमाम क्रांतियों के नतीजों से भी अधिक दूरगामी हैं जिन का अवलोकन आज तक इतिहास ने नहीं किया है।"[1]

---

1. Sorok in Pitirim R. The American Sex Revolution, Boston 1956, P. P. 13-14.

किंज़े के अंदाज़े के मुताबिक़ अमेरिका में नाजायज़ बच्चों का अनुपात पांच में एक है। बिन ब्याही माताओं से होने वाली औलाद का अनुपात ४ प्रतिशत है। इस के अलावा गर्भपात के बारे में कुछ विश्वसनीय अंदाज़े ये हैं कि हर चार में से एक गर्भ गिरा दिया जाता है, बल्कि सानफ्रांसिस्को के बारे में तो टाइम मेग्ज़ीन के अनुसार १९४५ में १६,४०० प्रसवों के मुक़ाबले में १८००० गर्भ-पात हुए।[1]

ऐसे ही अगर अपराध—मुख्य रूप से यौन-अपराध—का अध्ययन किया जाए तो मालूम होता है कि वे दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। इंग्लैंड में पुलिस की नोटिस में पुलिस के क़ाबिले दस्तअंदाज़ी जो अपराध आए हैं, उन में निम्नलिखित रफ़्तार से वृद्धि हो रही है।[2]

१९३८	२८३,०००
१९५५	४३८,०००

इसी ज़माने में यौन अपराधों का अनुपात कुल अपराध में १.७ प्रतिशत से बढ़कर ६.३ प्रतिशत हो गया है।[3] अमेरिका के बारे में फेडेरल ब्योरो आफ इंवेस्टीगेशन (F. B. I.) के जुटाए हुए आंकड़ों से जान पड़ता है कि १९३७-३९ के मुक़ाबले में १९५५ में ज़िनाकारी ६० प्रतिशत बढ़ गई है। दूसरे अपराधों में भी ५ प्रतिशत से ८० प्रतिशत तक वृद्धि हुई है[4]। अगर तमाम और बड़े अपराधों को लिया जाए तो १९५८ में २३ लाख से अधिक घटनायें पुलिस की

१. Social Problems P. P. 418-19.

2. A Survey of social Conditions in England and Wales, Oxford 1958, P. 266.

3. वही पृष्ठ २७०, Oxford, 1958, P. 229.

4. Social Problems, 4. 386.

नोटिस में आई, जबकि १९४० में यह तायदाद सिर्फ़ १५ लाख थी।[1] नवजवानों का आवारापन भी बराबर बढ़ रहा है। अमेरिका के १४७३ शहरों में १९५७ में जो २० लाख ९८ हज़ार व्यक्ति विभिन्न अपराधों के सिलसिले में गिरफ़्तार हुए, उन में से २ लाख ५३ हज़ार १८ साल से कम उम्र के थे।[2]

यौन-उच्छृंखलता से पैदा होने वाले रोग भी बराबर प्रगति पर हैं और इलाज के अच्छे से अच्छे साधनों के एकत्र होने के बावजूद इन रोगों का प्रभाव राष्ट्रीय स्वास्थ्य पर बड़ा विनष्टकारी है। अगर सिर्फ़ आतशक (Syphilis) ही को लिया जाए तो अमेरिका के 'सर्जन जनरल आफ़ पब्लिक हेल्थ सर्विस' मिस्टर थामस पेरन के अनुसार यह दुष्ट रोग सन्तति-निरोध के मुक़ाबले में सौ गुना अधिक विनाश का कारण है और अमेरिका में इस समय कैन्सर, टी. बी. और नमूनिया के बराबर घातक है। हर चार में से एक मौत प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आतशक ही के कारण हुई है। प्रोफ़ेसर पाल लैंड्स डाक्टर पीरान की राय नक़ल करने के साथ ही हम को बताते हैं—

'१९४७ के बाद नई दवाओं के बनाने और इस्तेमाल करने की वजह से गंदे रोगों में कमी होती जा रही थी, लेकिन १९५५ से फिर उल्टी धारा बह निकली है। अमेरिका के तमाम ही बड़े शहरों में आतशक और सूज़ाक (Gonorrher) के रोग तेज़ी से बढ़ रहे हैं और इन रोगों की सब से ज़्यादा बढ़ोतरी उन नवजवानों में हो रही है, जिन की उम्र २० साल से कम है, बल्कि सच तो यह है कि रोगों की आधी तायदाद नवजवानों के इसी गिरोह में पाई जाती है।[3]

---

1. Blaich and Baumgartner, The challenge of democracy, New York 4th ed. 4. 510
2. वही पृष्ठ ५११
3. Social Problems. P. 313.

अगस्त १९६१ के रीडर्स डाइजेस्ट में जार्ज केन्ट और विल्फ़र्ड ग्रेटोरेक्स का एक लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें वे बताते हैं कि ब्रिटेन के बड़े नगरों जैसे लंदन, बर्मिन्घम, लिवरपूल आदि में गंदे रोग नए सिरे से बड़े ज़ोर पर फैल रहे हैं। नई कीटाणुमारक दवाइयों के कारण कुछ मुद्दत तक इन रोगों को दबाने में जो सफलता हुई थी वह विफलता से बदल चुकी है। सन् १९५६ ई० से १९५९ ई० तक चार वर्ष की मुद्दत में विभिन्न प्रकार के गंदे रोगों में २० प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है। १९५९ में सिर्फ़ सूज़ाक के नए रोगी ३१ हज़ार थे अर्थात् १९५५ ई० के मुक़ाबले में ७० प्रतिशत वृद्धि। और ये आंकड़े केवल उन रोगियों के हैं जो गंदे रोगों का इलाज करने वाले प्रमुख केन्द्रों में आये हैं। जो रोगी सामान्य प्रैक्टिस करने वाले डाक्टरों और प्राइवेट विशेषज्ञों के पास जाते हैं या जो सिरे से इलाज के लिए जाते ही नहीं, वे इस तायदाद में शामिल नहीं हैं। फिर वे बताते हैं कि गंदे रोगों की यह वबा बड़े पैमाने पर समूचे राष्ट्र में फैल रही है और उस का सब से ज्यादा दुखद पहलू यह है कि २० वर्ष से कम उम्र के नवजवान लड़कों और लड़कियों में उस का ज़ोर बढ़ रहा है। हाल ही में कुछ डाक्टरों ने १९४८ से अब तक के आंकड़ों का मुक़ाबला कर के यह रिपोर्ट दी है कि १८ से १९ साल तक की उम्र के नवजवानों में एक वर्ष के भीतर लड़कों के सूज़ाक के तायदाद ३६ प्रतिशत और लड़कियों की सूज़ाक की तायदाद २८ प्रतिशत बढ़ गई। ब्रिटेन की स्वास्थ्य-शिक्षा की केन्द्रीय समिति के डायरेक्टर ए० जे० डेलज़ल वार्ड का अंदाज़ा है कि २० साल से कम उम्र के लोगों में गंदे रोगों का यह आधिक्य इससे पहले कभी न हुआ था। लंदन के केवल एक अस्पताल में एक ही समय में इस उम्र के ४९० रोगी मौजूद थे। लिवरपूल में गंदे रोगों के रोगियों की आधी संख्या १४ से २१ साल तक की उम्र की थी।

कमोबेश यही स्थिति दूसरे देशों की भी है। वर्ल्ड हेल्थ

आर्गनाइज़ेशन के एक हाल के सम्मेलन में १६ देशों की ओर से यह रिपोर्ट पेश की गई थी कि उन के यहां आतशक और सूज़ाक एक भयानक महामारी की तरह फैल रहे हैं। इटली में १९५८ और १९५९ के बीच आतशक के रोगी तीन गुना अधिक हो गए और डेन्मार्क में दो गुने।

ये स्थितियां साफ़ बता रही हैं कि बर्थ कन्ट्रोल ने वर्तमान संसार के सामूहिक जीवन में पाप का जो द्वार खोला है, उस से ज़िना, यौन-अपराध और गंदे रोगों के दैत्य दनदनाते हुए प्रवेश कर रहे हैं और उन्होंने पूरे समाज को अपने विनाशकारी कृत्यों की लपेट में ले लिया है।

३. तलाक़ का बाहुल्य

बर्थ कन्ट्रोल भी उन कारणों में से एक है जिन्होंने पश्चिमी देशों में दाम्पत्य संबंधों के बंधनों को कमज़ोर कर दिया है, औरत और मर्द के आपसी दाम्पत्य सम्बंध को दृढ़ करने में औलाद का बहुत बड़ा भाग होता है। जब औलाद न होगी तो दम्पति के लिए एक दूसरे को छोड़ देना बहुत आसान होगा। यही कारण है कि यूरोप में तलाक़ का चलन तेज़ी से फैल रहा है और तलाक़ हासिल करने वालों में बड़ी संख्या उन जोड़ों की पाई जाती है जो बे-औलाद हैं। कुछ दिनों पहले लंदन की एक तलाक़ की अदालत में डेढ़ मिनट के भीतर ११५ निकाह खत्म कराये गए और बिना अपवाद के वे सब के सब ऐसे जोड़े थे जिन के यहां औलाद न हुई थी।

सामान्यत: समाज शास्त्रज्ञ यह कह रहे हैं कि तलाक़ की अधिकता में बच्चों के न होने का बहुत बड़ा दखल है, बल्कि इस पर उन में लगभग सहमति पाई जाती है। टाल्कोट पार्सन्ज़ सविस्तार आंकड़े देकर इस मत को व्यक्त करता है कि—

बहुत बड़ी हद तक तलाक़ें विवाह के शुरू के सालों में या

औलाद जोड़ों में होती हैं और हो रही हैं, भले ही पति-पत्नी पहले भी तलाक़ पाए हुए हों। जब एक बार लोगों के औलाद होने लगती है तो फिर उनके एक बने रहने की सम्भावनाएं बहुत बढ़ जाती हैं।[1]

इसी तरह बारनेस और रेवडी अपनी जांच का निचोड़ इस तरह बयान करते हैं—

'तलाक़ हासिल करने वाले जोड़ों में से दो तिहाई बे-औलाद हैं और १/५ के सिर्फ़ एक बच्चा है। सच तो यह है कि तलाक़ और बे-औलद शादी में एक खुला हुआ और स्पष्ट सम्बंध है।'[2]

प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्रिका 'साइक्लोजिस्ट' के जून ६१ के अंक म इस बात को स्वीकार किया गया है कि—

'एक सामान्य विवाहित जोड़े को औलाद वाला होना चाहिए जो लोग औलाद को निलम्बित करते हैं, बाद में उन्हें इस पर लज्जित होना पड़ता है। बे.औलाद शादियां नित्य नई समस्याओं को जन्म देती हैं और दम्पति एक दूसरे से संतुष्ट ही हों, लेकिन समय बीतने के साथ-साथ उनमें एक प्रकार की कटुता पैदा हो जाती है मानो वे अपनी यात्रा के अन्त पर पहुंच गये हैं। समाज शास्त्रज्ञ हमें बराबर सचेत कर रहे हैं कि तलाक़-दर उन घरों में सबसे ज्यादा है जो औलाद से महरूम हैं। इस का कारण बिल्कुल स्पष्ट है। ऐसी स्थिति में मां और बाप बनने की मौलिक और स्वाभाविक इच्छा पूरी नहीं होती। यह चीज़ औरत के मामले में मुख्य रूप से बड़ी महत्वपूर्ण है। बर्थ कंट्रोल में उस के मातृ-स्वभाव का गला घोंट दिया

---

1. Parsons Talcott, The Satbility of the American Famil System, Bell and Vogel (Ed), A Modern introductic to the family London, 1961, P. 94.
2. Barnes H. F. and Bendi, O. M. The American way (life, New York, 1951, P. 652.

जाता है, जिसमें उस की स्नायुविक व्यवस्था नष्ट-विनष्ट हो सकती है, उस का स्वास्थ्य तबाह हो सकता है और जीवन में उसकी तमाम रुचियां और प्रसन्नताएं मिट्टी में मिल सकती हैं।"[1]

डा० फ्रेडमैन और उन के साथियों की खोज भी इसी परिणाम की सूचना देती है। वे अपनी और दूसरे लोगों की खोज के आधार पर लिखते हैं—

'तलाक़ की दर सब से ज्यादा उन परिवारों में है, जिन में विवाह का नतीजा औलाद से महरूमी और बच्चों की तायदाद की कमी है।"[2]

बर्थ कंट्रोल को अपनाने वाले देशों में जिस वेग से तलाक़ में वृद्धि हो रही है वह असाधारण महत्व का पोषक है। इंग्लैंड के बारे में डाक्टर आज़वाल्ड श्वारज़ लिखता है—

'पिछली अर्द्ध शताब्दी में तलाक़ों की बाढ़ जिस वेग से आ रही है, उसमें वबा की-सी तेज़ी और विषैलापन पाया जाता है। १९१४ में इस देश में ८५६ तलाक़ें हुई थीं। १९२१ में उन की संख्या ३५२२ हो गई। १९२८ में ४ हजार, १९४६ में यह संख्या बढ़ कर ३५,८७४ तक पहुंच गई। क्या यह खतरे की घंटी नहीं है जो इस बात की ख़बर देती है कि हमारी सभ्यता नैतिक विकास के चरम बिन्दु पर से गुज़र चुकी है।'[3]

अगर इंग्लैंड की पारिवारिक अदालत के जुटाए हुए आंकड़ों का अध्ययन किया जाये तो मालूम होता है कि तलाक़ की डिग्रियों की रफ़्तार यह थी—

---

१. एलेक्जेन्डर जेम्स एन०, दी साइक्लोजिस्ट मैग्जीन, लन्दन, जून १९६१ पृ० ५
2. The Philosophy of Sex P. 243
३. श्वारज़—'दी फ़िलासफ़ी आव सेक्स' पृ० २४३

१९३६ ई०	४०५७
१९३९ ई०	७९५५
१९४७ ई०	६७५४

इसके बाद तलाक़ की रफ़्तार में कुछ कमी हुई जो १९५१ तक जारी रही। १९५२ में फिर वृद्धि हुई और उस के बाद से उतार-चढ़ाव का सिलसिला बराबर जारी है।

अमेरिका का हाल यह है कि १८९० ई० में अगर दस दम्पतियों का सम्बंध-विच्छेद मौत से होता था, तो सिर्फ़ एक का तलाक़ से। लेकिन १९४९ में यह अनुपात १० : १ से कम होकर १ : १.५८ रह गया है। शादी और तलाक़ का अनुपात भी बराबर बिगड़ रहा है, जिसका अंदाज़ा निम्न आंकड़ों से हो सकता है :

	तलाक़	निकाह
१८७० ई०	१	३३.७
१९१५ ई०	१	१०.१२
१९४० ई०	१	६
१९४२ ई०	१	५
१९४४ ई०	१	४
१९४५ ई०	१	३
१९५० ई०	१	४.३
१९५८ ई०	१	३.७

इस का अर्थ यह है कि १८७० ई० में अगर लगभग ३४ विवाह होते थे, तो उस के मुक़ाबले में एक तलाक़ होती थी मगर अब हर चार विवाह पर एक तलाक़ होती है। १८९० ई० में एक हज़ार औरतों में से सिर्फ़ ३ तलाक़ शुदा होती थीं, पर १९४६ ई० उनमें की संख्या १७.८ तक पहुंच चुकी थी। इस से मालूम होता है कि तलाक़शुदा औरतों की संख्या में लगभग ६ गुना वृद्धि हो गई है। इसी कारण प्रोफेसर सोरोकुन कहता है कि विवाह की पावनता को

पहले के मुक़ाबले में आज वार-वार और पहले से कहीं अधिक आघात पहुंच रहा है और घर एक स्थाई विश्राम स्थल होने के बजाय केवल एक गाड़ी ठहराने की जगह बन कर रह गया है। जहां केवल एक रात—और यह भी ज़रूरी नहीं है कि पूरी रात ठहर लिया जाए।

तलाक़ के साथ-साथ पत्नियों को छोड़ जाने (Desertion) का रोग भी बराबर बढ़ता जा रहा है और अमेरिका के मुहावरे में इसे 'ग़रीब आदमी के तलाक़ का तरीक़ा' कहते हैं। इस समय अमेरिका में दस लाख से अधिक परिवार इस स्थिति के शिकार हैं। जन-गणना के अनुसार अमेरिका में दस लाख छियानवे हज़ार 'भागी हुई पत्नियां' और १५ लाख २६ हज़ार 'भागे हुए पति' हैं।[1] सोरोकिन के अंदाज़े के मुताबिक़ कुल विवाहित नारियों का लगभग ४ प्रतिशत इस स्थिति में है और सरकारी खज़ाने से इन परिवारों पर लगभग २५ करोड़ डालर वार्षिक ख़र्च हो रहा है।[2] तलाक़ों, भाग जाने और बेवफ़ाइयों के कारण अमेरिका के चार करोड़ पचास लाख बच्चों में से एक करोड़ बीस लाख (पच्चीस प्रतिशत से कुछ अधिक) बच्चे माता-पिता की स्नेह से वंचित हैं और यही वे बच्चे हैं, जिन के कारण नवजवानों के आवारापन की समस्या अमेरिका की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक बन चुकी है।

८. जन्म-दर में कमी

सब से महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि जितने राष्ट्र इस समय बर्थ कंट्रोल को अपनाये हुये हैं, उन सब के जन्म-दर में भयानक रूप से

---

१. वर्जेल ईगन अर्नेस्ट, अर्बन सोशियालोजी, न्युयार्क १९५५, Sorokin, The American Sex Revolution, P. 9

२. ये आँकड़े सन् १९५३ ई० के सिलसिले के हैं। देखिये सोरोकुन 'अमेरिका की यौन-क्रान्ति' पृष्ठ ९

कमी होती जा रही है। ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि इस आंदोलन का प्रचार सन् १८७६ ई० से शुरू हुआ है। अगले पृष्ठ पर जो तालिका दी जा रही है, उस से आप को मालूम होगा कि उस समय विभिन्न देशों का प्रति हज़ार जन्म-दर क्या था और उस के वाद से किस प्रकार घटता चला गया है।

यह तालिका वर्थ कंट्रोल के परिणामों को खुले रूप से प्रकट कर रही है। इस आंदोलन के आरम्भिक समय से तमाम देशों में, विना अपवाद, जन्म-दर का कम होना और बराबर कम होते चले जाना इस वात की दलील है कि अगर बर्थ कंट्रोल इस का एक मात्र कारण नहीं, तो एक बड़ा कारण अवश्य ही है। स्वयं इंग्लैंड के रजिस्ट्रार जनरल ने स्वीकार किया है कि जन्म-दर के कम होने की ७० प्रतिशत ज़िम्मेदारी बर्थ कंट्रोल के चलन पर है। इंसाइक्लोपेडिया ब्रिटानिका में भी स्वीकार किया गया है कि पश्चिमी देशों के जन्म-दर को घटाने में बर्थ कंट्रोल के कृत्रिम साधनों का हिस्सा सर्वाधिक है।

जन्म-दर

देश	१८७६ ई०	१९०१	१९१३	१९२६	१९३०-३४	१९३५-३९	१९४०-४४	१९५३	१९५४	१९५५	१९५७	१९५८
इंग्लैंड, वेल्ज	३६.३	२८.५	२३.१	१७.८	१५.८	१५.३	१६.०	१५.९	१५.६	१५.५	१६.५	१६.८
फ्रान्स	२६.२	२२.०	१९.०	१८.८	१७.३	१५.१	१६.३	१८.९	१९.९	१८.६	१८.६	१२.२
जर्मनी	४०.९	३५.७	२७.५	२०.७	१६.६	१९.९	—	१५.८	१६.०	१६.०	१७.०	१७.०
इटली	६९.२	३२.६	३१.७	२७.८	२४.५	२३.२	२०.८	१७.७	१८.२	१८.१	१८.१	१७.९
बेल्जियम	३३.०	२९.४	२२.६	१८.९	१७.६	१५.५	१६.८	१६.६	१६.८	१६.८	१६.०	१७.१
डेन्मार्क	३२.६	२९.७	२५.६	२१.०	१७.९	१७.९	२०.३	१७.९	१७.३	१७.३	१७.८	१७.९
हालैंड	३७.१	३२.३	२८.३	२३.८	२१.७	२०.३	२१.८	२१.८	२१.६	२१.४	२१.२	२१.१
स्वीडन	३०.८	२७.०	२३.१	१९.९	१४.४	१४.५	१७.७	१५.४	१४.६	१४.८	१४.५	१४.२
स्विट्जर लैंड	२३.०	२९.०	२३.१	१८.२	१६.७	१५.४	१७.९	१७.०	१७.१	१७.१	१७.१	१७.६

(१९२६ के बाद के आंकड़े यू० एन० डिमोग्रफिक इयर बुक—१९५९ से उद्धृत हैं।

रायल कमीशन आव् पापुलेशन (१९४९) की रिपोर्ट से मालूम होता है कि जिन लोगों के विवाह १९१० से पहले हुए थे उन में से केवल १६ प्रतिशत बर्थ कंट्रोल को अपनाए हुए थे, लेकिन १९४०-४२ के बाद ७४ प्रतिशत विवाहित जोड़े इस तरीक़े पर अमल कर रहे हैं। इसी सिलसिले में रायल कमीशन यह व्याख्या करता है—

'इस देश में और दूसरे देशों में बड़ी ज़ोरदार गवाही ऐसी मौजूद है, जो यह सिद्ध करती है कि जन्म-दर में कमी बर्थ कंट्रोल और परिवार को सोच-समझ कर सीमित करने का फल है। यह इसी का प्रभाव है कि जन्म-दर उससे कहीं कम है जितनी उन तरीक़ों के इस्तेमाल न करने की स्थिति में होती।"[1]

अमेरिका में व्हेल्पटन और किसर के गवेषणात्मक सर्वेक्षण के अनुसार ९१.५ प्रतिशत जोड़े किसी न किसी रूप में बर्थ कंट्रोल के तरीक़ों पर अमल कर रहे हैं।[2] फ्रेडमैन और उन के साथियों की खोजों से मालूम होता है कि सामूहिक रूप से अमेरिका में ७० प्रतिशत से अधिक जोड़े उस तरीक़े पर अमल कर रहे हैं। ये लेखक ब्रिटेन और अमेरिका के हालात का अध्ययन करने के बाद हमें बताते हैं—

'इस बात में हमें तनिक भी संदेह नहीं कि परिवारों के छोटे होने का मूल कारण गर्भ रोकने के ऐच्छिक प्रयास हैं'।[3]

इस से अधिक स्पष्ट रूप से बर्थ कंट्रोल के परिणाम जानने के लिए उन देशों के विवाह-दर और जन्म-दर का मुक़ाबला कीजिए।

---

१. रिपोर्ट आव दी रायल कमीशन आन पापुलेशन, एच० एम० एस० ओ० लन्दन, १९४९ पृ० ३४

२. दी प्लानिंग आव् फर्टिलिटी मिलबैंक मेमोरियय फंड क्वार्टरली (१९४७) पृ० ६६-६७

३. फेमिली प्लानिंग, स्ट्रेलिटी एण्ड पापुलेशन ग्रोथ, न्युयार्क, १९५९ पृ० ५

इंग्लैंड में १८७६ से १६०१ ई० तक विवाह-दर में ३.६ प्रतिशत की कमी हुई, लेकिन जन्म-दर २१.५ कम हो गयी। १६०१ ई० से १६१३ तक विवाह-दर यथापूर्व ही रहा, पर जन्म-दर में १३.५ प्रतिशत कमी हुई। १६१२ से १६२६ के बीच विभिन्न देशों में विवाह दर और जन्म-दर का जो अनुपात पाया गया है, उस का हाल निम्न तालिका से मालूम होगा—

	विवाह-दर	जन्म-दर
फ्रांस	७.६ प्रतिशत वृद्धि	२८.२ प्रतिशत कमी
जर्मनी	६.४ प्रतिशत कमी	४६.४ ,,
इटली	६.८ ,,	२६.१ ,,
हालैंड	२.१० ,,	३५.० ,,
स्वीडन	११.३ ,,	४५.१ ,,
डेन्मार्क	१२.३ ,,	३५.६ ,,
स्विट्ज़रलैंड	१२.६ ,,	४४.८ ,,
इंग्लैंड और वेल्ज़	१३.३ ,,	५१.० ,,
नार्वे	२६.० ,,	३८.० ,,

इसी मार्ग पर अमेरिका भी जा रहा है। वहां १६ वीं शताब्दी के अंत में जन्म-दर ४० प्रति हज़ार था। सन् १६६५ ई० में घटकर केवल १८.७ प्रति हज़ार रह गया और इस समय २३.६ प्रति हज़ार है।[1] इसके मुक़ाबले में जन्म-दर १६०१ ई० में ६.३ प्रति हज़ार था, १६३५ ई० में १०.४ प्रति हज़ार हुआ और १६५६ ई० में ६.४ प्रति हज़ार। इस से साफ़ मालूम होता है कि बर्थ कंट्रोल पर अमल

1. Population and vital Statistics U.N.O. April 1931.

करने वाले देशों में औरत और मर्द के दाम्पत्य सम्बंध दिन प्रति दिन कितने निष्फल होते जा रहे हैं। विवाहों में जितनी कमी हो रही है, उससे ज़्यादा कमी जन्म में हो रही है और कुछ परिस्थितियों में तो विवाहों में वृद्धि होती है, लेकिन जन्म में बराबर कमी होती रहती है। ब्रिटेन की एक हाल की सरकारी दस्तावेज़ में भी इस बात को स्वीकारा गया है कि—

"बीसवीं सदी में विवाह-दर में वृद्धि के बावजूद जन्म-दर में कमी ही हुई है। फिर इस ज़माने में सिर्फ़ विवाह-दर ही नहीं बढ़ा है बल्कि विवाह की उम्र में भी कमी हुई है।"[1]

जन्म-दर ही में कमी की एक सूचक परिवारों के औसत व्यक्तियों की कमी है। पश्चिमी देशों में परिवार का साइज़ बराबर छोटा होता जा रहा है और अब बड़ी तायदाद उन परिवारों की है जिन में कोई औलाद नहीं या अधिक से अधिक एक-दो बच्चे हैं। बर्थ कंट्रोल के आंदोलन से पहले या बाद के आंकड़ों में बड़ा खुला अंतर देखने को मिलता है।

इंग्लैंड में १८६० ई० और १९२५ ई० में होने वाले विवाहों के बीच औलाद की दृष्टि से अंतर का हाल यह था—[2]

---

१. ब्रिटेन, ऐन आफिशियल हैंडबुक १९५६, पृ० ८

२. रिपोर्ट रायल कमीशन आन् पापुलेशन १९४९, पृ० २६।

बच्चों की तायदाद	विवाह	
	१८६० ई०	१९२५ ई०
कोई बच्चा नहीं	९ प्रतिशत	१७ प्रतिशत
१ या २ बच्चे	११ प्रतिशत	५० प्रतिशत
३ या ४ बच्चे	१७ ,,	२२ प्रतिशत
५ से ९ बच्चे	४७ ,,	११ प्रतिशत
१० या उससे अधिक	१६ ,,	- -

इस का नतीजा यह है कि औसत परिवार छोटा हो रहा है। १०७०-८० में विवाहित औरतों के यहां बच्चों का औसत जन्म प्रति नारी ५-८ बच्चे का था। १९२५ ई० में यह औसत केवल २.२ रह गया।[1] और नवीनतम स्थिति यह है कि औसत २.२ से थोड़ा सा अधिक है।[2]

अमेरिका में औसत औलाद प्रति नारी १९१० में ४.७ बच्चे था जो १९५५ में सिर्फ़ २.४ बच्चे रह गया। १९१० में बे-औलाद औरतें और एक या दो बच्चे वालियाँ कुल विवाहित नारियों का १० और २२ प्रतिशत थीं, पर सन १९५५ में यह अनुपात क्रमशः १६ प्रतिशत और ४७ प्रतिशत हो गया। इस के विपरीत १९१० में वे औरतें जिन के ७ या उस से अधिक बच्चे थे, कुल विवाहित औरतों का २९ प्रतिशत थीं। मगर १९५५ ई० में यह अनुपात केवल ६ प्रतिशत रह गया।[3]

जन्म-दर में हर दिन होने वाली कमी के बावजूद इन देशों की

---

१. सर्वे आन् सोशल कन्डीशन्ज पृ० २३।
२. ब्रिटेन, ऐन आफिशियल हैंडबुक सेन्ट्रल आफिस आव इन्फार्मेशन, लन्दन १९६१, पृ० १२
३. फेमिली प्लानिंग स्ट्रेलिटी एण्ड पापुलेशन ग्रोथ पृ० ५

आवादी में जो थोड़ी बहुत वृद्धि हो रही है, उस का कारण यह है कि चिकित्सा विज्ञान की उन्नति और स्वास्थ्य-सुरक्षा के व्यापक उपायों ने मृत्यु-दर को भी बड़ी हद तक घटा दिया है, लेकिन अब मृत्यु-दर और जन्म-दर में थोड़ा ही अंतर रह गया है और सामान्य रूप से आशंका व्यक्त की जाने लगी है कि जल्द ही जन्म-दर मृत्यु-दर से कम हो जायेगा, जिस का अर्थ यह है कि उन राष्ट्रों में जितने आदमी पैदा होंगे, उन से अधिक मर जायेंगे। फ्रांस, बेल्जियम, और आस्ट्रिया उन देशों में से हैं जिन में आबादी थोड़ी-थोड़ी मुद्दत के बाद बढ़ने के बजाय उलटी घटती रही है। ये देश अपने पूर्व स्तर को भी बाक़ी नहीं रख सके हैं। इंग्लैंड की आबादी भी कमोबेश ठहरी हुई है। दूसरे विश्व-युद्ध से पहले अमेरिका भी इस मुसीबत में गिरफ़्तार हो गया था। आस्ट्रिया में सन १९३५ और १९३८ के बीच मौतों की संख्या जन्म से अधिक थी। अगर उस ज़माने में अधिकता के साथ विदेशों से लोग देश-परित्याग कर के फ्रांस में आवाद न हुये होते तो उस देश की आबादी में स्पष्ट कमी हो जाती। अतएव १९३४-३६ और १९३८-३९ ई० में वास्तव में आबादी कम हो भी गई थी।[1]

अमेरिका की शहरी आवादी के आंकड़ों से जाहिर होता है कि सन १९५० तक वर्तमान नस्ल स्वयं अपनी तायदाद के बराबर नस्ल पैदा करने में भी असफल रही। उस समय तक जन्म-दर का जो हाल था, उसे देखते हुये अंदाजा था कि अगर यह दर न बढ़ा तो एक पीढ़ी के बाद आबादी में २५ प्रतिशत कमी हो जायेगी।

इंग्लैंड में आबादी कमीशन की रिपोर्ट (१९४९) के अनुसार १०४५ के अंत में यह स्थिति हो गई थी कि मानसिक (अ-शारीरिक) परिश्रम करने वाले उच्च वर्गों में, जिनके विवाह को सोलह से २० साल तक हो चुके थे, प्रति परिवार बच्चों का औसत १.६८ था।

---

१. डिमोग्राफ़िक ईयर बुक १९४८-यु० एन० ओ० एडिशन १९४९।

यह वस्तुस्थिति साफ़ बता रही थी कि ये वर्ग धीरे-धीरे खत्म हो जाने वाले हैं। इस सम्बंध में विशेषज्ञों का अनुमान यह है कि—

'ऐसी आबादी के लिए जिसमें दो बच्चों का चलन हो या जिसमें अंततः हर विवाह पर दो बच्चे जीवित रहें, विनष्ट हो जाना बदा है। ऐसी आबादी हर पीढ़ी में कम होती चली जायेगी और हर तीस वर्ष के बाद वह पहले से कम हो जायेगी।'

'उदाहरण के रूप में इस को यों समझिये कि ऐसे हजार व्यक्ति जिन में दो बच्चों का चलन हो, पहले तीस वर्ष के बाद, सिर्फ़ ३३१ रह जायेंगे, ६० वर्ष के बाद ३८६ और डेढ़ सौ वर्ष बाद केवल ९२।"[1]

अर्थ-शस्त्रज्ञ और सांख्यिकी विशेषज्ञ आबादी के सही रुझानों का अंदाज़ा करने के लिए केवल जन्म-दर ही को नहीं देखते, बल्कि उन तमाम तत्वों का अध्ययन करके जो आबादी बढ़ाने या कम करने के कारण होते हैं, विशुद्ध आबादी वृद्धि-दर (Net Reproduction Rate) निकाल लेते हैं। अगर यह दर (१) है तो आबादी ठहरी हुई है। अगर (१) से अधिक है तो आबादी बढ़ रही है और अगर (१) से कम है तो घट रही है। निम्न पंक्तियों मे हम कुछ महत्वपूर्ण पश्चिमी देशों के विशुद्ध वृद्धि-दर दे रहे हैं, जिस से इन की सही हालत का अंदाज़ा होगा—

इंग्लैंड	१९३३	०.७४७
	१९३७	०..७८५
	१९४०	०.७७२
	१९४९	०.९०९
बेल्जियम	१९३९	०.८५९

१. डा० फ्रेडरिक वरघोरियर कोटेड बाई जेक्स लेशार्क, 'मैरेज एन्ड फ़ेमिली', न्यूयार्क १९४९, पृ० २३९।

	१९४७	१.००२
फ्रांस	१९३०	०.९३०
	१९३५	०.८७०
	१९४०	०.८२०
	१९५४	०.९४०
नार्वे	१९३५	०.७४६
	१९४०	०.८५८
	१९४५	१.०७८[1]

ये हालात सूझ-बूझ वालों के लिए बड़े चिन्ताजनक सिद्ध हो रहे हैं और इनके भयावह प्रभावों को देख-देख कर बहुत से वे चिन्तक भी बौखला उठे हैं जो प्रत्यक्षतः वर्थ कंट्रोल के समर्थक हैं। जब अपने ही लगाये हुये पेड़ों के फल इनके सामने आये तो ये स्तम्भित रह गये और अब कम से कम अपने देशों की हद तक ये लोग भी नीति वदल देने की बात कर रहे हैं, जैसे एक समाज शास्त्री इन परिस्थितियों के आधार पर यह मत व्यक्त करता है—

'अगर माल्थस आज जीवित होता तो वह शायद इस बात को अच्छी तरह महसूस कर लेता कि पश्चिमी इंसान ने जन्म को रोकने में कुछ ज़रूरत से ज्यादा ही दूरदर्शिता दिखाई है, बल्कि सच्ची बात तो यह है कि अपनी सभ्यता के भविष्य की चिन्ता करने में वह अति अनुदार सिद्ध हुआ है।"

"फ्रांस और बेल्जियम में तो वास्तव में समय-समय पर आबादी कम हो गई है क्योंकि मौतें जन्म से अधिक थीं, लेकिन पश्चिमी, औद्योगिक शहरी सभ्यता के शेष तमाम ही राष्ट्र आबादी कम होने का संकट भोग रहे हैं। स्वयं अमेरिका में आबादी के विशेषज्ञों ने १९३०-४० के जन्म-मृत्यु के रुझानों का अध्ययन करके यह कह दिया

---

१. इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटानिका १९५५, भाग १८, पृ० २३४।

था कि एक ही नस्ल में आवादी घटने का संकट वास्तविकता वन जायेगा।"[1]

आर्थिक दृष्टिकोण को एक प्रसिद्ध अर्थ-शास्त्री के मुख से सुनिये—

"अगर हम आवादी की कमी को क़ायम रखने की मूर्खता करते हैं, तो हम को जान रखना चाहिये कि आवादी का घटाव, जो हमारे सामने है, बेरोज़गारी की समस्या का हल नहीं है और न इस के कारण शेष लोगों का जीवन-स्तर ही उच्च होता है। इस के आर्थिक प्रभाव निश्चय ही अप्रिय होंगे। इसलिए कि इस के कारण आवादी में बूढ़ों लोगों का अनुपात वढ़ जायेगा और उत्पादक रिटायर्ड लोगों को काम पर लेने के लिए विवश होंगे और अगर स्वयं उत्पादकों में भी एक वड़ा वर्ग वड़ी उम्र के लोगों पर सम्मिालित हो तो उत्पादन व्यवस्था में वह लचक बाक़ी नहीं रह सकती जो वदलते हुये हालात और नित्य नई तेकनीक के तक़ाज़ों को पूरा करने के लिये ज़रूरी है। हमें आवादी की कमी का रोकने के लिये हर वह तरीक़ा अपनाना चाहिए जो सम्भव हो।"[2]

और एक इतिहासज्ञ के विचार भी अपने भीतर शिक्षा की वड़ी सामग्री रखते हैं—

"एक और तरीक़ा जिससे एक फ़िज़ूलखर्च और आवारा जाति के जीवन को कम कर दिया जाता है, वह जन्म-दर की कमी है। यह प्रकृति का नियम है कि जो राष्ट्र वासनाओं और काम-पिपासाओं के शिकार होते हैं, वे वाल-वृद्धि से ग़ाफ़िल रहते हैं और बच्चों को अपनी स्वतंत्रता और स्वच्छन्दता के मार्ग में वाधा समझते है।

---

१. लैंडिस, पाउल एच० 'सोशल परा्ब्लम्स' पृ० ३१३।

२. कोल डी० एच० दि इन्टेलिजेन्ट मैंन्स गाइड टू दि पोस्टवार वर्ल्ड, लंदन १९४८, पृ० ४४५-४६।

यह रवैया यौन-तत्वों को गर्भ-निरोधक साधनों के उपयोग में गर्भपात और इसी प्रकार के दूसरे उपायों के अपनाने का प्रलोभन देता है। इस का फल यह होता है कि उस राष्ट्र की आबादी पहले तो शांत और ठहराव वाली हो जाती है और फिर कम होने लगती है, यहां तक कि वह उस स्थान पर पहुंच जाता है जहां वह अपनी मौलिक आवश्यकताओं तक के पूरा करने योग्य नहीं रहता अर्थात न वह अपने पृथक व्यक्तित्व को क़ायम रख सकता है और न अपने प्राकृतिक और मानवीय शत्रुओं से अपने-आप को बचा सकता है। यह आत्म-हत्या है और इसे इस वांझपन से कुछ और अधिक ही सहायता मिलती है जो आवारापन और बदकारी का स्वाभाविक परिणाम है। फिर इन दोनों का फल यह है कि ऐसे राष्ट्र की जीवन-अवधि बहुत कम हो जाती है। आत्म-हत्या के इस तरीक़े ने मानव-इतिहास में बहुत से शाही परिवारों, धनी-मानी वर्गों और सामूहिक गिरोहों को जैविक व सामाजिक दृष्टि से नष्ट-विनष्ट कर दिया है और इसी के कारण बहुत से राष्ट्र पतन व अवनति के शिकार हुए हैं।"[1]

कोलन क्लार्क इसके राजनैतिक व सांस्कृतिक पहलुओं की ओर हमारे ध्यान को आकृष्ट करता है --

"भविष्य का इतिहासकार, बीती हुई सदियों के झरोखे से देख कर फ्रांसवासियों के १९ वीं सदी के शुरू और ब्रिटेनवासियों के १८ वीं सदी के अंत के इस निर्णय को कि वे अपनी आबादी की वृद्धि की रफ़्तार रोक लेंगे और उस के इस फल को कि एक विश्व-शक्ति की दृष्टि से इन देशों के राजनीतिक प्रभावों में गिरावट आ गई, हमारे युग की महत्वपूर्ण घटनाओं में गिनती करेगा"[2]

---

१. सोरोकिन : दि अमेरिकन सेक्सुअल रिवोल्युशन पृ० ७८-७९।

२. दैनिक 'टाइम्स' लंदन, दिनांक १५ मार्च, १९५९। लेख : छोटे परिवार

यह एक छोटा-सा जायज़ा है इन परिणामों का, जो बर्थ कंट्रोल को एक राष्ट्रीय नीति और एक सामूहिक आन्दोलन की हैसियत से अपनाने की वजह से संसार के विभिन्न देशों में ज़ाहिर हो चुके हैं। ये परिणाम आज एक खुली किताब की तरह हर सोचने-समझने वाले के सामने हैं। जिन राष्ट्रों का उल्लेख हमने ऊपर किया है, वे तो अपनी बहार देख चुके हैं, अपने पूरे उत्कर्ष को पहुंच जाने के बाद अब वे अल्लाह की सुन्नत के मुताबिक़ पतन की ओर जा रहे हैं और उस के पतन की व्यवस्था स्वयं उन के अपने हाथों करायी जा रही है, पर कोई राष्ट्र जो अभी अपनी पस्ती से निकल कर तरक़्क़ी करने का इच्छुक हो, क्या उस के लिए यह कोई बुद्धिमत्ता की बात होगी कि तरक़्क़ी के लिए अपनी जद्दोजेहद का आरंभ ही वह उन मूर्खताओं से करे, जो दूसरे राष्ट्रों ने उन्नति के शिखर पर पहुंच कर किया है ?

—o—

(Too Small Families) लेखक प्रोफेसर कोलन क्लार्क, डायरेक्टर इन्स्टीट्यूट फार रिसर्च इन एग्रिकल्चरल एकोनोमिक्स, आक्सफोर्ड ।

प्रतिक्रिया

इन परिस्थितियों ने सम्पूर्ण यूरोप के दूरदर्शी बुद्धिजीवियों में खलबली पैदा कर दी है। चिन्तक इन पर बेचैनी और असन्तोष व्यक्त कर रहे हैं। और कूटनीतिज्ञ व राजनीतिज्ञ इस रवैए को बदलने की कोशिश कर रहे हैं। हर देश में आबादी की समस्या पर कुछ नए रुझान उभर रहे हैं, कुछ नए आंदोलनों ने जन्म लिया है और ले रहे हैं और व्यावहारिक रीति भी धीरे-धीरे बदलने लगी है। यहां हम संक्षेप में बतलायेंगे कि विभिन्न देशों में इन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया क्या हुई है।

इंगलैण्ड

प्रथम विश्व-युद्ध के समय (१९१६) में एक नेशनल बर्थ रेट कमीशन मुक़र्रर किया गया जिस में चिकित्सा, अर्थ, विज्ञान, सांख्यिकी, शिक्षा और धर्म-शास्त्र के २३ विशेषज्ञ आदि शरीक किए गए। सरकार की ओर से डा० स्टीवेन्सन संख्याति विभाग के व्यवस्थापक और सर आर्थर न्यूज़ होम, मुख्य मेडिकल अफ़सर इस में शामिल हुए। इस कमीशन की ओर से अब तक अनेकों रिपोर्टें छापी जा चुकी हैं। इस पिोर्ट में लिखा गया है कि—

"ब्रिटिश द्वीप समूह को अपने जन्म-दर में प्रतिदिन की कमी पर चिन्ता करनी चाहिए और इस कमी को रोकने और यथाशक्ति अधिकता की ओर ले जाने के लिए ऐसे उपाय अपनाने चाहिये जो उसके वश में हों।

सर जार्ज न्यूमेन, जो इंग्लैंड के स्वास्थ्य मंत्रालय के मुख्य मेडिकल अफ़सर हैं, जन्म-दर की कमी पर अपना मत व्यक्त करते हुए लिखते हैं—

"अगर इस कमी को न रोका गया, तो ब्रिटेन एक चौथे दर्जे की शक्ति हो जाएगा।"

सर विलियम ब्यूरिज, लंदन स्कूल आव् एकानामिक्स के डायरेक्टर ने अपने एक भाषण में कहा कि मृत्यु और जन्म का अनुपात अगर इसी रफ़्तार से बिगड़ता रहा तो आगामी दस वर्ष में इंग्लैंड की आबादी घटनी शुरू हो जाएगी और ३० साल के भीतर २० लाख की कमी होगी। क़रीव-करीब यही मत लिवरपूल यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर कार्सांडर्स का था। इस खतरे को दूर करने के लिए बर्थ कंट्रोल के ख़िलाफ़ आंदोलन शुरू हो गया और लीग आव् नेशनल लाइफ़ के नाम से एक समिति बनाई गई, जिस में प्रसिद्ध मर्द और औरतों ने शिर्कत की।

दूसरे विश्व-युद्ध में ब्रिटिश कूटनीतिज्ञों ने फिर आबादी की कमी की हानियों को तीव्रता के साथ महसूस किया। अतएव १९४३ ई० में ब्रिटेन के गृह सचिव श्री हरबर्ट मारीसन ने इस विचार को व्यक्त किया कि अगर ब्रिटेन को अपना वर्तमान स्तर बाक़ी रखना है और आगे प्रगति-मार्ग को विकसित करना है तो हर घर में १५ प्रतिशत की वृद्धि होनी चाहिए। उस समय देश के सामान्य विचारकों का यह एहसास था कि अगर इंग्लैंड को ज़िन्दा रहना है, तो उसे अपनी सुरक्षा के लिए आबादी के मामले में एक नई और प्रभावपूर्ण नीति अपनानी होगी और जन्म-दर की कमी को तुरन्त रोकना पड़ेगा। इस उद्देश्य के लिए मार्च १९४४ ई० में एक 'रायल कमीशन' क़ायम किया गया, ताकि वह समस्या के तमाम पहलुओं का अध्ययन करके प्रस्ताव रखे कि भविष्य में राष्ट्रीय हित में आबादी के रुझान को प्रभावित करने के लिए क्या-क्या क़दम उठाए जायें। इस कमीशन ने

मार्च १९४९ में अपनी रिपोर्ट पेश की और उस में खुल कर इस वास्तविकता पर प्रकाश डाला कि—

"परिवार के साइज में कमी का सब से महत्वपूर्ण—बल्कि बड़ी हद तक एक मात्र कारण परिवार को संक्षिप्त और सीमित रखने की जान-बूझ कर की गई कोशिश है।"

इस रिपोर्ट में कमीशन ने सविस्तार बताया है कि १९ वीं और २० वीं शताब्दी के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हालात ने बड़े परिवार को आर्थिक दृष्टि से बोझ बना दिया और फैक्ट्री ऐक्ट और शिक्षा-नियमों के कारण बच्चों की मेहनत के इस्तेमाल की सम्भावनाएं सीमित हो गयीं, कुछ दूसरे तत्वों ने भी उनके साथ मिल कर अधिक बच्चों के वजूद को आर्थिक दृष्टि से घाटे का कारण बना दिया और लोगों ने बर्थ कंट्रोल द्वारा परिवार को छोटा रखने की नीति अपना ली। इसके बाद कमीशन ने इस उद्देश्य के लिए सविस्तार सिफ़ारिशें प्रस्तुत की हैं कि घर में बच्चे आर्थिक दृष्टि से बोझ न बनें और बाप बनना एक आर्थिक संकट मोल लेने का सामानार्थी न बन जाए। कमीशन की सिफ़ारिशें इस प्रकार हैं—

'हर परिवार को बच्चों की तायदाद को देख कर एलाउंस दिया जाए। इंकम टैक्स के क़ानून को तब्दील किया जाए। औलाद वाले लोगों पर कम टैक्स लगाया जाए और अविवाहित लोगों से अधिक टैक्स लिया जाए।"

बड़े पैमाने पर ऐसे घर बनाए जायें जिनमें तीन से ज़्यादा सोने के कमरे हों। स्वास्थ्य और सामाजिक हित की स्कीमें, जिन से बड़े परिवार के विकास-पथ पर आगे बढ़ने में मदद मिले।

आबादी की समस्या पर स्थायी रूप से शोध-कार्य और शिक्षा।

इस सिलसिले में कमीशन यहां तक बढ़ गया कि उसने आबादी बढ़ाने के लिए कृत्रिम प्रजनन-साधनों जैसे अप्रिय व घृणित तरीक़ों के अपनाने की भी सिफ़ारिश कर दी थी।

इन सिफ़ारिशों पर विचार करने के बाद इंग्लैंड के क़ानूनों और आर्थिक नीतियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिए गए । अब वहां बच्चों के लिए भत्ते, प्रसव-काल के लिए छुट्टी और विशेष भत्ते और शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान आदि की सुविधायें दी जा रही हैं ताकि लोग अधिक बच्चे पैदा करने से न घबरायें। अतएव इस के प्रभाव प्रकट होने लगे हैं। नवीनतम आंकड़े यह बताते हैं कि जन्म-दर और आबादी में वृद्धि की रफ़्तार धीरे-धीरे बढ़ रही है। १९३१ और १९४१ के बीच औसत जन्म-दर १४.८ प्रति हज़ार था। १९४१ और १९५१ के बीच १७.४ हो गया। आबादी की वार्षिक वृद्धि १९३१-४१ के बीच औसतन १०७००० थी। १९६० के बीच यह २५०,००० हो गई। नवीन जन-गणना के परिणामों का एलान करते हुए कहा गया है कि ब्रिटेन की आबादी में पिछले दस वर्ष के भीतर जो वृद्धि हुई है वह पिछली अर्द्ध शताब्दी में सब से अधिक वेगवान है ।[1]

फ्रांस

सरकार को इस ख़तरे का एहसास हो गया है कि जन्म-दर में गिरावट फ्रांसीसी राष्ट्र का पतन है। फ्रांस के विवेकी पुरुष अनुभव कर रहे हैं कि अगर इसी वेग से उन की आबादी घटती रही, तो एक दिन फ्रांसीसी राष्ट्र का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। जन-गणना की रिपोर्टों से मालूम होता है कि १९११ के मुक़ाबले में १९२१ ई० में फ्रांस की आबादी २१ लाख कम हो गई। १९२६ में १५ लाख की वृद्धि हुई, लेकिन वह अधिकतर विदेशियों के आगमन का परिणाम था। फ्रांस में अनजानी जातियों की संख्या बढ़ती जा रही है, यहां तक कि आबादी का ७.२ प्रतिशत भाग अनजाना है। यह फ्रांसीसी

१· 'ब्रिटिश बुलेटिन' जुलाई २९, १९६१, पृ० ४

राष्ट्र के लिए और भी ज़्यादा ख़तरनाक है, क्योंकि राष्ट्रवाद के वर्तमान युग में अनजानी आबादी का बढ़ना और मूल आबादी का घटना राष्ट्रीय जीवन के लिए विनाश का कारण है। फ्रांस में एक प्रबल आंदोलन 'आबादी की वृद्धि के लिए राष्ट्रीय एका' के नाम से इस संकट का मुक़ाबला करने के लिए शुरू हो गया है। सरकार ने बर्थ कंट्रोल की शिक्षा और प्रचार व प्रसार को क़ानून द्वारा वर्जित कर दिया है। बर्थ कंट्रोल के पक्ष में छिपे या खुले, कोई लेख, भाषण या मश्विरा नहीं हो सकता, यहां तक कि डाक्टरों के लिए पाबंदी है कि वे कोई ऐसा काम खुले-छिपे न करें, जिस का नतीजा बर्थ कंट्रोल के रूप में निकल सकता हो। आबादी बढ़ाने के लिए लगभग एक दर्जन क़ानून लागू किए गए हैं, जिन के अनुसार अधिक बच्चे पैदा करने वाले परिवार को आर्थिक सहायता दी जाती है। टैक्स में कमी की जाती है। वेतन, मजदूरी और पेंशन अधिक दी जाती है। इन के लिए रेल के किराए कम किए जाते हैं, यहां तक कि इन्हें पदक (तमग़े) तक दिए जाते हैं। दूसरी ओर विवाह न करने वालों या बच्चे न रखने वाले जोड़ों पर (Surtax) लगाया जाता है, मानो भुगत लेने के बाद अब जाकर फ्रांसीसी राष्ट्र की आंख खुली है और वह उस पाप का प्रायश्चित कर रही है जो उस ने प्राकृतिक नियमों से विमुखता अपना कर बर्थ कंट्रोल के रूप में किया था।

फ्रांस के जन्म-दर पर इस नई नीति का प्रभाव पड़ना शुरू हो गया है। इस का अंदाज़ा निम्न आंकड़ों से होता है—

वर्ष	जन्म-दर प्रति हज़ार
१९३६-४०	१४.५
१९४१-४५	१५.१
१९४६	२०.६
१९४७	२१.०
१९५८	२८.२

यह इसी का फल है कि १९३८-५४ के बीच फ्रांस की आबादी में २६ प्रतिशत वृद्धि हुई है।

जर्मनी

नाज़ी पार्टी ने सत्तारूढ़ होने के बाद आबादी की बढ़ती हुई गिरावट को सबसे बड़ा ख़तरा कहा और उसे दूर करने की कोशिश की। एक नाज़ी अख़बार ने लिखा है कि—

"अगर हमारा जन्म-दर इसी तरह घटता रहा, तो भय है कि एक वक़्त हमारा राष्ट्र बिलकुल बांझ हो जाएगा और वर्तमान पीढ़ी के कामों को संभालने के लिए नई पीढ़ियां उठनी वंद हो जायेंगी।"

इस स्थिति को सुधारने के लिए सरकार ने बर्थ कंट्रोल की शिक्षा, प्रचार व प्रसार को क़ानून द्वारा रोक दिया। औरतों को कारख़ानों और दफ़्तरों से हटाना शुरू कर दिया। नव-जवानों को विवाह का प्रलोभन दिलाने के लिए विवाह-ऋण के नाम से रक़में दीं। बिन-ब्याहों और बे-औलादों पर टैक्स कम कर दिया। १९३४ में एक करोड़ पौंड के विवाह-ऋण दिए, जिनसे ६ लाख मर्दों और औरतों ने फ़ायदा उठाया। १९३५ के क़ानून की दृष्टि से तै किया गया कि एक बच्चा पैदा होने पर इंकम टैक्स में १५ प्रतिशत, २ बच्चों पर ३५ प्रतिशत, ३ पर ५५ प्रतिशत, ४ पर ७५ प्रतिशत, ५ पर ९५ प्रतिशत कमी की जाए और जब ३ बच्चे हो जायें तो पूरा इंकम टैक्स माफ़ कर दिया जाए। इन उपायों के कारण नाज़ी जर्मनी में जन्म-दर तुरन्त बढ़ना शुरू हो गया। १९३१-३५ में दर १६.६ प्रति हज़ार था। १९३६-४० में बढ़ कर १९.६ प्रति हजार हो गया।

इटली

मसोलिनी की सरकार ने १९३३ ई० के बाद से आबादी बढ़ाने की

और विशेष ध्यान देना शुरू कर दिया। बर्थ कंट्रोल का प्रचार-प्रसार अवैध कर दिया गया। विवाह और संतानोत्पत्ति के लिए उन तमाम उपायों को अपनाया गया, जिन का जर्मनी और फ्रांस के हालात में उल्लेख किया गया है। इटली के क़ानून में इस बात की व्यवस्था मौजूद है कि हर वह कार्य या भाषण या प्रचार, जो बर्थ कंट्रोल के पक्ष में हो, क़ाबिले दस्तंदाज़ी पुलिस अपराध है और ऐसा करने वाले को एक वर्ष की क़ैद और जुर्माना या दोनों सजाएं दी जा सकती हैं। सामान्य स्थिति में यह क़ानून डाक्टरों पर भी लाग होता है।

स्वीडन

कुछ दिनों पहले स्वीडन के भूतपूर्व मंत्री ट्राईगर ने पार्लियामेंट (Ricksdag) में भाषण करते हुए कहा था कि अगर स्वीडिश आत्महत्या नहीं करना चाहता, तो जन्म-दर की प्रतिदिन की कमी को रोकने के लिए तात्कालीन उपायों के अपनाने की ज़रूरत है। सन १६२१ से जन्म-दर की कमी भयानक हो गई है और आबादी में वृद्धि बंद हो गई है।

इस चेतावनी का यह प्रभाव पड़ा कि स्वीडिश पार्लियामेंट ने मई १६३० में एक कमीशन नियुक्त किया, जिसने अपनी लम्बी-चौड़ी रिपोर्टों द्वारा एक नई नीति प्रस्तावित की। कमीशन ने परिवार के साइज़ को बढ़ाने का मश्विरा दिया और हर परिवार के लिए तीन या चार बच्चों की संख्या का प्रस्ताव रखा। इस कमीशन की सिफ़ारिशों पर जो महत्वपूर्ण क़दम उठाए गए, वे इस प्रकार हैं—

—गर्भ निरोधक दवाओं के क्रय-विक्रय पर नेशनल हेल्थ बोर्ड की निगरानी,

—१८ साल से कम उम्र के बच्चों के लिए माता-पिता को टैक्स में रियायत,

—कम किराए के मकानों का प्रस्ताव,

—तीन या तीन से अधिक बच्चों की स्थिति में क्रमागत वार्षिक रिबेट, (Annual Rebate)

—स्वास्थ्य-सुरक्षा—मुख्य रूप से बच्चों की स्वास्थ्य के लिए मुफ़्त दवाइयों का जुटाया जाना।[1]

स्वीडन में जन्म-दर पर इस नई नीति का खुला प्रभाव दीख पड़ता है।

वर्ष	जन्म-दर प्रति हज़ार
१९३१-३५	१४.१
१०३६-४०	१८.७
१९४१-४४	१९.७

युद्ध के बाद के समय में स्वीडन का जन्म-दर फिर कम हो गया है।

अब आप बर्थ कंट्रोल से बड़ी हद तक परिचित हो चुके हैं। आप को मालूम हो चुका है कि इस आंदोलन की वास्तविकता क्या है, किन कारणों से यह पैदा हुआ, कैसे यह विकसित हुआ। जिन देशों में यह चला, वहां इस के क्या परिणाम रहे और जिन्होंने इस का अच्छी तरह तजुर्बा कर लिया है, वे अब इसे किस दृष्टि से देख रहे हैं। इसके बाद हमें उम्मीद है कि बर्थ कंट्रोल के बारे में इस्लाम का दृष्टिकोण ज़्यादा आसानी के साथ आपकी समझ में आ जाएगा, ज़्यादा गहराई के साथ बुद्धिगम्य होगा, और उस की मस्लहतें अधिक विस्तार में आप पर स्पष्ट होंगी।

---

१. यह वही स्वीडन है, जिसने हाल ही में हमारी आबादी में कमी करने के लिए हमारी सरकार को सहायता देने का समझौता किया है।

इस्लामी सिद्धान्त

पिछले पृष्ठों में वर्थ कंट्रोल, आंदोलन की प्रगतिके कारणों और उस के परिणामों का जो विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है, उस का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से दो महत्वपूर्ण तथ्य निखर कर सामने आते हैं।

एक यह कि पश्चिमवासियों में बर्थ कंट्रोल की कामनाओं का पैदा होना, और इस आंदोलन का इस प्रबलता से उन के व्यक्तियों में प्रचलित हो जाना कुछ इस कारण नहीं है कि उनकी प्रकृति ही संतानोत्पत्ति से बचने की अपेक्षा करती है, बल्कि इस का मूल कारण यह है कि दो शताब्दियों से उनके यहां संस्कृति एवं सभ्यता तथा अर्थ एवं सामाजिकता की जो व्यवस्था प्रचलित है, उसने ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न कर दी हैं, जिन में वे संतान से बचने और संतानोत्पत्ति से घृणा करने पर वाध्य हो गए हैं। यदि वे परिस्थितियां न होतीं, तो वे अब भी उसी प्रकार बर्थ कंट्रोल से अपरिचित रहते, जिस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में थे। क्योंकि उन की जो प्रकृति उस समय प्रेम और संतानोत्पत्ति की ओर अपने झुकाव को प्रकट करती थी, वही प्रकृति अब भी मौजूद है। ६० वर्ष के भीतर इस में कोई क्रांति नहीं उत्पन्न हो गई है।

दूसरे यह कि बर्थ कंट्रोल के चलन से पश्चिमी राष्ट्र जिन संकटों एवं कठिनाइयों में घिर गये हैं, उन्होंने यह बात सिद्ध कर दी है कि बर्थ कंट्रोल का आंदोलन प्रकृति के नियमों में जो कांट-छांट करना चाहता है, वह मानव-जाति के लिए अति हानिकारक है और

वास्तव में प्रकृति के नियम कांट-छांट के योग्य नहीं हैं बल्कि वह अर्थ एवं समाज-व्यवस्था ही बदल देने योग्य है, जो मनुष्य को प्रकृति के नियमों के विरुद्ध चला कर बलात् विनाश की ओर ले जाती है।

मौलिक सिद्धान्त

पाश्चात्य अनुभवों की ये दो शिक्षायें हम को इस्लामी सिद्धांत से अति निकट ले आती हैं। इस्लाम प्राकृतिक धर्म है और उसने व्यक्तिगत व सामूहिक कार्य-पद्धतियों के लिए जितनी प्रणालियां बनायी हैं, वे सब इस एक मान्य नियम पर आधारित हैं कि मानव प्रकृति के उन नियमों का पालन करे, जिन पर सृष्टि की यह सम्पूर्ण व्यवस्था चल रही है और कोई ऐसी जीवन-व्यवस्था न अपनाए जो प्रकृति के नियमों के विरुद्ध काम करने पर उस को बाध्य करती हो। क़ुरआन मजीद हम को बताता है कि अल्लाह ने हर चीज़ को पैदा कर के उस की प्रकृति में इस तरीक़े की शिक्षा भी दी है, जिस पर चल कर वह चीज़ अपने कार्य-क्षेत्र में अपने हिस्से का कार्य भली-भांति पूरा करती रहे।

'रब्ब-नल्लज़ी अअ्-ता कुल-ल शैइन ख़ल-क़हू सुम-म हदा'

क़ुरआन २० : ५०

"हमारा पालनहार वह है जिसने प्रत्येक वस्तु को उस की मुख्य बनावट प्रदान की, फिर उस को उन उद्देश्यों को पूरा करने का मार्ग भी बता दिया, जिन के लिए वह पैदा की गई है।"

सृष्टि की तमाम वस्तुयें निर्विघ्न रूप से उस आदेश का पालन कर रही हैं, इसलिए कि ईश्वर ने उनके लिए जो मार्ग निश्चित किया है, उस से विमुख होने में वे समर्थ ही नहीं। परन्तु मानव को यह सामर्थ्य प्रदान की गई है कि वह इस मार्ग से हट सकता है। उस पर चलने से इंकार कर सकता है। अपनी बुद्धि एवं विवेक से ग़लत काम

करके उसके विपरीत दूसरे रास्ते निकाल सकता है और प्रयत्न करके उस पर भी चल सकता है। लेकिन हर वह रास्ता, ज़िसे मनुष्य ईश्वर के बताये हुए रास्ते को छोड़कर अपनी मनोलोलुपताओं के पालन में बनाता और ग्रहण करता है, टेढ़ा रास्ता है और उस का अनुसरण पथभ्रष्टता है।

'व मन अज़ल्लु मिम्मनित्त-ब-अ हवाहु बिग़ैरि हुदम् मिनल्लाह' (२८ : ५०)

"उससे अधिक पथ-भ्रष्ट और कौन होगा, जिसने ईश्वरीय पथ-प्रदर्शन के बिना अपनी मनोलोलुपताओं का पालन किया।"

यह पथ-भ्रष्टता प्रत्यक्ष रूप से भले ही अधिक लाभप्रद दिखाई पड़े, परन्तु वास्तव में जो मनुष्य ईश्वर के नियत मार्ग को छोड़ता है और उस की निश्चित मर्यादाओं को भंग करता है, वह स्वयं अपने ऊपर ज़ुल्म करता है, क्योंकि फलस्वरूप उसका यह ग़लत काम स्वयं उसी के लिए हानिहारक सिद्ध होता है।

व मंय्य-त-अद्-द हुदूदल्लाहि फ़-क़द ज़-ल-म नफ़सहु (६५.१)

"और जिस किसी ने अल्लाह की निश्चित मर्यादाओं का उल्लंघन किया, उसने स्वयं अपने ऊपर अत्याचार किया।"

क़ुरआन कहता है कि अल्लाह की बनाई हुई बनावट को बदलना, और उन प्राकृतिक नियमों को भंग करना, जिन्हें सर्वश्रेष्ठ ख़ुदा ने इस सृष्टि में जारी किया है, वस्तुतः एक शैतानी कर्म है और शैतान ही इस कर्म को सिखाता है।

व-ल-आ मु रन्नहुम फ़ल-युग़ैय्यिरुन-न ख़ल्क़ल्लाह (४ : ११९)

"शैतान ने कहा कि मैं मानव-जाति (आदम-संतति) को आदेश दूंगा तो वे अल्लाह की बनावट को बदल डालेंगे।"

और शैतान कौन है? वह जो आदि काल से मानव का खुला हुआ शत्रु है।

व ला तत्तबिऊ ख़ुतुवातिश् शैतानि···इन्नहु लकुम

अदूव्वुम्मुबीन इन्नमा या मुरुकुम बिस्सूइ वल फ़ह्शाइ। (२ : १६६)

"और तुम शैतान का आज्ञापालन न करो, क्योंकि वह तुम्हरा खुला शत्रु है। वह तुम को निकृष्टता एवं निर्लज्जता के कार्यों का आदेश देता है।"

अतएव इस्लाम ने जिस सिद्धान्त पर सभ्यता व संस्कृति तथा अर्थ व समाज की व्यवस्था की नींव रखी है, वह यह है कि मनुष्य व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से अपनी प्रकृत्ति की तमाम अपेक्षाओं को प्राकृतिक नियमों के ठीक अनुसार पूरा करे और अल्लाह की प्रदत्त सम्पूर्ण शक्तियों से उस ढंग पर काम ले, जिस का आदेश स्वयं अल्लाह ने दिया है। किसी शक्ति का अकर्मण्य एवं निरर्थक बनाए, न किसी शक्ति के प्रयोग में ख़ुदा के दिए हुए आदेशों से विमुख हो जाए और न शैतानी प्रलोभनों एवं प्रेरणाओं से पथभ्रष्ट होकर अपना हित एवं कल्याण उन तरीक़ों में खोजने लगे जो प्रकृति के सीधे मार्ग से हटकर निकलते हैं।

इस्लामी सभ्यता और बर्थ कंट्रोल

इस सिद्धांत को दृष्टि में रखकर जब आप इस्लाम पर नज़र डालेंगे, तो आप देखेंगे कि इस्लामी सभ्यता की व्यवस्था ने सिरे से उन कारणों एवं तत्वों का ही उन्मूलन कर दिया है, जिन के कारण मनुष्य अपनी प्रकृति की उस महत्वपूर्ण अपेक्षा अर्थात संतानोत्पत्ति से दूर रहने पर विवश हो जाता है। यह आप को ज्ञात हो चुका है कि मनुष्य को मनुष्य होने की हैसियत से बर्थ कंट्रोल की आवश्यकता कदापि नहीं होती है और न उसकी प्राकृतिक बनावट ही इस की अपेक्षा करती है, बल्कि एक विशिष्ट सांस्कृतिक व्यवस्था जब किसी जन-समूह में विशिष्ट प्रकार की स्थिति उत्पन्न कर देती है, तब मनुष्य बाध्य हो जाता है कि अपने आराम तथा अपने कल्याण एवं हित के लिए अपनी नस्ल का सिलसिला समाप्त कर दे या उस को

बड़ी हद तक घटाने की कोशिश करे। इस से आप ख़ुद नतीजा निकाल सकते हैं कि अगर कोई सभ्यता इस विशिष्ट प्रकार की सभ्यता से भिन्न हो और उसमें वे विशिष्ट प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न ही न हों तो सिरे से कठिनाइयां तथा वे तत्व उत्पन्न ही न होंगे जो मनुष्य को ख़ुदा की बनावट बदलने, उस की मर्यादाओं का उल्लंघन करने और प्राकृतिक नियमों की अपेक्षाओं से विमुख होने पर तैयार करते है।

इस्लाम की अर्थ-व्यवस्था ने पूंजीवाद की जड़ काट दी है, वह ब्याज को हराम करता है, एकाधिकार (Monopoly) को रोकता है। जुए और सट्टे को अवैध कहता है, धन-संग्रह से मना करता है और ज़कात व विरासत के तरीक़े जारी करता है। ये आदेश उन बहुत से अवगुणों का उन्मूलन कर देते हैं, जिन्होंने पाश्चात्य राष्ट्रों के आर्थिक जीवन को पूंजीपतियों के अतिरिक्त और सब के लिए एक मुस्तक़िल अज़ाब बना दिया है।[1]

इस्लाम की सामाजिक व्यवस्था ने औरत को विरासत के हक़ूक़ दिए हैं। मर्द की कमाई में उस का हक़ निश्चित किया है। मर्द और औरत के कार्य-क्षेत्र को प्राकृतिक सीमाओं में विभाजित किया है। मर्द और औरत के स्वतंत्र समागम को शरओ (धर्म-विधि सम्बंधी) पर्दे से रोक दिया गया है और इस प्रकार अर्थ एवं समाज की उन बहुत सी ख़राबियों को दूर कर दिया है, जिन के कारण औरत अपने प्राकृतिक कर्त्तव्य—नस्ल-अविवृद्धि एवं संतति-प्रशिक्षण—से विमुख होने पर तैयार या मजबूर होती है।[2]

१· विस्तृत विवेचन के लिए देखिए "मनुष्य की आर्थिक समस्या और उस का हल, 'इस्लाम और वर्तमान आर्थिक दृष्टिकोण' और 'सूद' : लेखक—मौलाना अबुल आला मौदूदी

२. इस की विस्तृत व्याख्या के लिए 'पर्दा' का अध्ययन लाभप्रद होगा और वैधानिक विवेचन के लिए 'दाम्पत्य-अधिकार' का।

इस्लाम की नैतिक शिक्षायें मनुष्य को आडम्बररहित तथा संयमी जीवन बिताना सिखलाती हैं। वह परस्त्री-गमन एवं मद्यपान को हराम करता है। नृत्य-गान, राग-रंग से (जो ज़िना के अति तीव्र प्रेरकों में से एक है) रोकता है। बहुत से उन विहारात्मक कार्यों तथा भोग-विलास सम्बंधी मनोरंजनों का मार्ग बंद करता है, जो मनुष्य को अपव्ययी बनाते हैं। वस्त्र, गृह और सुख तथा श्रृंगार के साधनों में मितव्ययिता की ताकीद करता है और दुराचरण, अपव्यय पौर हद से बढ़ी हुई मनोलोलुपता का उन्मूलन कर देता है, जो पश्चिमी देशों में बर्थ कंट्रोल के फैलने के महत्वपूर्ण कारणों में से हैं। इस के साथ इस्लाम पारस्परिक सहानुभूति एवं सहकारिता की शिक्षा देता है। पारस्परिक प्रेम-व्यवहार पर उभारता है। पड़ोसियों की सहायता और दीन-दुखियों पर ख़ुदा की राह में धन व्यय करने का आदेश देता है और स्वार्थपरायणता एवं काम-पूजा से रोकता है। ये सभी बातें एक ओर प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्तिशः और दूसरी ओर समाज में सामूहिक रूप से एक ऐसा नैतिक वातावरण उत्पन्न कर देती हैं, जिस में बर्थ कंट्रोल के लिए प्रेरक वस्तुयें पैदा ही नहीं हो सकतीं।

सबसे बड़ी बात यह है कि इस्लाम ने ख़ुदापरस्ती (ईश्वरवाद) की शिक्षा दी है। वह ख़ुदा पर भरोसा करना सिखाता है और यह तथ्य मनुष्य के बुद्धिगम्य कर देता है कि उसका और प्रत्येक जीवधारी का वास्तविक पालनहार सर्वश्रेष्ठ ख़ुदा है। यह बात मनुष्य में वह मनोवृत्ति पैदा ही नहीं होने देती, जिस से वह जीवन में केवल अपने ही साधनों तथा अपने प्रयत्नों पर भरोसा करने लगता है।

इन तमाम बातों का सार यह है कि इस्लाम के समाजिक नियम, उसकी नैतिक शिक्षायें, आध्यात्मिक प्रशिक्षण ने इन कारणों एवं तत्वों में से प्रत्येक कारण को और प्रत्येक तत्व को मिटा दिया है जो पाश्चात्य संस्कृति एवं सभ्यता में बर्थ कंट्रोल के लिए प्रेरक सिद्ध हुए

हैं। अगर मनुष्य मानसिक एवं व्यावहारिक हैसियत से एक सच्चा मुसलमान हो तो न कभी वह बर्थ कंट्रोल की कामना कर सकता है और न उसके जीवन में ऐसी स्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जो उसको प्रकृति के सीधे मार्ग से विमुख होने पर बाध्य कर दें।

बर्थ कंट्रोल के सम्बन्ध में इस्लाम का फ़तवा

यह तो समस्या का निषेधात्मक पक्ष (Negative Aspect) था। अब हमको स्वीकारात्मक पक्ष (Positive Aspect) से देखना चाहिए कि बर्थ कंट्रोल के सम्वबंध में इस्लाम का फ़तवा क्या है ?

पवित्र क़ुरआन में एक स्थान पर यह ठोस सिद्धांत वर्णन कर दिया गया है कि अल्लाह की रचना में परिवर्तन एक शैतानी कर्म है।

'व ला आमुरन्नहुम फ़-ल युग़ैय्यिरन-न खलक़ल्लाहि'

इस आयत में अल्लाह की रचना में परिवर्तन से तात्पर्य यह है कि अल्लाह ने जिस वस्तु को जिस उद्देश्य के लिए बनाया है, उस को इस मूल उद्देश्य से फेर कर किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयुक्त किया जाए या इस प्रकार उससे काम लिया जाए कि मूल उद्देश्य समाप्त हो जाए। इस नियम के अनुसार हमको देखना चाहिए कि औरत और मर्द के दाम्पत्य सम्बंध में इस का प्राकृतिक उद्देश्य क्या है और बर्थ कंट्रोल से इस प्राकृतिक उद्देश्य में परिवर्तन होता है या नहीं। स्वयं पवित्र क़ुरआन इस प्रश्न के समाधान में हमारा पथ-प्रदर्शन करता है। वह औरत और मर्द के दाम्पत्य सम्बंध के दो उद्देश्य बताता है। एक यह कि—

'निसाउकुम हरसुल्लकुम फ़ातू हरसकुम अन्ना शिअ्तुम व क़द्दिमू लि अन्फ़ुसिकुम' (२ : २८)

'तुम्हारी स्त्रियां तुम्हारे लिए खेतियां हैं, तो तुम जिस तरह चाहो, अपनी खेतियों में जाओ और अपने लिए आगे का प्रबंध करो।'

और दूसरी यह है—

वमिन आयातिही अन ख़-ल-क़ लकुम मिन अन्फ़ुसिकुम अज़्वाजल्लि तस्कुनू इलैहा व ज-अ-ल बैनकुम मवद्-तंव-वरह्म: (२९-३०)

'और अल्लाह की निशानियों में से एक यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हीं में से जोड़े पैदा किए, ताकि तुम उन के पास शांति प्राप्त करो और उसने तुम्हारे बीच प्रेम एवं दया उत्पन्न कर दी।'

पहली आयत में औरतों को 'खेती' कह कर एक जैविक तथ्य (Biological Fact) को प्रकट किया गया है। जीव-शास्त्र की दृष्टि से मर्द की हैसियत किसान की है और औरत की हैसियत खेती की। और इन दोनों के सम्बंध से प्रकृति का प्रथम ध्येय मानव-जाति की स्थापना है। इस ध्येय में मानव, पशु और पेड़-पौधे सभी सम्मिलित हैं।[1]

---

१. एक सज्जन ने इस आयत से बर्थ कंट्रोल के पक्ष नें तर्क देते हुए यह अनोखी बात पैदा की है कि खेती के सांथ किसान का सम्बन्ध सिर्फ़ पैदावार के लिए है। जब देश को पैदावार की जरूरत ही न हो, तो उन को सिरे से अपनी खेतियों में जाने का हक़ ही न होना चाहिए तथा जितनी पैदावार की जरूरत हो, बस उसी हद तक किसानों को खेती करनी चाहिए, उस से अधिक नहीं।

इस विचित्र व्याख्या के अनुसार एक तो बांझ मर्द या बांझ पत्नी का आपसी मिलन हराम हो जाता है। दूसरे गर्भ स्थिर हो जाने के बाद दम्पति का सम्भोग उस समय तक के लिए हराम हो जाता है, जब तक फिर एक बच्चे की मांग न उभरे। तीसरे, पति और पत्नी का दाम्पत्य सम्बन्ध भी राज्य के कन्ट्रोल में चला जाता है। जब राज्य एलान कर दे कि अब हमें बच्चों की ज़रूरत नहीं है तो तमाम मर्द अपनी-अपनी पत्नियों से अलग हो जायें और ज्यों ही एक सरकारी एलान छपा कि अब बच्चों की ज़रूरत है, तो तत्काल पतियों और पत्नियों के बीच सम्बन्ध स्थापित हो जाए। फिर सरकार को रिपोर्ट दी जाती रहनी

दूसरी आयत में इस सम्बंध का एक और ध्येय भी वर्णित है और वह सभ्यता की स्थापना है, जिस की नींव पति और पत्नी के परस्पर मिलकर रहने से पड़ती है। यह ध्येय विशिष्ट रूप से मनुष्य के लिए है और मानव की विशिष्ट रचना ही में ऐसी प्रेरणायें उत्पन्न कर दी गई हैं, जो इस ध्येय की पूर्ति के लिए उसे उभारती हैं।

'अल्लाह की रचना' की व्याख्या

अल्लाह ने इस जगत के कारखाने को चलाने के लिए और बहुत से प्रबन्धों के साथ-साथ दो ज़ोरदार प्रबन्ध किए हैं। एक भोजन की प्राप्ति, दूसरे सन्तानोत्पत्ति। भोजन की प्राप्ति का ध्येय यह है कि जो जातियां इस समय जीवित हैं, वे एक नियत समय तक जीवित रह कर इस कारखाने को चलाती रहें। इस के लिए सम्पूर्ण विश्व के पालनहार ने असीम भोजन का प्रबन्ध कर दिया। जीव-शरीर (Organic bodies) में भोजन को प्राप्त करने और उस को अपना अंग बनाने की क्षमता पैदा की और उन में भोजन के प्रति एक नैसर्गिक इच्छा उत्पन्न कर दी जो उन को भोजन प्राप्त करने पर विवश करती है। अगर वह न हो तो सम्पूर्ण जीव-शरीर (भले ही वे

चाहिए कि कितनी महिलायें गर्भवती हो चुकी हैं। अभीष्ट संख्या में गर्भ ठहरते ही सरकार लाल झंडी हिलाएगी और पतियों के लिए पत्नियों के पास जाना वर्जित हो जाएगा।

यह एक 'योजनाबद्ध' चित्र है, जो अभी कम्युनिस्टों को भी नहीं सूझा है और दिलचस्प बात यह है कि इसे भी क़ुरआन ही से खोज निकाल लिया गया। हालांकि अगर दम्पति के लिए 'किसान और खेती' की उपमा को पूर्ण उपमा मान लिया जाये तब भी आज तक किसी बुद्धिमान व्यक्ति की बुद्धि में यह विचार कभी नहीं आया है कि बीज डालने के बाद किसान के लिए खेती में जाना हराम हो जाता है।

पेड़-पौधे हों, पशु हों या मनुष्य) विनष्ट हो जायें और इस संसार रूपी कारखाने में कोई छवि शेष न रहे। परन्तु दैवी-प्रकृति के अनुसार व्यक्तियों के जीवित रहने की अपेक्षा मानव-जाति एवं जीवों का जीवन सर्वाधिक महत्व रखता है। क्योंकि व्यक्तियों के लिए जीवन की एक अति अल्प अवधि है और इस कारखाने को चलाने के लिए आवश्यक है कि व्यक्तियों के समाप्त होने से पहले अन्य व्यक्ति उन का स्थान लेने के लिए पैदा हो जायें। इस दूसरी उत्तम एवंश्रेष्ठ आवश्यकता की पूर्ति क लिए प्रकृति ने संतानोत्पत्ति का प्रवन्ध किया है। मानव-जाति में नर और मादा का विभाजन, नर और मादा के शरीरों की पृथक बनावट, दोनों में एक-दूसरे के प्रति अभिरुचि और दाम्पत्य जीवन के लिए दोनों में एक प्रवल इच्छा का मौजूद होना, यह सभी कुछ इसी उद्देश्य के लिए है कि दोनों मिल कर अपनी मौत से पहले अपने जैसे व्यक्ति अल्लाह के इस कारखाने को चलाने के लिए पैदा कर दें। अगर यह उद्देश्य न होता, तो सिरे से नर और मादा या स्त्री और पुरुष की पृथक जातियों को उत्पन्न करने की आवश्यकता ही न थी।

फिर देखिए कि जो जातियां अधिक सन्तान उत्पन्न करती हैं, उनमें प्रकृति ने सन्तान के प्रति प्रेम की कोई विशेष भावना उत्पन्न नहीं की कि वे अपने बच्चों की देख-रेख करें। इसलिए कि वे जातियां केवल अपनी सन्तानों की अधिकता के वल पर चलती रहती हैं, परन्तु जिन जातियों की सन्तान कम होती है, उन में सन्तान के प्रति प्रेम अधिक पैदा किया गया है और माता-पिता को विवश किया गया है कि वे एक लम्बी मुद्दत तक अपनी सन्तान की देख-रेख करें, यहां तक कि वे स्वयं अपनी रक्षा के योग्य हो जायें। इस मामले में मनुष्य का वच्चा सब से अधिक कमजोर होता है और लम्बी मुद्दत तक माता-पिता की देख-रेख पर आश्रित रहता है। अन्य जीवधारियों में काम-प्रवृत्ति या तो मौसमी होती है, या नैसर्गिक अपेक्षाओं के

अनुसार सीमित होती है। परन्तु मनुष्य में यह भावना न तो मौसमी होती है और न ही प्रकृति ने उस को सीमित किया है, इसलिए मानव-जाति में स्त्री और पुरुष एक-दूसरे से स्थाई सम्बन्ध रखने पर वाध्य हैं। यही दोनों चीजें मनुष्य को प्राकृतिक रूप से संस्कृति एवं सभ्यता से सम्बद्ध करती हैं। यहीं से घर की नींव पड़ती है और घर से कुटुम्ब, और कुटुम्ब से क़वीले वनते हैं और अन्ततः इसी आधार पर सभ्यता की इमारत क़ायम होती है।

इस के बाद मानव-शरीर की वनावट पर ध्यान दीजिए। जीव-शास्त्र (Biology) के अध्ययन से हम को मालूम होता है कि मनुष्य के शरीर की वनावट में व्यक्तिगत कल्याण पर जातीय कल्याण को प्रधानता दी गई है और मनुष्य को जो कुछ दिया गया है, वह उसके व्यक्तिगत जीवन से अधिक उस के जातीय जीवन के कल्याण के लिए है। मानव-शरीर में उस की लैंगिक ग्रंथियां (Sexual Glands) सर्वाधिक सेवन करती हैं। ये ग्रंथियां एक ओर मनुष्य के शरीर को जीवन-जल (Harmone) एकत्र करती हैं, जो उन में, सौन्दर्य एवं छवि, कान्ति एवं जाग्रति, बुद्धिमत्ता एयं चतुराई, ऊर्जा एवं कार्यशक्ति उत्पन्न करता है और दूसरी ओर यही ग्रंथियां मनुष्य में सन्तानोत्पत्ति की शक्ति पैदा करती हैं जो स्त्री और पुरुष को सम्भोग के लिए परस्पर मिलने पर वाध्य करती है। जिस उम्र में मनुष्य जातीय सेवा के लिए तैयार होता है, वही समय उस के यौवन-सौंदर्य और कार्य का भी होता है और जव वह जातीय सेवा के योग्य नहीं होता, वही समय उस की दुर्बलता एवं बुढ़ापे का होता है। दाम्पत्य क्रिया-शक्ति का दुर्बल होना ही वास्तव में मनुष्य के लिए मृत्यु का सन्देश होता है। अगर मनुष्य के शरीर से उस की लैंगिक ग्रंथियां निकाल दी जायें, तो जिस प्रकार वह जातीय सेवा के योग्य नहीं होता, उसी प्रकार वैयक्तिक सेवा के लिए भी उस की योग्यता वहुत कम हो जाती है, इसलिए कि इन ग्रंथियों के विना उसकी मानसिक

तथा शारीरिक शक्तियां अत्यन्त निःशक्ति हो जाती हैं।

नारी के शरीर में जातीय कल्याण की सेवा को पुरुष से अधिक महत्व दिया गया है। मालूम ऐसा होता है कि नारी के शरीर की सारी मशीन ही इस ध्येय के लिए बनाई गई है कि वह जाति के जीवन को स्थाई बनाए रखने की सेवा करे। वह जब अपने यौवन को पहुंचती है, तो मासिक धर्म आरम्भ हो जाता है, जो प्रति मास उस को गर्भवती होने के लिए तैयार करता रहता है। फिर जब गर्भवती हो जाती है तो उस की सम्पूर्ण शारीरिक व्यवस्था में एक क्रान्ति उत्पन्न हो जाती है। बच्चे का हित उस के पूरे शरीर पर शासन करने लगता है। उस की शक्ति का केवल उतना भाग उस के लिए छोड़ दिया जाता है, जितना उसके जीवन के लिए अनिवार्य है। शेष सम्पूर्ण शक्ति बच्चे के पालन-पोषण में लग जाती है। यही चीज है जो स्त्री की प्रकृति में प्रेम, त्याग उत्पन्न करती है, इसीलिए पितृत्व का सम्बन्ध इतना गहरा नहीं है जितना मातृत्व का सम्बन्ध है। प्रसव के बाद नारी के शरीर में एक दूसरी क्रान्ति आती है। जो उसे दूध पिलाने के लिए तैयार करती है, इस समय दूध की ग्रंथियां माता के रक्त से सर्वोत्तम भाग प्राप्त कर के बच्चे के लिए दूध एकत्र करती हैं। और यहां ईश्वरीय-प्रकृति फिर नारी को जातीय कल्याण के लिए त्याग पर विवश करती है। दूध पिलाने की क्रिया के बाद नारी का शरीर फिर से एक दूसरे गर्भ के लिए तैयार किया जाता है और यह क्रम, उस समय तक चलता रहता है, जब तक वह इस जातीय सेवा के लिए तैयार रहता है। जहां उस की यह क्षमता समाप्त हुई और उस का क़दम मौत की ओर बढ़ा, वृद्धावस्था के आरम्भ होते ही उस का सौन्दर्य एवं उस की छवि समाप्त हो जाती है। उसकी कोमलता, मधुरता एवं आकर्षण क्षीण हो जाता है और उस के लिए शरीरिक रोगों तथा कामना सम्बन्धी निराशा के एक ऐसे युग का आरम्भ होता है जो केवल मौत के साथ ही समाप्त होता है। इस से ज्ञात

हुआ कि नारी के लिए सर्वोत्तम युग वह है जब वह जाति की सेवा के लिए जीती है और जब वह अपने लिए जीती है तो बुरी तरह जीती है। इस विषय पर एक रूसी लेखक आन्तन नेमिलाफ़ (Anton Namilove) ने एक सर्वोत्तम पुस्तक लिखी है जिस का नाम (Biological Tragedy of woman) है। सन १९३२ में इस का अंग्रेज़ी अनुवाद लंदन से प्रकाशित हुआ है। इस के अध्ययन से मालूम होता है कि नारी का जन्म ही जाति-जीवन की सेवा के लिए हुआ है। यही वास्तविकता दूसरे शोधकों एवं विशेषज्ञों ने भी व्यक्त की है, जैसे नोबुल प्राइज प्राप्त लेखक डाक्टर एलेक्सिज़ कारेल (Dr. Alexis Carrel) अपनी पुस्तक Man, the unknown' में इसी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हुए कहता है कि:—

'औरत के लिए सन्तानोत्पत्ति-कर्त्तव्य जो महत्व रखते हैं, उनकी अभी तक चेतना नहीं पैदा हुई है। इस कर्तव्य का निभाना औरत की आदर्श पूर्णता के लिए अनिवार्य है। पर यह एक मूर्खतापूर्ण कार्य है कि औरतों को सन्तानोत्पति और प्रसव से उदासीन कर दिया जाए।'

एक प्रसिद्ध यौन-मनोविज्ञान विशेषज्ञ डाक्टर आस्वाल्ड श्वार्ज अपनी पुस्तक यौन-मनोविज्ञान (दि साइकोलोजी आव सेक्स) में लिखता है कि—

'यौन-भावना आख़िर किस चीज़ की सूचक है और किस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए है? यह बात कि इसका सम्बंध नस्ल बढ़ाने से है, बिल्कुल स्पष्ट है, जीव-विज्ञान (Biology) इस मामले को समझने में हमारी सहायता करता है। यह एक प्रामाणिक जैविक नियम है कि शरीर का हर अंग अपना प्रमुख कर्तव्य पूरा करना चाहता है और उस काम को पूरा करना चाहता है जो प्रकृति ने उस के सुपुर्द किया है तथा यह कि अगर उसे अपना काम करने से रोक दिया जाए तो निश्चय ही उलझनें और कठिनाइयां पैदा होकर रहती हैं। औरत

के शरीर का बड़ा भाग बनाया ही गया है, गर्भ धारण करने के लिए और सन्तान उत्पन्न करने के लिए। अगर एक औरत को अपनी शारीरिक व मानसिक व्यवस्था की इस अपेक्षा को पूरा करने से रोका जाएगा तो वह थकन और पराजय का शिकार हो जाएगी। इस के विपरीत मां बनने में वह एक नया सौन्दर्य एक आध्यात्मिक विकास—का अनुभव करती है जो इस शारीरिक थकन पर हावी हो जाता है जिस से (प्रसव के कारण) औरत दो-चार होती है।'

पृ० १७

यही लेखक आगे लिखता है—

'हमारे शरीर का हर अंग काम करना चाहता है और किसी अंग को भी अपने कर्तव्य को पूरा करने से रोका जाएगा तो पूरी व्यवस्था का संतुलन ही समाप्त हो जाएगा। एक औरत को संतान की जरूरत केवल इसी कारण नहीं है कि उस के मातृ-स्वभाव की मांग है या यह कि यह सेवा अंजाम देने को वह ऊपर से थोपे हुए एक नैतिक विधान के आधार पर अपना कर्तव्य समझती है, बल्कि सच तो यह है कि उसे इसकी ज़रूरत इसलिए है कि उसकी शारीरिक व्यवस्था बनी ही इस काम के लिए है। अगर उसे अपने शरीर के इस रचना-उद्देश्य ही के पूरा करने से वंचित रखा जाएगा तो उस का पूरा व्यक्तित्व अभाव, पराजय और और आनन्दहीनता से प्रभावित होगा।'

इस वार्ता से क़ुरआन मजीद के इस कथन की वास्तविकता अच्छी तरह मालूम हो जाती है कि औरत और मर्द के बीच दाम्पत्य सम्बन्ध पैदा करने से प्रकृति का मूल उद्देश्य मानव-जाति की स्थापना है और उस के साथ दूसरा उद्देश्य यह है कि मनुष्य पारिवारिक जीवन (Family Life) को अपना कर के संस्कृति की नीव रखे। अल्लाह ने औरत और मर्द के मध्य जो आकर्षण रखा है और इन दोनों के दाम्पत्य-सम्बन्ध में जो स्वाद उत्पन्न किया है, वह केवल

इस लिए है कि मनुष्य अपनी नैसर्गिक अभिरुचि से इन उद्देश्यों को पूरा करे परन्तु जो व्यक्ति केवल इस स्वाद को प्राप्त करना चाहता है और इन उद्देश्यों की सेवा करने से इंकार करता है, वह निश्चय ही अल्लाह की रचना को बदलने का प्रयास करता है। वह इन इन्द्रियों और इन शक्तियों को जो अल्लाह ने मानव-जाति की स्थापना के लिए प्रदान की हैं, उन के मूल उद्देश्य के प्रतिकूल केवल अपनी मनोकामनाओं के लिए प्रयोग करता है। इसका उदाहरण उस व्यक्ति का-सा है जो केवल ज़ुबान के स्वाद के लिए अच्छे-अच्छे भोजन के निवाले मुंह में चबाए, परन्तु गले से नीचे उतारने के बजाए उन को थूक दे। जिस प्रकार ऐसा व्यक्ति आत्महत्या का अपराधी सिद्ध होता है, उसी प्रकार वह व्यक्ति जो दाम्पत्य सम्बन्ध से केवल स्वाद प्राप्त करता है और नस्ल की बक़ा के उद्देश्य को पूरा नहीं होने देता, नस्ल की हत्या का अपराध करता है। यही नहीं, बल्कि मैं तो यहां तक कहूंगा कि वह प्रकृति के साथ छल कर रहा है। प्रकृति ने इस क्रिया में जो स्वाद रखा है, वह वास्तव में मुआवज़ा है उस सेवा का जो प्रकृति के एक उद्देश्य को पूरा करने के लिए वह बजा लाता है। परन्तु यह व्यक्ति मुआवज़ा तो पूरा ले लेता है और सेवा करने से इंकार कर देता है, क्या यह छल तथा धोखा देही नहीं है।

—o—

हानियाँ

आइए ! अब हम देखें कि जो लोग प्रकृति के साथ यह छल-कपट करते हैं, क्या प्रकृति उन को दण्ड दिए बिना छोड़ देती है या उनको कुछ दण्ड भी देती है ? पवित्र क़ुरआन कहता है कि इस का दण्ड निश्चय ही दिया जाता है और वह दण्ड यह है कि ऐसे लोग स्वयं अपने आपको नुक़्सानों में डाल देते हैं—

'वे लोग घाटे में पड़ गए, जिन्होंने अपनी संतान की, अज्ञानतावश बिना समझे-बूझे हत्या की और उस नेमत को जिसे अल्लाह ने उनको दिया था, अल्लाह पर झूठ बांध कर अपने ऊपर हराम कर लिया ।"[1]

(६ : १४०)

---

१. प्राचीन टीकाकारों ने 'हर्रमू मा र-ज़-क़हुमुल्लाह' (उस नेमत को जो अल्लाह ने उन को दिया था, अपने ऊपर हराम कर लिया) का तात्पर्य केवल हलाल भोजन को हराम कर लेने से लिया है। इसलिए कि उनके समय में बर्थ कंट्रोल के आन्दोलन का कोई अस्तित्व नहीं था। परन्तु अल्लाह ने, जिस का ज्ञान उन समस्त वस्तुओं पर आच्छादित है, जो हो चुकी हैं और जो होने वाली हैं, ऐसे बहुअर्थी शब्द प्रयुक्त किए हैं जो केवल हलाल भोजन को हराम बना देने ही को नहीं, बल्कि हर उस नेमत को हराम बनाने पर आच्छादित हैं, जो अल्लाह की ओर से प्रदान की जाती हैं और चूंकि यहां सन्तानों की हत्या के तुरन्त बाद रोज़ी के हराम करने का वर्णन किया गया है, इसलिए इसका स्पष्ट अर्थ यह हैं कि जिस प्रकार वे लोग टोटे में हैं, उसी प्रकार वे लोग टोटे में हैं जो सन्तान के उत्पादन ही को अपने ऊपर हराम कर लेते हैं।

इस आयत में संतान की हत्या के साथ संतानोत्पत्ति को ईश्वरीय नेमत को अपने लिए हराम कर लेने (अर्थात बर्थ कंट्रोल) का परिणाम भी 'घाटा' बताया गया है। देखना चाहिए कि यह घाटा किन-किन शक्लों में प्रकट होता है।

१. शरीर एवं प्राण की क्षति

संतानोत्पत्ति का मामला चूंकि प्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के शरीर एवं प्राण से सम्बन्ध रखता है, इसलिए हम को सब से पहले बर्थ कंट्रोल के उन प्रभावों की खोज करनी चाहिए जो मनुष्य के प्राण एवं शरीर पर प्रभाव डालते हैं।

हम उपरोक्त पंक्तियों में उल्लेख कर चुके हैं कि विभिन्न जीवधारियों में नर व मादा की दो अलग-अलग जातियां बनाने से प्रकृति का मूल उद्देश्य ही संतानोत्पत्ति एवं जाति-रक्षा है। यह भी बताया जा चुका है कि नर व मादा की प्रकृति ही इस की अपेक्षा करती है कि वे संतान उत्पन्न करें और विशेष रूप से मानव-जाति में तो नारी में प्राकृतिक रूप से संतान की इच्छा तथा उससे प्रेम की प्रबल भावना पैदा की गई है और यह भी आपको ज्ञात हो चुका है कि मनुष्य के शरीर में उसकी लैंगिक ग्रंथियों का कितना प्रबल तथा गहरा प्रभाव है और किस प्रकार ये ग्रंथियां मनुष्य को जाति की सेवा पर उभारने और उस में छवि, ऊर्जा, व्यावहारिक कार्य-क्षमता तथा मानसिक शक्ति पैदा करने के दुहरे कर्तव्य पूर्ण करती हैं। मुख्य रूप से नारी के संबंध में आपको ज्ञात हो चुका है कि उस के शरीर की पूर्ण मशीन ही मानव-जाति की स्थापना की सेवा के लिए ही बनाई गई है। उस की रचना का सर्वाधिक महत्वपूर्ण ध्येय यही है और इसलिए उसकी प्रकृति ही उससे इस सेवा की मांग करती है। इन तमाम बातों को सामने रख कर आप की बुद्धि स्वयं इस परिणाम पर पहुंच सकती है कि जब मनुष्य दाम्पत्य सम्बन्ध से केवल स्वाद

प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा और इस ध्येय को पूरा करने से इंकार कर देगा जिस की मांग उस के शरीर के रोम-रोम में इतनी गहराई के साथ भर दी गई है, तो संभव नहीं कि उसकी स्नायुविक व्यवस्था पर और उस की लैंगिक ग्रंथियों की क्रिया-शक्ति पर इस कार्य के कुप्रभाव न पड़ें और इन प्रभावों से उसका प्राण सुरक्षित रह सके।

अनुभव इस बौद्धिक निष्कर्ष का समर्थन करता है। सन १९२७ में ग्रेट ब्रिटेन के नेशनल बर्थ रेट कमीशन ने बर्थ कंट्रोल की समस्या पर डाक्टरी दृष्टि से जो रिपोर्ट प्रकाशित की थी, उस में लिखा है—

'गर्भ न होने के भय से अपनाए गए अन्य साधनों के प्रयोग से पुरुषों की शारीरिक व्यवस्था में अशांति उत्पन्न हो सकती है, सामायिक रूप से उन में मर्दाना कमजोरी या नामर्दी भी पैदा हो सकती है, परन्तु सामूहिक रूप से कहा जा सकता है कि इन साधनों का कोई अधिक कुप्रभाव पुरुष के स्वास्थ्य पर नहीं पड़ता। हां, इस बात का सदैव खतरा रहता है कि गर्भ-निषिद्ध साधनों के प्रयोग से जब पुरुष को दाम्पत्य सम्बन्ध में अपनी इच्छाओं को, पूर्ण शांति प्राप्त न होगी तो उस के पारिवारिक जीवन की प्रसन्नतायें समाप्त हो जायेंगी और वह अन्य साधनों से सन्तोष प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा जो उस के स्वास्थ्य को विनष्ट कर देंगे और सम्भव है कि उसे घातक महामारियों में फंसा दें।' स्त्रियों के सम्बन्ध में कमीशन ने यह मत प्रकट किया कि—

'जहां डाक्टरी दृष्टि से गर्भ-निषेध अनिवार्य हो, जहां बच्चों का उत्पादन हद से अधिक हो, वहां तो गर्भ-निषेध के उपाय नारी के स्वास्थ्य पर निस्सन्देह अच्छा प्रभाव डालते हैं। परन्तु जहां इन में से कोई आवश्यकता न हो, वहां गर्भ-निषेध के उपायों का यह फल होता है कि नारी की स्नायुविक व्यवस्था में घोर अशांति उत्पन्न हो जाती है। उस में क्रोध और चिड़चिड़ापन पैदा हो जाता है। जब उस की भावनाओं को सन्तोष नहीं होता तो पति के साथ उस के सम्बन्ध

ख़राब हो जाते हैं। विशेषत: ये परिणाम उन लोगों में अधिक देखे गए हैं, जो अज़्ल[1] 'सम्भोग-पार्थक्य' का तरीक़ा अपनाते हैं।'

डाक्टर मेरी शारलीब (Da. Mary Scharlieb) अपने चालीस वर्षीय अनुभवों के परिणामों का इन शब्दों में उल्लेख करते हैं—

'वर्थ कंट्रोल के तरीक़े, भले ही वे गर्भाशय पर पहनने की खोलियां हों या कीटाणु-विनाशक औषधियां अथवा रबड़ की टोपियां और लिफ़ाफ़े या दूसरे तरीक़े, बहरहाल इन के प्रयोग से कोई तात्कालिक क्षति तो नहीं होती, पर एक समय तक उन का प्रयोग करते रहने का फल यह होता है कि अधेड़ उम्र तक पहुंचते-पहुंचते औरत में चेता-अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है। मलीनता, प्रफुल्लता का अभाव, खिन्नता, तबियत का चिड़चिड़ापन तथा उत्तेजनाओं का आधिक्य, दु:खग्रस्त विचारों की भीड़, अनिद्रा, उद्विग्नता, दिल व दिमाग़ की कमज़ोरी, रुधिर-प्रवाह की कमी, हाथ-पांव सुन्न हो जाना, शरीर में कहीं-कहीं टीसें उठना, मासिक धर्म की अनियमितता, ये इन तरीक़ों के अनिवार्य प्रभाव हैं।'

कुछ अन्य डाक्टरों ने उल्लेख किया है कि गर्भाशय-पात (Falling of the womb) स्मरण शक्ति का दोष और कभी-कभी ख़ब्त, पागलपन और उन्माद जैसी व्याधियां भी इन तरीक़ों के इस्तेमाल से पैदा हो जाती हैं और यह कि अधिक समय तक जिस स्त्री को संतान नहीं होती, उस की सन्तानोत्पत्ति-इन्द्रियों में ऐसे परिवर्तन होते हैं, जिनसे उस की सन्तानोत्पत्ति की क्षमता प्रभावित होती है और कभी वह गर्भवती हो तो उस को गर्भ-काल और प्रसव में अधिक दुख

---

१. अज़्ल का अर्थ यह है कि सम्भोग के समय जब पुरुष मनी के गिरने के क़रीब पहुंचे, तो लिंग बाहर निकाल ले और अपनी मनी औरत के भीतर न जाने दे।

उठाना पड़ता है ।

प्रो० ल्युनार्ड हेल एम० बी० अपने एक निबन्ध में लिखता है—

'युवावस्था के समय नारी के शरीर में जितने परिवर्तन होते हैं, सब सन्तानोत्पत्ति के उद्देश्य से होते हैं। मासिक धर्म के दौरे इसी उद्देश्य के लिए होते हैं कि बार-बार गर्भवती होने के लिए नारी को तैयार करें। एक अविवाहित स्त्री या ऐसी स्त्री में जो अपने आप को गर्भवती होने से रोकती है, मासिक धर्म का प्रत्येक दौरा उन समस्त अवयवों की निराशा के साथ समाप्त होता है जो इस दौरे में गर्भ के लिए तैयार किए गए थे। इस नैसर्गिक अपेक्षा के पूर्ण न होने और सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी अवयवों के अकर्मणय रहने का अनिवार्य परिणाम यह है कि सन्तान उत्पन्न न हो। मासिक धर्म कष्ट तथा अनियमित रूप से आने लगें। छातियां ढलक जायें। मुख की शोभा तथा सौन्दर्य समाप्त हो जाए और स्वभाव में उत्तेजना अथवा मलीनता उत्पन्न हो जाए। यह याद रखना चाहिए कि मानव-जीवन में लैंगिक ग्रंथियों का अधिक प्रभाव है। जो ग्रंथियां दाम्पत्य शक्ति उत्पन्न करती हैं, वही मनुष्य में शक्ति, सौन्दर्य तथा तेजी पैदा करती हैं। इन्हीं से मनुष्य में आचरण के बहुत से गुण उत्पन्न होते हैं। यदि इन ग्रंथियों के नैसर्गिक उद्देश्य को पूरा न किया जाएगा तो ये अपनी अन्तर्गत क्रिया अर्थात शक्ति पहुंचाने की क्रिया को भी छोड़ देंगी। मुख्यत: नारी को गर्भवती होने से रोकना वस्तुत: उस की पूर्ण मशीन को स्थगित तथा निरर्थक बनाना है।'

डा० आज़वाल्ड श्वार्ज़ का मत हम पहले नक़ल कर चुके हैं, जिस

---

१. डा० आर्नल्ड लोरान्ड (Dr. A. Lorand) ने अपनी पुस्तक (Life Shortening habits and Rejuvenation) में गर्भनिषेध उपायों के क्षतिवर्द्धक प्रभावों का अधिक विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है। यह पुस्तक सन १९२२ में फिलाडेल्फिया से प्रकाशित हुइ है।

में वह कहता है कि—

'यह एक प्रामाणिक जैविक नियम है कि शरीर का हर अंग अपना प्रमुख कर्तव्य पूरा करना चाहता है और उस काम को पूरा करना चाहता है जो प्रकृति ने उस के सुपुर्द किया है तथा यह कि अगर उसे अपना काम करने से रोक दिया जाए तो निश्चय ही उलझनें और कठिनाइयां पैदा हो कर रहती हैं। औरत के शरीर का बड़ा भाग बनाया ही गया है गर्भ धारण करने के लिए और सन्तान उत्पन्न करने के लिए। अगर एक औरत को अपनी शारीरिक व मानसिक व्यवस्था की इस अपेक्षा को पूरा करने से रोका जाएगा तो वह थकन और पराजय का शिकार हो जाएगी। इस के विपरीत मां बनने में वह एक नया सौन्दर्य—एक आध्यात्मिक विकास का अनुभव करती है जो इस शारीरिक थकन पर हावी हो जाता है जिससे (प्रसव के कारण) औरत दो-चार होती है।"[1]

यह एक न इन्कार करने योग्य वास्तविकता है कि बर्थ कंट्रोल औरत पर एक खुला अत्याचार है। यह उसे अपनी प्रकृति से संघर्ष-रत कर देता है और उस के नतीजे में उस की पूरी शारीरिक व स्नायुविक व्यवस्था नष्ट-विनष्ट हो जाती है।

एक तो बर्थ कंट्रोल स्वतः मनुष्य की प्राकृतिक व्यवस्था के प्रति एक विद्रोह है और उस की हानियां अपार हैं। फिर बर्थ कंट्रोल के जो तरीक़े अपनाए जाते हैं वे मर्द और औरत दोनों पर और मुख्य रूप से औरत पर ऐसे प्रभाव छोड़ते हैं जो उस के पूरे जीवन को प्रभावित कर देते और उस के व्यक्तित्व की चूलें हिला देते हैं।

बर्थ कंट्रोल का बहुत पुराना और बड़ा महत्वपूर्ण साधन गर्भ-पात (Abortion) है। गर्भ-निरोधक साधनों (Contraceptives) के विकास के बावजूद आज भी संसार में इस पर अधिकता के साथ अमल हो

---

१. दी साइकालोजी आव् सेक्स, लन्दन, १८५१, पृ० १७।

रहा है और कुछ देशों में केवल गर्भ-पात ही के लिए नियमित रूप से क्लब और मतब (औषधालय) क़ायम हैं। इस का कारण यह है कि गर्भ-निरोधक साधनों में से कोई भी सौ प्रतिशत सफल नहीं है। इस के इस्तेमाल के बावजूद कभी-कभी गर्भ स्थिर हो जाता है और अपनी नस्ल से ऊबे लोग इस का इलाज यह करते हैं कि पैदा होने से पहले ही उस बच्चे को क़त्ल कर डालते हैं जो उन की इच्छा के विरुद्ध संसार में आना चाहता है। बर्थ कंट्रोल के हामी आम तौर से यह दावा करते हैं कि 'फ़ेमिली प्लानिंग' के कारण गर्भपात में बड़ी कमी आ जाती है। लेकिन वास्तविकता इस के बिल्कुल विपरीत है। अमेरिका में नवीनतम आंकड़ों के अनुसार प्रोफ़ेसर पाल एच. गेबहार्ड (Paul H. Gebhard) कहते हैं कि आज भी ८% औरतें विवाह से पहले और २० से २५ प्रतिशत औरतें विवाह के बाद गर्भ-पात का तरीक़ा अपनाती हैं।[1] जापान में दूसरे युद्ध के बाद अमेरिकी सुप्रीम कमांडर के तत्वावधान में बर्थ कंट्रोल के आंदोलन को बड़े ज़ोर-शोर के साथ प्रसारित किया गया, लेकिन परिस्थितियों का गहन दृष्टि से अध्ययन करने से मालूम होता है कि वहां इस आंदोलन के कारण गर्भ-पात में असाधारण वृद्धि हो गई। १०५० में इस का चलन साढ़े उनतीस प्रतिशत आबादी में था। १९५५ में बढ़कर ५२ प्रतिशत तक पहुंच गया। प्रो० सोवे (Sauvy) के अंदाज़े के मुताबिक़ जापान में हर साल १२ लाख गर्भ-पात होते हैं और अगर अवैध गर्भ-पात को भी ले लिया जाए, (जो २० लाख से कम नहीं) तो संख्या कहीं से कहीं पहुंच जाती है।[2]

जापान के प्रसिद्ध पत्र मेनीची (Mainichi) के आयोजित सर्वे

---

१. गेबहार्ड, पाल एच० प्रेग्मेसी बर्थ एण्ड एबार्शन, न्यूयार्क, १९५८, पृ० ५६ व ११९।

२. मैक कार्मेक' आर्थर पीपुल, स्पेस, फूड, लन्दन, १९६०, पृ० ६७।

के अनुसार जिन परिवारों में बर्थ कंट्रोल पर अमल होता है, उन में गर्भ-पात का तरीक़ा उन परिवारों के मुक़ाबले में ६ गुणा अधिक इस्तेमाल हो रहा है, जिन का अमल इस पर नहीं है।[1]

इंग्लैंड के बारे में रायल कमीशन भी इसी नतीजे पर पहुंचा था कि बर्थ क़ंट्रोल पर अमल करने वाले परिवारों में गर्भ-पात का चलन ८.२७ गुना अधिक है। अमेरिका की प्रिंसटन यूनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर एरियन टुइंबर (Irene B. Taeuber) की व्यापक खोजें भी इसी नतीजे पर पहुंचीं कि गर्भ निरोधक साधनों के आगमन के साथ गर्भ-पात में भी वृद्धि हुई है और अब उस का चलन सिर्फ़ विवाहित महिलाओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि २० वर्ष से कम उम्र की लड़कियों में भी यह आम है।[2]

और इस बात पर औषधि विज्ञान के अधिकतर विशेषज्ञ सहमत हैं कि गर्भ-पात औरत के स्वास्थ्य और उस की व्यवस्था के लिए घातक है। हम यहां सिर्फ़ डाक्टर फ्रेडरिक टासग का मत नक़ल करना ही काफ़ी समझते हैं, जिन्होंने इस विषय पर डाक्टरी जानकारियों का निचोड़ पेश कर दिया है—

'जब गर्भ का उसके पूरा होने से पहले ही पतन कर दिया जाता है, जिसे पारिभाषिक शब्दों में गर्भ-पात (Abortion) कहा जाता है—तो मानव-नस्ल को इस के कारण तीन प्रकार की हानियां सहन करनी पड़ती हैं—

१. मनुष्यों की एक अनजानी तायदाद को संसार में क़दम रखने से पहले ही नष्ट कर दिया जाता है।

२. गर्भपात के साथ-साथ होने वाली माताओं की बड़ी तायदाद मौत के घाट चढ़ जाती है।

---

१. वही, पृ० ६८, नोट नं० १६।

२. मेक कार्मेक के हवाले से, वही पुस्तक पृ० ६७।

३. गर्भपात के कारण बहुत बड़ी संख्या में ऐसे रोगयुक्त (Pathological) प्रभाव पड़ते हैं जो आगामी सन्तानोत्पत्ति की सम्भावनाओं को बुरी तरह आघात पहुंचाते हैं।[1]

गर्भपात के अलावा बर्थ कंट्रोल के दूसरे साधन वे हैं जिन को गर्भ-निरोधक (Contraceptives) कहा जाता है, लेकिन उनके बारे में भी विशेषज्ञों का मत यही है कि—

१. इन में से कोई भी साधन विश्वसनीय नहीं, और

२. कोई एक साधन भी ऐसा नहीं है जो बुरे प्रभाव न छोड़ता हो।

डाक्टर क्लेर फोलसम (Dr. Clair E Folsome) के शब्दों में—

'हमारे पास आज भी कोई ऐसा मालूम, आसान, कम खर्च और अहानिप्रद तरीक़ा नहीं है जिस के द्वारा बर्थ कंट्रोल पर अमल किया जा सके।'[2]

हर गर्भ निरोधक तरीक़े के मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी बड़े विकट हैं और उन के कारण न केवल यह कि मानसिक उलझनें पैदा हो रही हैं, बल्कि यौन-क्रिया के उस स्वाद को वे मिट्टी में मिला देते हैं जो प्रकृति ने नस्ल-वृद्धि की इस सेवा के सिलसिले में उस के भीतर

---

1. Thussig Frederick J. The Abortion problem, proceedings of the Conference of National Committee on Maternal Health Baltimore, 1944. P. 39.
2, Folsome Clair : 'Progress in the research for methods of Family Limitations suitable for Agraria Societies in approaches to problems of high Fertility in Agrarian Societies Milkbang Memorial Fund New York, 1952, P. 130

'We have no known harmless Simple as low-cost method today with which we can apply fartility Control.

भर दी है।'[1]

डाक्टर सत्यावती अपनी पुस्तक फ़ैमिली प्लानिंग (Family Planning) में इस वास्तविकता का उल्लेख यों करती हैं—

'कुछ शक्लों में बर्थ कंट्रोल के परिणाम खतरनाक निकलते हैं। हृदय की शांति जाती रहती है। स्नायुविक बेचैनी रहने लगती है। मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है। औरतें बांझ हो जाती हैं और मर्दों का मर्दानापन जाता रहता है।'[2]

आजकल बर्थ कंट्रोल की गोली (Contraceptive Pills) का बड़ा शोर है, लेकिन उसके हानिप्रद प्रभाव भी देखने वाली आंखों से छिपे नहीं और इसे बिल्कुल अहानिप्रद बताना बड़ी बद-दयानती है। मेक कार्नेक के शब्द हैं—

'यद्यपि यह अभी कुछ समय से पहले है कि इस गोली के बारे में बिल्कुल विश्वसनीय डाक्टरी मत दिया जाए, लेकिन यह बहरहाल स्पष्ट है कि गर्भ निरोध का यह एक निश्चयात्मक और विश्वसनीय साधन नहीं हो सकता और यह कि बाद में इसके दुष्प्रभाव औरत के जीवन पर भी पड़ते हैं। यह गोली वीर्य्य-वृद्धि (Ovulation) को रोक कर अपना अमल करती है और इस तरह अनिवार्य है कि औरत के मासिक धर्म (Menstrual Cycle) में बाधा डाले। जब स्थिति यह है तो यह बात किसी प्रकार नहीं मानी जा सकती कि औरत की इतनी महत्वपूर्ण ग्रंथि व्यवस्था में परिवर्तन बिना किसी अन्य अप्रिय प्रभाव के सम्भव है।'[3]

इन गोलियों के बारे में ब्रिटिश इन्साइक्लोपेडिया आव् मेडिकल प्रैक्टिस के परिशिष्ट में हम को एक और प्रमाणित राय मिली है।

---

१. देखिए मेक मार्मेक, वही पुस्तक पृ० ७४।

२. पाकिस्तान टाइम्ज, २१ सितम्बर १९५९, पृ० ५।

३. वही पृ० ८१।

डा० जी० आई० सुइयर (G. I. Swyer) यह मत व्यक्त करता है—

'दीर्घ कालीन हानिप्रद प्रभावों की सम्भावनाओं से हम इस समय इंकार नहीं कर सकते। इस तरीक़े के बड़े दोष ये हैं, इस में बीसियों गोलियां बराबर, लगातार और प्रस्तावित योजना के अनुसार इस्तेमाल करनी होती हैं तथा गोलियों को ऊंची क़ीमत[1] और प्रतिकूल प्रभावों का आधिक्य रोगी के लिए इलाज के इस तरीक़े की लोकप्रियता को बहुत कम कर देता है।'[2]

ताजा अख़बारी सूचना यह है कि लंदन के प्रसिद्ध डाक्टर रेनियल ड्यूक्स के मतानुसार बर्थ कंट्रोल की ये गोलियां बड़े खतरनाक नतीजे पैदा करती हैं। इस से सिर चक्कर और स्नायुविक कष्ट ही नहीं, कैंसर (Cancer) जैसे घातक रोग के भी पैदा होने की आशंका है।[3]

यह तो है उन तरीक़ों के हानिप्रद होने की स्थिति। लेकिन खतरों को बर्दाश्त करने के बाद भी यह निश्चित नहीं है कि ये

---

१. अमेरिका में एक गोली का मूल्य ५० सेन्ट अर्थात लगभग सवा दो रुपए है जो हमारे देश तक पहुंच कर और भी मंहगी हो जाएगी। हर व्यक्ति को इन गोलियों पर हर वर्ष १२० डालर अर्थात ५४० रुपए ख़र्च करने होंगे। हमारे देश में जहां प्रति व्यक्ति आमदनी औसतन ढाई सौ रुपए है, यह मंहगा नुस्ख़ा आख़िर कितने लोग इस्तेमाल कर सकते हैं? अगर हम अपने देश की कम से कम २० लाख औरतों को ये गोलियां इस्तेमाल करायें तो हमें इस मद पर २ अरब ७० करोड़ रुपए वार्षिक ख़र्च करने होंगे।

२. डा० जी० आइ० सुयर, कन्ट्रासेप्शन १ फिज्योलोजी आव ओवुलेशन विद स्पेशल रेफ़रेन्स टू ओरल कन्ट्रासेप्शन इन ब्रिटिश इन्साईक्लोपेडिया आव मेडिकल प्रैक्टिस इंटेरिम सप्लिमेंट, जुलाई १६५६, पृष्ठ १-२।

३. सिदक़े जदीद, लखनऊ १६ नवम्बर १६६०।

सचमुच गर्भ निरोधक सिद्ध होंगे, इसलिए कि इंग्लिश कमीशन आन स्टेरिलाइजेशन (Commission on Sterilisation) की रिपोर्ट के शब्दों में, 'गर्भ निरोधक साधन परेशान करने वाले और अविश्वसनीय हैं।' स्वीडन में डाक्टर एकबाल्ड (Dr. Ekbald) के अनुभवों से भी यही मालूम होता है कि ५७६ औरतों में से ३८ प्रतिशत को गर्भ-निरोधक साधनों के इस्तेमाल करने के बावजूद गर्भ ठहर गया[1] अर्थात इस प्रकार की हानियों को सहन करने के बाद भी आप पूरे विश्वास के साथ सन्तान के खतरे से सुरक्षित नहीं हो सकते।

इन हानियों के अलावा एक बड़ी हानि यह भी है कि बर्थ कंट्रोल के तरीक़ों को इस्तेमाल कर के जब गर्भ ठहरने से बेफ़िक्री हो जाती है तो काम-वासना वश में नहीं रहती, औरत पर मर्द की काम संबंधी मांगें सन्तुलन की सीमा से भी आगे बढ़ जाती हैं और दम्पतियों के मध्य विशुद्ध पाश्विक सम्बन्ध बाक़ी रह जाता है जिस में एक मात्र काम-वासनाओं ही का आधिपत्य होता है। यह चीज़ स्वास्थ्य और चरित्र दोनों के लिए अत्यधिक क्षति-वर्द्धक है—

डाक्टर फ़ास्टर लिखता है—

'मर्द के दाम्पत्य की दिशा अगर पूरी तरह काम-वासना की ओर फिर जाए और उसे वश में रखने के लिए कोई रोक न रहे तो इस से जो हालत पैदा होगी, वह अपनी अपवित्रता, अधमता और विषाक्त परिणामों में हर उस हानि से कहीं अधिक होगी जो अगणित बच्चे पैदा करने से उत्पन्न हो जाती है।'

२. सामाजिक हानि

पारिवारिक जीवन में बर्थ कंट्रोल के जो हानिकारक प्रभाव पड़ते

१. इकबाल्ड मार्टिन 'इंडयूस्ड एबोर्शन आन साइकिक ग्राउंडस', स्टाक होम १८५५, पृ० १८-१६-६६,१०२।

हैं उन की ओर ऊपर गौण रूप से इशारा किया जा चुका है। पति-पत्नी के ताल्लुक़ात पर इस का पहला और तात्कालिक प्रभाव यह पड़ता है कि जब दोनों की प्राकृतिक मांगों की पूर्ति नहीं होती तो एक अनजाने रूप से दोनों में एक प्रकार का अजनबीपन पैदा होने लगता है, जो बाद में दया व प्रेम का अभाव, कठोरता और अन्त में घृणा व उदासीनता तक पहुंच जाता है। मुख्य रूप से औरत में इन तरीक़ों के लगातार इस्तेमाल से जो स्नायुविक आवेश और चिड़-चिड़ापन पैदा होता है, वह गार्हस्थ्य जीवन की सारी ख़ुशियों पर पानी फेर देता है।

लेकिन इस के अलावा एक और भी बड़ी हानि है जो भौतिक कारणों से अधिक, आध्यात्मिक कारणों से होती है। शारीरिक हैसियत से तो औरत और मर्द का संबंध केवल एक पाश्विक संबंध है जैसा कि जानवरों में होता है, लेकिन जो चीज़ इस संबंध को एक उच्च श्रेणी का आध्यात्मिक संबंध बनाती है और उसे दया-प्रेम-भाई चारे के एक गहरे संबंध में परिवर्तित कर देती है, वह संतान की शिक्षा-दीक्षा में दोनों का आपसी सहयोग है। बर्थ कंट्रोल इस प्रबल आध्यात्मिक संबंध को वजूद में आने से रोक देता है। इस का अनिवार्य फल यह होता है कि औरत और मर्द के बीच कोई गहरा और दृढ़ संबध नहीं पैदा हो पाता और उन के संबंध पाश्विकता से आगे नहीं बढ़ने पाते। इस पाश्विकता की विशेषता यह है कि कुछ मुद्दत तक एक-दूसरे से आनन्दित होने के बाद दोनों का दिल एक-दूसरे से भर जाता है। फिर इस पाश्विकता के संबंध में हर मर्द व औरत के लिए हर मर्द व औरत समान है। इस लिए कोई कारण नहीं कि एक जोड़ा सदैव के लिए एक-दूसरे का होकर रह जाए। वह सन्तान ही है जो दम्पति को एक दूसरे के साथ सदैव के लिए जुड़े रहने पर मजबूर कर देती है। जब वह न हो तो उनका आपस में जुड़ कर रहना बड़ा कठिन हो

जाता है। यही कारण है कि यूरोप और अमेरिका में दाम्पत्य संबंध अति कमज़ोर होते चले जा रहे हैं और बर्थ कंट्रोल के आंदोलन के साथ-साथ तलाक़ का चलन इस तेज़ी के साथ बढ़ रहा है कि वास्तव में वहां पारिवारिक व्यवस्था का सारा ताना-बाना ही बिखरता नज़र आ रहा है।

३. नैतिक हानि

चरित्र पर बर्थ कंट्रोल के हानिकारक प्रभाव कई कारणों से प्रकट होते हैं—

१. औरत और मर्द को ज़िना का लाइसेंस मिल जाता है। हरामी सन्तानों के जन्म से आचरण पर बदनामी व ज़िल्लत का कुरूप धब्बा लग जाने का कोई भय बाक़ी नहीं रहता। इसलिए नाजायज़ ताल्लुक़ात पैदा करने में दोनों को प्रोत्साहन मिलता है।[1]

२. रसास्वादन और कामुकता हद से ज़्यादा बढ़ जाती है और इससे एक सामान्य नैतिक गिरावट महामारी की तरह फैल जाती है।

३. जिन दम्पतियों के यहां सन्तान नहीं होती, उन में बहुत से नैतिक गुण पैदा ही नहीं हो पाते, जो केवल माता के प्रशिक्षण से ही पैदा होते हैं। यह एक तथ्य है कि जिस प्रक़ार माता-पिता बच्चे को

---

१. डाक्टर वेस्टर मार्क अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पश्चिमी देशों में विवाह का भविष्य' में इसे स्वीकार करता है कि —
'गर्भ निरोधक साधनों का ज्ञान, हो सकता है कि विवाह-दर को बढ़ा दे, लेकिन उस के साथ-साथ (यह भी एक वास्तविकता है कि) यह विवाह से परे (Extra Matrimonial Inter course) यौन-सम्बन्धों के मौक़ों को भी आम कर देता है, जिन का आम चलन (Great Frequency) स्वयं हमारे अपने समय में विवाह के अंधेरे भविष्य का एक और प्रतीक समझा जाता है।'

प्रशिक्षित करते हैं, उसी प्रकार बच्चे भी माता-पिता को प्रशिक्षित करते हैं। बच्चों की देख-रेख से माता-पिता में प्रेम, निष्ठा एवं त्याग की भावना उत्पन्न होती है। वे दूरदर्शिता, सहिष्णुता और आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करते हैं। सादा जीवन अपनाने पर मजबूर होते हैं और सिर्फ़ अपने निजी बनाव व सिंगार के पीछे अंधे नहीं हो जाते। बर्थ कंट्रोल इन तमाम नैतिक लाभों का द्वार बन्द कर देता है—

४. वर्थ कंट्रोल से बच्चों का नैतिक प्रशिक्षण अपूर्ण रह जाता है! जिस बच्चे को छोटे और बड़े भाई-बहन के साथ रहने-सहने, खेलने-कूदने और व्यवहार करने का अवसर नहीं मिलता, वह बहुत से उच्च नैतिक गुणों से वंचित हो जाता है। बच्चों की देख-रेख केवल माता-पिता ही नहीं करते, बल्कि वे स्वयं भी एक-दूसरे को प्रशिक्षित करते हैं। उन का आपस में रहना, उन के भीतर मेल-मिलाप, प्रेम, श्रद्धा, त्याग, सहायता एवं सहयोग और बहुत से ऐसे गुण पैदा करता है और वे एक-दूसरे पर आलोचनाएं कर के स्वतः अपने बहुत से नैतिक अवगुणों को दूर कर लेते हैं। जो लोग बर्थ कंट्रोल को इस्तेमाल कर के अपनी औलाद को केवल एक बच्चे तक सीमित कर लेते हैं या दो बच्चे इस प्रकार पैदा करते हैं कि उनमें उम्रों का बहुत बड़ा अन्तर होता है, वे वास्तव में अपनी औलाद को एक उत्तम नैतिक प्रशिक्षण से वंचित कर देते हैं।[1]

---

१. यही नहीं, बल्कि मनोविज्ञान और समाज विज्ञान विशेषज्ञों का गिरोह तो यह राय भी रखता है कि इस के कारण बच्चे का मानसिक व मनोवैज्ञानिक विकास प्रभावित होता है और अगर दो बच्चों के बीच उम्र का बहुत अन्तर हो तो बड़े बच्चे में क़रीबी उम्र का साथी न होने के कारण मानसिक अवरोध (Neurosis) तक पैदा हो जाता है। देखिए, डेविड एम० लेवी की पुस्तक (Maternal over Protection)

४. नस्ली और राष्ट्रीय हानियां

ये तो वे हानियां थीं जो केवल व्यक्तियों को व्यक्तिगत रूप से सहन करनी पड़ती हैं। अब देखिए कि इस आंदोलन के आम चलन से नस्लों और राष्ट्रों को सामूहिक रूप से कितनी अधिक हानियां सहन करनी पड़ती हैं।

मानव-अकाल

मानव-रचना के लिए अल्लाह ने जो ज़बरदस्त इन्तिज़ाम किया है, उस में स्वतः मनुष्य का भाग केवल इतना है कि पुरुष अपना वीर्य्य नारी के शरीर में पहुंचा दे। इस के बाद कोई चीज़ मनुष्य के वश में नहीं है। सब कुछ अल्लाह के निश्चय व संकल्प पर निर्भर है। हर बार जब पुरुष स्त्री से मिलता है तो पुरुष के शरीर से ३०-४० करोड़ जीवित कीटाणु स्त्री के शरीर में प्रवेश करते हैं और स्त्री के शरीर से लाखों अंड-कोष (Egg Cells) निकल कर इन कीटाणुओं से मिलने के लिए दौड़ लगाते हैं। इन कीटाणुओं और इन कोशाओं में से हरेक अलग-अलग वंशीय एवं व्यक्तिगत गुणों का पोषक होता है। इन्हीं में मन्द बुद्धि वाले तथा मूर्ख भी होते हैं और बुद्धिमान एवं नीतिज्ञ भी होते हैं। इन में अरस्तू और इब्ने सीना

न्यूयार्क, १९४३ ई०।

प्रोफ़ेसर आर्नल्ड ग्रीन इस समस्या पर एक दूसरी दृष्टि से रोशनी डालते हुए कहता है कि क़रीबी उम्र के भाइयों और साथियों का अभाव और चीज़ों के साथ-साथ बच्चे को कठिनाइयों में डाल देता है और वह चीख़ने-चिल्लाने या तोड़-फोड़ के कामों में लग जाता है। देखिए लेख (The middle class male child and neurosis, लेखक Arnold W. Green Amodern introduction to Family, सम्पादक नार्मन, डब्ल्यू वेल और इजरावगिल, प्रकाशित लंदन, १९६१, पृ० ५६८।

भी होते हैं, चंगेज़ और नेपोलियन भी, शेक्सपियर और हाफ़िज़ भी, मीर जाफ़र और मीर सादिक़ भी। यह बात मनुष्य के अधिकार में नहीं है कि किसी विशेष गुण वाले कीटाणु को किसी एक गुण वाले अंड-कोशा से मिला कर अपनी इच्छानुसार एक विशेष प्रकार का मनुष्य पैदा कर दे। यहां केवल अल्लाह का निश्चय ही काम करता है और वही निर्णय करता है कि किस समय, किस राष्ट्र में, किस प्रकार के मनुष्य भेजे। इंसान, जो अपने कर्मों के परिणामों को बिल्कुल नहीं जानता, अगर अल्लाह के इस प्रबन्ध में दखल देगा तो उस का उदाहरण बिल्कुल ऐसे ही होगा जैसे कोई आदमी अंधेरे में लकड़ी घुमाए, वह नहीं जानता कि उस की लकड़ी किसी सांप या बिच्छू को मारेगी या किसी मनुष्य का सिर फोड़ेगी या किसी क़ीमती चीज़ को तोड़ फेंकेगी। अधिक संभावना है कि बर्थ कंट्रोल पर अमल करने वाला व्यक्ति अपने राष्ट्र में एक बेहतरीन जनरल या कूटनीतिज्ञ या वैज्ञानिक के जन्म का रोक देने का कारण बन जाए और अपनी हद से गुज़र कर अल्लाह की क्रियाओं में दखल देने की सजा उस को इस रूप में मिले कि उस की नस्ल में मूर्ख अथवा दुराचारी अथवा देश-द्रोही पैदा हों। मुख्यत: जिस राष्ट्र में यह हस्तक्षेप सर्व-व्यापी हो जाए, वह तो निश्चय ही अपने आप को मानव-अकाल के संकट में डाल देता है।

फिर अनुभव यह भी बताता है कि वे परिवार अधिक सफल हैं जो अधिक बच्चे वाले हैं। कम बच्चे रखने वाले परिवार उन के मुक़ाबले में अपेक्षता असफल पाए गए हैं। प्रोफेसर कोलन क्लार्क लिखता है—

'यद्यपि एक बड़े परिवार को शिक्षा देने की समस्यायें निस्संदेह बड़ी विकट हैं, लेकिन यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि एक नए बच्चे की वृद्धि करके मां-बाप अपने मौजूद बच्चों के स्वार्थ को आघात पहुंचाते हैं। ऐसा मालूम होता है कि स्वयं माता-पिता भी आत्मानुभूति

के रूप में इस वास्तविकता को महसूस करने लगे हैं। जो फ्रांस के श्री ब्रिसार्ड ने बड़ी खोज के बाद मालूम की है। उन्होंने व्यापारियों और दूसरे ऊंचे पेशों वाले अगणित बड़े बाल-बच्चों वाले परिवारों के हालात का अध्ययन किया और उनकी तुलना ऐसे परिवारों के बच्चों के जीवन और आजीविका से की जिन में बच्चे कम थे, तो वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अधिक बाल-बच्चों वाले परिवारों के बच्चे छोटे परिवार वाले बच्चों के मुक़ाबले में आखिरकार जीवन के मैदान में कहीं अधिक सफल रहे हैं।[1]

निजी स्वार्थों पर राष्ट्र का बलिदान

वर्थ कंट्रोल के सामान्य आंदोलन में प्रत्येक व्यक्ति अपनी निजी परिस्थितियों, मनोकामनाओं एवं आवश्यकताओं पर दृष्टि रखते हुए निर्णय करता है कि वह कितनी संतान पैदा करे, बल्कि सिरे से पैदा करे भी या नहीं। इस निर्णय में उस के सामने यह प्रश्न ही नहीं होता कि राष्ट्र को अपनी आबादी बनाए रखने के लिए कम से कम कितने बच्चों की ज़रूरत है। व्यक्ति न इस का सही अन्दाज़ा कर सकते हैं और न निजी आवश्यकताओं के सामने वे राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखने की शक्ति रखते हैं। इस प्रकार नई नस्ल की पैदाइश पूरी तरह राष्ट्र के व्यक्तियों के स्वार्थ पर निर्भर हो जाती है और जन्म-दर इस तरह घटती चली जाती है कि उस को किसी हद पर रोकना राष्ट्र के वश में नहीं रह पाता। अगर व्यक्तियों में स्वार्थ-परायणता बढ़ती रहे और वे खराब परिस्थितियां, जो उन को बर्थ कंट्रोल पर उभारती हैं, खराबतर होती रहें, तो निश्चय ही ऐसे व्यक्ति अपने स्वार्थों पर राष्ट्र के जीवन को बलि दे देंगे, यहां तक कि एक दिन राष्ट्र का वजूद ही मिट जाएगा।

---

१. दैनिक टाइम्स लंदन, लेख (Too small Familics) १५ मार्च १९५९ ई०।

राष्ट्रीय आत्म-हत्या

वर्थ कंट्रोल के सामान्य आंदोलन से जिस राष्ट्र की आवादी घटने लगती है, वह हर वक़्त तवाही के सिरे पर खड़ा होता है। अगर कोई महामारी फैल जाए या कोई बड़ी लड़ाई छिड़ जाए, जिस से आदमी बहुत ज्यादा मरने लगें तो ऐसे राष्ट्र में सहसा मनुष्यों का अकाल पैदा हो जाएगा और वह किसी प्रकार भी इतने व्यक्ति न जुटा पाएगा जो मरने वालों की जगह ले सकें।[1] यही चीज़ अब से दो हज़ार साल पहले यूनान को तवाह कर चुकी है। यूनान में गर्भ-पात और संतान-वध का चलन जड़ पकड़ गया था, जिस से आबादी घटती चली जा रही थी, इसी ज़माने में गृह-युद्ध छिड़ गए, जिन्होंने राष्ट्र के अधिकांश व्यक्तियों को नष्ट कर दिया। इस दुहरी हानि ने यूनानी राष्ट्र का ऐसा ज़ोर तोड़ा कि फिर वह संभल न सका और अन्ततः अपने घर में दूसरों का दास बन कर रहा। ठीक-ठीक इसी ख़तरे में आज पश्चिमी देश अपने आप को डाल रहे हैं। संभव है कि अल्लाह की इच्छा यही हो कि उन से आत्म-हत्या कराए। मगर हम क्यों उन का अंधानुकरण कर के अपने लिए तवाही को अपने पास बुलायें।

---

१. इस ख़तरे को अब वर्तमान समय के एटमी हथियारों ने और भी अधिक निश्चित कर दिया है। हिरोशिमा में जो एटम बम इस्तेमाल किया गया था वह २० हज़ार टन या टी० एन० टी० की शक्ति का था और इससे ७८१५० जापानी हलाक, ३७४२५ घायल और १३०८३ लापता हो गए। आज १० करोड़ टी० एन० टी० के बम बनाए जा रहे हैं जो हिरोशिमा वाले बम से ५ हज़ार गुणा अधिक शक्ति रखते हैं। अगर (ख़ुदा न करे) किसी समय विश्व में इन विनाशकारी अस्त्रों से कोई युद्ध लड़ा गया, तो अन्दाज़ा किया जा सकता है कि युद्ध की लपेट में आने वाले देशों की आबादी आनन-फ़ानन में कितनी घट जाएगी।

आर्थिक हानि

अनुभव और खोज से यह विचार ग़लत सिद्ध हो चुका है कि वर्थ कंट्रोल आर्थिक दृष्टि से लाभ-प्रद है। अब अर्थ-शास्त्रियों में यह विचार दिन प्रति दिन तरक़्क़ी करता जा रहा है कि आबादी की कमी आर्थिक अवनति के अति प्रवल कारणों में से है, इसलिए कि जन्म-दर के घटने से उत्पन्न करने वाली आवादी के मुक़ाबले में खर्च करने वाली आबादी कम हो जाती है और उसका अनिवार्य परिणाम यह है कि उत्पन्न करने वाली आबादी में बेकारी बढ़ती चली जाए। उत्पन्न करने वाली आबादी केवल युवकों पर सम्मिलित होती है। इस के विपरीत ख़र्च करने वाली आबादी में बूढ़े-वच्चे और अपंग भी शामिल होते हैं, जिनका उत्पादन में कोई योग नहीं होता। अगर इन की तायदाद घट जाए तो सामूहिक रूप से ख़र्च करने वालों में भी कमी हो जाएगी। माल के खरीदार कम हो जायेंगे तो उसी अनुपात से माल तैयार करने वालों को कम काम मिलेगा। इसी कारण जर्मनी और इटली के अर्थ-शास्त्रियों का एक प्रभावकारी गिरोह, मुख्य रूप से आवादी वढ़ाने के लिए ज़ोर देता रहा है।

और अब ब्रिटिश और अमेरिकी विशेषज्ञों में से भी एक वर्ग इस मत को व्यक्त कर रहा है। इस सिलसिले में लार्ड कीन्स और प्रोफ़ेसर हेंसन, प्रोफ़ेसर कोलन क्लार्क और प्रोफ़ेसर जी० डी० एच० कोल के नाम मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं।

कीन्स-हेंसन की विचार-धारा के दृष्टिकोण को प्रो० जोज़ेफ़ स्पेन्गलर इस प्रकार बयान करते हैं—

'तो मालूम हुआ कि आबादी में द्रुत गति वृद्धि आर्थिक सरगर्मी को तेज़तर कर देती है। मुख्य रूप से इस दशा में जबकि फैलाव वाली शक्तियां सिकुड़ने वाली शक्तियों के मुक़ाबले में अधिक से अधिक शक्तिशाली हों, तथा यही चीज़ उल्टी दशा में भी होगी। ऐसा मालूम होता है कि कीन्स और हेंसन की यह दलील (Thesis)

कि अर्द्ध-बेरोज़गारी में रफ़्तार की बढ़ोतरी आबादी के वृद्धि-दर में लगातार कमी का फल है, अब काफ़ी लोक-प्रिय हो चुकी है। यह इसलिए है कि आबादी में वृद्धि के आयतन में स्थायी कमी[1] एक ओर उस पूंजी निवेश (Investment) की ज़रूरत में कमी का कारण होगी जो आबादी की वृद्धि के तक़ाज़ों को पूरा करने के लिए होता है और दूसरी ओर और भी दूसरी पूंजी-क्षमताओं पर बुरा प्रभाव डालेगी। जैसे-जैसे आबादी का वृद्धि-दर गिरता है, इस पूंजी-क्षमता-दर में कमी होती चली जाती है, जो मेयारी रोज़गार से सम्बन्धित है।[2]

कोलन क्लार्क लिखता है—

'आज के समाज में अधिकांश उद्योग, शायद आबादी की वृद्धि से ही लाभान्वित होंगे। सच तो यह है कि वर्तमान आर्थिक संस्थाय कुछ इस तरह काम कर रही हैं कि अगर आबादी में वृद्धि हो और मार्केट का साइज़ बड़ा हो जाए तो संगठन कुछ अधिक किफ़ायत वाला हो जाएगा और प्रति व्यक्ति पैदावार बढ़ जाएगी, कम नहीं होगी। अगर उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप की घनी और अधिक आबादी न होती तो वर्तमान उद्योगों का एक बड़ा भाग बड़ी कठिनाइयों में पड़ जाता और पैदावार के खर्च बहुत बढ़ जाते— बल्कि यह भी विचारणीय है कि इन परिस्थितियों में ये उद्योग वजूद में आते हैं ?"[3]

---

१. यहां मूल शब्द (Tapering) है जो विषम रूप के लिए इस्तेमाल में आता है अर्थात एक चीज़ ऊपर से मोटी हो और बराबर नीचे तक पतली होती चली जाए जैसे यह शक्ल

२. स्पेंगलर, जोसेफ़ पापुलेशन थ्योरी, ए सर्वे आव कन्टेम्परेरी एकानामिक्स, भाग २, इलिनस १९५२, पृ० ११६।

३. क्लार्क कोलन, पापुलेशन ग्रोथ एण्ड लिविंग स्टैंडर्ड, इन्टरनेशनल लैबर, रिव्यू, अगस्त १९५३, पृ० १०१-१०२।

बर्थ कंट्रोल की हानियों का यह पूर्ण विवेचन, जो पूर्णतः यथार्थ है, इस आयत की एक आंशिक व्याख्या है, जिन में कहा गया है कि—

'वे लोग टोटे में पड़ गए, जिन्हों ने अपनी औलाद की अज्ञानता-वश, बिना समझे-बूझे हत्या कर दी और अपने ऊपर अल्लाह की नेमत को हराम कर लिया।'[1]

और उस आयत का अर्थ भी अच्छी तरह समझ में आ जाता है जिस में महा गया है कि—

'और जब वह प्रभुत्वशाली हुआ तो उसने धरती में फ़साद फैलाने और खेती और नस्ल को नष्ट कनने के उपाय किए।' —२-२०५

उपर्युक्त वार्त्ताओं को सामने रख कर आप समझ सकते हैं कि अल्लाह ने खेती और नस्ल की बरबादी को धरती में फ़साद फैलाने के समकक्ष क्यों समझा है? फिर इस वार्ता से आप इस आयत को भी खूब समझ सकते हैं जिस में कहा गया हैं कि—

'और तुम अपनी औलाद को धन-हीनता के डर से क़त्ल न करो उन को रोज़ी देने वाले भी हमीं हैं और तुम को भी। उन्हें क़त्ल करना एक बड़ी ग़लती है।' —१७-३१

यह आयत साफ़ बता रही है कि आर्थिक कठिनाइयों के भय से औलाद की तायदाद घटाना केवल एक मूर्खता है।

इसके बाद हम को उन दलीलों से बहस करनी है जो बर्थ कंट्रोल के समर्थन में पेश की जाती हैं। इस सम्बन्ध में हम उन हदीसों की सही टीका व व्याख्या भी प्रस्तुत करेंगे जिन से बर्थ कंट्रोल के पक्ष में दलील लाई जाती है।

बर्थ कंट्रोल के समर्थन में जो दलीलें दी जाती हैं, उनमें से अधिकांश उन परिस्थितियों पर आधारित हैं जो पाश्चात्य संस्कृति एवं

---

१. क़ुरआन ६:१४०

सभ्यता ने पैदा की हैं। बर्थ कंट्रोल के समर्थकों के सोचने का ढंग यह है कि सभ्यता एवं सामाजिकता के ये ढ़ंग और संस्कृति के ये तरीक़े और अर्थ के ये सिद्धान्त तो अपरिवर्तनीय हैं। हां, इन से जो कठिनाइयां पैदा होती हैं उन को अवश्य हल करना चाहिए और उन का आसान हल यही है कि नस्ल की अविवृद्धि को रोक दिया जाए। पर हम कहते हैं कि तुम संस्कृति एवं सभ्यता के इस्लामी सिद्धांत और अर्थ के इस्लामी नियमों को अपना कर उन कठिनाइयों ही को आगे आने से रोक दो, जिन्हें हल करने के लिए तुम्हें प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध युद्ध करना पड़ता है।

इस समस्या पर पिछले पृष्ठों में पर्याप्त वार्ता की जा चुकी है। अतएव अब हम केवल उन दलीलों से बहस करेंगे जो विशेष परिस्थितियों पर नहीं बल्कि सामान्य मानव-परिस्थितियों पर दृष्टि रखते हुए बर्थ कंट्रोल के समर्थकों ने अपनी पुस्तकों और भाषणों में बयान की हैं।

—o—

बर्थ कन्ट्रोल के समर्थकों की दलीलें

आर्थिक साधनों के अभाव का संकट

सब से बड़ी दलील जिसने लोगों को आर्थिक भ्रम में डाल दिया है, यह है कि—

'पृथ्वी में निवास करने योग्य जगहें सीमित हैं। मानव के लिए आर्थिक साधन भी सीमित हैं, परन्तु मनुष्य की नस्लों में वढ़ौतरी की क्षमता असीमित है। पृथ्वी में एक उत्तम जीवन-स्तर के साथ अधिक से अधिक पांच हज़ार मिलियन व्यक्ति समा सकते हैं। इस समय पृथ्वी की आबदी दो हज़ार मिलियन तक पहुंच चुकी है और यदि स्थिति यथोचित रही तो यह संख्या ३० वर्ष के भीतर दोगुनी हो सकती है। अतएव यह भय पूर्णतयः उचित है कि ५० वर्ष के भीतर पृथ्वी मनुष्यों से भर जाएगी और उसके बाद नस्लों में जो वढ़ौतरी होगी, वह मानव-जाति के जीवन-स्तर को गिराती चली जाएगी, यहां तक कि उन के लिए भले ही आदमियों की भांति जीवन व्यतीत करना कठिन हो जाएगा तो मानवता को इस संकट से बचाने के लिए आवश्यक है कि सन्तति-सीमाकरण (Birth Limitation) के ढंगों को अपना कर नस्लों की वढ़ौतरी को एक उपयुक्त सीमा के अन्दर सीमित कर दिया जाए।

यह वास्तव में ईश्वरीय व्यवस्था पर आक्षेप है। जिस बात को ये लोग स्वयं हिसाब लगा कर इतनी सरलता से मालूम कर सकते हैं, उन का भ्रम है कि खुदा उस से बेखबर है। वह नहीं जानता कि पृथ्वी में कितनी गुंजाइश है और यहां कितने मनुष्य पैदा करने चाहियें जो इस में समा सकते हों।

'वे अल्लाह के बारे में झूठ और अज्ञानतापूर्ण अटकलें लगाते हैं।'
—क़ुरआन

इन मूर्खों को नहीं मालूम कि अल्लाह ने प्रत्येक वस्तु को एक अदाज़े से पैदा किया है।

'हमने हर चीज को एक अंदाज़े से पैदा किया है।' —क़ुरआन

उस के खज़ानों से जो वस्तु भी चलती है, एक जंचे-तुले अंदाज़े पर होती है।

उन का भ्रम भले ही कुछ हो, पर सत्य तो यह है कि जिस सत्ता ने इस सृष्टि को रचा है वह सृजन एवं रचना की कला में अनाड़ी नहीं है। यदि ये उस के कामों को विवेकपूर्ण दृष्टि से देखते और उस की व्यवस्था पर ग़ौर करते तो उन पर स्वयं ही प्रकट हो जाता कि वह अपने हिसाव और अंदाज़े में उन से अधिक पूर्ण है। उसने पृथ्वी के इसी सीमित क्षेत्र पर अपनी सृष्टि के अगणित विभिन्न रूप उत्पन्न किए हैं, जिन में से प्रत्येक के भीतर सन्तानोत्पत्ति की इतनी प्रवल शक्ति है कि यदि केवल एक ही प्रकार, बल्कि कुछ प्रकार के केवल एक जोड़े की नस्ल को वह पूर्ण शक्ति के साथ वढ़ने दे तो एक अल्प अवधि में सम्पूर्ण धरातल केवल उसी नस्ल से भर जाए और किसी दूसरी नस्ल के लिए कण भर भी स्थान रिक्त न रहे। उदाहरणार्थ वनस्पति की एक क़िस्म है जिसको वनस्पति शास्त्र में (Sisymbrium Sophia) कहते हैं। इस प्रकार के प्रत्येक पौधे में सामान्यता साढ़े सात लाख वीज होते हैं। यदि इस के केवल एक पौधे के सभी वीज पृथ्वी पर उग जायें और तीन वर्ष तक इस की नस्ल वढ़ती रहे, तो पृथ्वी में अन्य वस्तुओं के लिए एक कण भी शेष न रहे। एक प्रकार की मछली (Star Fish) २० करोड़ अन्डे देती है। अगर इस की केवल एक सछली को अपनी पूरी नस्ल बढ़ाने का अवसर मिल जाए तो तीसरी-चौथी पीढ़ी तक पहुंचते-पहुंचते संपूर्ण जगत के समुद्र इसी से लबालब भर जायें और उनमें पानी की एक बूंद

की भी गुंजाइश न रहे । दूर क्यों जाइए, स्वयं मनुष्य ही की सन्तानोत्पत्ति-शक्ति को देख जाइए। एक पुरुष के शरीर से एक समय में जो पदार्थ बाहर निकलता है, उस से सम्पूर्ण जगत की प्रौढ़ स्त्रियां गर्भवती हो सकती हैं। यदि केवल एक ही पुरुष की पूर्ण सन्तानोत्पत्ति-क्षमता को पूरी ताक़त के साथ व्यवहार में आने का अवसर मिल जाए, तो कुछ ही वर्षों में सम्पूर्ण जगत उस की सन्तान से खचाखच भर जाए। परन्तु वह कौन है जो हजारों लाखों वर्ष से इस पृथ्वी पर इन अगणित रूपों को इस प्रवल सन्तानोत्पत्ति-शक्ति के साथ पैदा कर रहा है और किसी जाति को भी उस की मर्यादित एवं अनुमानित हद से आगे नहीं बढ़ने देता ? क्या वह तुम्हारी वैज्ञानिक चालें हैं अथवा ईश्वरीय विधि ? स्वयं तुम्हारे अपने वैज्ञानिक निरीक्षण साक्षी हैं कि जीवधारी पदार्थों में उगने-बढ़ने की शक्ति असीमित है, यहां तक कि एक कोश कीटाणु (Unicellular Organism) में उगने की इतनी शक्ति होती है कि यदि उस को निरन्तर भोजन मिलता रहे और विभाजन भीतर विभाजन का अवसर प्राप्त हो जाए तो पांच वर्ष के भीतर वह इतना जीवधारी पदार्थ उत्पन्न कर सकता है जो पृथ्वी के आकार के दस हज़ार गुना अधिक होगा, पर वह कौन है जिसने जीवन-शक्ति से भंडार पर कंट्रोल क़ायम कर रखे हैं ? वह कौन है जो इस भंडार में से भांति-भांति केजीवों को निकाल रहा है कि इसमें न कभी ज़्यादती होती है और न कमी।

अगर मनुष्य अपने स्रष्टा की इन निशानियों पर ध्यान दे, तो वह कभी उस के प्रवन्ध में हस्तक्षेप करने का साहस न करे। ये सब एकमात्र अज्ञानतापूर्ण भ्रम हैं, जो केवल इस कारण उत्पन्न होते हैं कि लोग सृष्टि और स्वतः अपने आप में अपने पालनहार की निशानियों को नहीं देखते। उन को अभी तक यह भी ज्ञात नहीं हुआ कि मानव-प्रयत्न एवं प्रयास की हद कहां तक है और किस हद पर पहुंच कर विशुद्ध ईश्वरीय व्यवस्था का आरम्भ हो जाता है, जिन में

हस्तक्षेप करना, तो दूर की बात, समझने की भी मनुष्य शक्ति नहीं रखता। जब मनुष्य अपनी वैध सीमा से बढ़ कर ईश्वरीय व्यवस्था की मर्यादाओं में दखल देने का प्रयत्न करता है, तो ईश्वरीय व्यवस्था में तो तनिक भी बाधक नहीं हो सकता, हां स्वयं अपने लिए बौद्धिक विकटतायें एवं मानसिक उलझनें अवश्य पैदा कर लेता है। वह बैठ कर हिसाब लगाता है कि दस वर्ष में भारत की आबादी साढ़े तीन करोड़ बढ़ गई। आगामी दस वर्षों में चार करोड़ और बढ़ जाएगी। २० वर्ष में ४३ करोड़ हो जाएगी। ६४ वर्ष में दुगनी हो जाएगी, फिर सोचता है इतने मनुष्य आखिर कहां समायेंगे ? क्या खायेंगे ? क्यों कर जियेंगे ? इसी चिन्ता में वह उलझता है, लेख लिखता है, भाषण देता है, कमेटियां बनाता है, कौंसिल में राष्ट्र के बुद्धिजीवियों के ध्यान को इस समस्या के समाधान की ओर आकृष्ट करता है। पर वह खुदा का बन्दा नहीं सोचता कि जिस खुदा ने हजारों वर्ष से मनुष्यों की बस्ती इस महाद्वीप में बसा रखी है, वह स्वयं इस समस्या को हल करता रहा है और करता रहेगा और जब वह विनष्ट करना चाहेगा, तो विनष्ट कर देगा। आबादी की पैदाइश और उस के घटाव-चढ़ाव और उस के लिए पृथ्वी में गुंजाइश निकालने का प्रबन्ध उसी से सम्बन्धित है।

'पृथ्वी में चलने-फिरने वाला कोई ऐसा प्राणी नहीं, जिस की रोजी का प्रबन्ध ईश्वर के ज़िम्मे न हो और वही पृथ्वी में उन के ठिकाने और उन के सौंपे जाने की जगह को जानता हैं। यह सब कुछ एक खुली किताब में है।' —क़ुरआन ११ : ६

यह प्रबन्ध हमारी बुद्धि एवं दृष्टि की पहुंच से बहुत दूर किसी अव्यक्त स्थान से हो रहा है। अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक इंग्लैंड की आबादी में जितनी तीव्रगति से वृद्धि हुई, उस को देख कर अंग्रेज नीतिज्ञ आरम्भ में चकित थे कि यह बढ़ती हुई आबादी कहां समाएगी और क्या खाएगी। पर संसार ने देख लिया कि

इंग्लैंड की आबादी जिस वेग से बढ़ी, उससे कहीं अधिक तीव्रगति से इस के आजीविका-साधन बढ़े और अंग्रेजी राष्ट्र को फैलने के लिए पृथ्वी के बड़े-बड़े क्षेत्र मिलते चले गए।

संसार के आर्थिक साधन और आबादी

१८९८ में ब्रिटिश एसोसिएशन के अध्यक्ष सर विलियम क्रोक्स ने खतरे का एलारम बजाया था और विश्वास के साथ कहा था कि इंग्लैंड और शेष तमाम सुसभ्य राष्ट्र गेहूं की कमी और अकाल के खतरे से दो-चार हैं और विश्व-साधन अब तीस वर्ष से अधिक हमारी जरूरतों का साथ नहीं दे सकते, लेकिन तीस वर्ष बाद देखने वालों ने देखा कि न केवल यह कि ऐसा संकट नहीं आया, बल्कि गेहूं की पैदावार इतनी अधिक थी कि मंडियों में अधिक भंडार होने की वजह से भाव मन्दा होने लगा, यहां तक कि अर्जेन्टाइना और अमेरिका में अधिक गेहूं को आग की भेंट चढ़ा दिया गया।

मनुष्य अपनी अदूरदर्शिता के कारण बार-बार खतरे की घंटियां बजाता है, लेकिन हर बार इतिहास यह सिद्ध कर देता है कि भविष्य के बारे में मनुष्य का ज्ञान बड़ा सीमित है और प्रकृति ने विकास की जो सम्भावनायें संसार में पैदा कर दी हैं, वे अगणित हैं। आइए, तनिक अपने ज्ञात साधनों की हद तक इसका अन्दाजा करें कि आज फिर पूरी दुनिया में जो शोर मचाया जा रहा है, वह कहां तक सही है।

१. सबसे पहले पृथ्वी पर रहने की जगह को लीजिए। पृथ्वी का कुल क्षेत्र ५ करोड़ ७१ लाख ६८ हजार वर्ग मील है और कुछ आबादी १९५९ ई० के अनुमान के अनुसार २ अरब ८५ करोड़ थी, इस तरह प्रति वर्ग मील घनत्व ५४ व्यक्ति आता है और प्रोफेसर डडले स्टाम्प के अन्दाजे के मुताबिक़ प्रति व्यक्ति साढ़े बारह एकड़ जमीन पड़ती है।[1] एक सामान्य व्यक्ति की हैसियत से अगर अन्दाजा

१. स्टैंम्प डडले, आवर डेवलपिंग वर्ल्ड, लंदन, १९६०, पृ० ३९,

लगाया जाए तो यों समझिए कि फुटबाल का एक मैदान लगभग डेढ़ एकड़ का होता है। ऐसे-ऐसे आठ मैदान एक-एक आदमी के हिस्से में आ सकते हैं।

पृथ्वी कितने व्यक्तियों के लिए ठहरने की जगह जुटा सकती है? इस का अन्दाजा इस बात से कीजिए कि हालैंड में इस समय एक वर्ग मील पर लगभग एक हजार व्यक्ति, इंग्लैंड में ८५२ व्यक्ति और न्यूयार्क में २२००० व्यक्ति बड़े आराम से रहते हैं? संसार के अधिक क्षेत्रों में बहुत सी ज़मीन बेकार पड़ी है। चीन में ज़मीन का केवल १० प्रतिशत इस्तेमाल हो रहा है। पश्चिमी अफ्रीका में इस्तेमाल के क़ाबिल ज़मीन का ६२ प्रतिशत, लगभग एक अरब १५ करोड़ एकड़ बेकार पड़ा है।[1] ब्राज़ील अपनी २ अरब एकड़ ज़मीन में से सिर्फ़ २.२५ प्रतिशत खेती कर रहा है और कनाडा अपनी दो अरब ३१ करोड़ एकड़ ज़मीन में से केवल ८ प्रतिशत पर खेती कर रहा है।[2] ऐसी स्थिति में यह कहना कि ज़मीन कम है, वास्तविकता की आँखों में धूल झोंकना है।

फिर संसार के विभिन्न देशों में आबादी के घनत्व का अध्ययन किया जाए तो मालूम होता है कि उन्नति का कितना मैदान खाली पड़ा है। कुछ क्षेत्रों का घनत्व निम्न पंक्तियों में अंकित है।

फिर संसार के विभिन्न देशों में आवादी के घनत्व का अध्ययन किया जाए तो मालूम होता है कि उन्नति का कितना मैदान खाली पड़ा है। कुछ क्षेत्रों का घनत्व निम्न पंक्तियों में अंकित है—

देश	घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर[3]
हालैंड	३४५

---

१. मेक कार्मेक, पीपुल, स्पेस, फूड, पृ० २०-२७,

२. ब्रिटानिका बुक आव दी इयर १९५८, पृ० ३८७-८८,

३. यू० एन० डेमाग्राफिक इयर बुक, टेबुल १, पृ० ११९-१२६,

बेल्जियम	२६७
इंग्लैंड	२१३
जर्मनी	२१०
पाकिस्तान	६१
संयुक्त अरब गणराज्य	२३
अमेरिका	१६
ईरान	१२
दक्षिणी अफ्रीका	१२
न्यूजीलैंड	८
कनाडा	२
आस्ट्रेलिया	२

ऐसे ही अगर महाद्वीपों को लिया जाए तो घनत्व इस प्रकार है—

यूरोप	८५	व्यक्ति प्रति वर्ग	किलो मीटर
एशिया	५६	,,	,,
अमेरिका	६	,,	,,
अफ्रीका	८	,,	,,
ओशियाना	२	,,	,,
कुल दुनिया (औसत)	२१	,,	,,

इस से मालूम हुआ कि उन्नति और आबादी में वृद्धि की कितनी सम्भावनायें हैं, बल्कि अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में तो आबादी की कमी हुई, जिस से आर्थिक प्रगति रुकी है।[1]

इन ज़मीनों के अलावा रेगिस्तान और दलदल वाले इलाक़े ऐसे मौजूद हैं, जिन्हें विज्ञान की शक्तियों से काम लेकर उपयोगी बनाया

१. देखिए, डडले स्टैम्प, Our Developing World पृ० ५२। लेखक के शब्द ये हैं—'The difficulty is the lack of pupulation.'

जा सकता है और इन में केवल दक्षिणी अमेरिका की अमेज़न नदी की तलैटी ही में यूरोप की पूरी आबादी के बराबर लोग आबाद किए जा सकते हैं। इस सिलसिले में पार्कर हैन्सन की पुस्तक 'न्यू वर्ल्ड इमरजेन्सी' मालूमात से भरी हुई है और नए जगत का द्वार खोलती है। फिर रिचर काल्डर (Ritcher Calder) की पुस्तक 'मैन अगेंस्ट दी डिज़र्ट' भी कुछ नई सम्भावनायें हमारे सामने लाती है, जिस में बताया गया है कि रेगिस्तानों को मनुष्य किस प्रकार अपना आज्ञापालक बना सकता है।[1]

सच तो यह कि संसार में जगह की कमी की न कोई समस्या है और न उस के पैदा होने की सम्भावना है। यह मनुष्य की कम-हिम्मती और कामचोरी है, जो उसे मेहनत व परिश्रम के बजाए सन्तति-वध का पाठ पढ़ाती है।

'वर्ना गुलशन में इलाजे तंगी-ए-दामां भी है।'

२. दूसरी समस्या खाद्य-पदार्थों के उत्पादन की है। संसार के कुल क्षेत्र के केवल दस प्रतिशत में इस समय खेती होती है और शेष ६० प्रतिशत में से अगर वनों और चरागाहों आदि को निकाल दिया जाए, तब भी कुल ज़मीन का ७० प्रतिशत अभी बेकार पड़ा है तथा जिस १० प्रतिशत में खेती होती है, उस में से भी गहरी खेती का क्षेत्र बहुत थोड़ा है। खेती के क्षेत्रों को कितना और किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है, इसका अन्दाज़ा इस सूची से कीजिए, जो अगले पृष्ठ पर अंकित है। इन आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि—

---

१. अगस्त ५७ के रीडर्ज डाइजेस्ट में एडविन मूलर लिखता है कि संसार में इस समय पृथ्वी के शुष्क भाग का १/४ से अधिक भाग रेगिस्तान है। अगर आण्विक ऊर्जा से काम लेकर भू-गर्भित पानी के भंडार ऊपर लाए जा सकें और समुद्र के खारी पानी को मीठे पानी में बदल देने का भी कोई सस्ता तरीक़ा मालूम हो जाए तो सारे रेगिस्तान धीरे-धीरे लहलहाती खेतियों में तब्दील हो सकते हैं।

खेती का क्षेत्र और खेती योग्य भूमि का क्षेत्र											(मिलियन वर्ग किलोमीटर में)
कुल योग		खेती योग्य भूमि						अभी खेती हो रही है		कुल क्षेत्र फल	क्षेत्र
		नये साधन		नयी पूंजी		वर्तमान साधन					
कुल क्षेत्र का %	क्षेत्र फल	कुल जमीन का%	क्षेत्र फल	कुल जमीन का%	क्षेत्र फल	कुल जमीन का%	क्षेत्र फल	कुल क्षेत्र फल का%	क्षेत्र फल		
६०%	४.४	३१%	१.५	१८%	०.६	१०%	०.५	३१%	१.५	४.६	यूरोप
६७%	१५.०	३१%	६.६	१८%	४.१	८%	१.८	१०%	८.८	२२.५	रूस
७५%	२०.२	२६%	७.१	२३%	६.१	११%	२.६	१५%	४.१	२७.०	एशिया
७२%	२१.६	३१%	६.५	२४%	७.४	६%	२.६	८%	२.४	३०.२	अफ्रीका
६१%	११.८	२३%	४.४	१५%	२.६	११%	२.२	१२%	२.३	१८.५	कनाडा
७३%	१५.१	२६%	६.०	२५%	५.१	१५%	३.०	५%	१.०	२०.४	अमेरिका
६४%	५.५	३५%	३.०	२०%	१.७	६%	०.५	३%	०.३	५.६	ओशियाना
७०%	६३.६	२८%	३८.४	२१%	२८.२	१०%	१३.५	१०%	१३.२	१३५.०	

—संसार के कुल क्षेत्र के केवल १० प्रतिशत भाग में खेती होती है, हालांकि ७० प्रतिशत भाग में खेती हो सकती है, अर्थात ६० प्रतिशत और अधिक ज़मीन में अभी खेती की जा सकती है।

—इस समय खेती की ज़मीन का क्षेत्रफल १३.२ मिलियन वर्ग किलोमीटर है और १३.५ मिलियन किलोमीटर को खेती के वर्तमान साधनों द्वारा ही खेती के काम में लाया जा सकता है। इस के बाद नई पूंजी और वह मशीनरी, जिसे आज ज्ञात किया जा चुका है और पश्चिमी देशों में जिन का आजकल उपयोग हो रहा है, इन सब का उपयोग कर के २८.३ मिलियन किलोमीटर को (जो कुल ज़मीन का २१ प्रतिशत होता है), खेती के योग्य बनाया जा सकता है। इसके बाद जो ज़मीन बच जाएगी, उस में से भी ३८.४ मिलियन किलोमीटर को (जो कुल ज़मीन का २८ प्रतिशत होता है), नए तरीक़े मालूम कर के खेती के योग्य बनाया जा सकता है। इस से आप अन्दाज़ा लगाइए कि पैदावार को कितना बढ़ाना सम्भव है।

३. उत्पादन-वृद्धि के सिलसिले में हमें यह भी याद रखना चाहिए कि इस समय संसार के तमाम देशों का उत्पादन बराबर नहीं है। जिन देशों में प्रति एकड़ पैदावार कम है, वह अच्छे साधनों और अच्छी खाद के इस्तेमाल से पैदावार बहुत बढ़ा सकते हैं। जापान में पाकिस्तान से प्रति एकड़ पैदावार औसतन तीन गुनी अधिक है और हालैंड में चार गुनी अधिक। विकसित देशों में एक ही ज़मीन से साल में दो-दो और तीन-तीन फ़सलें हासिल की जा रही हैं तथा दूसरे साधनों से भी पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। प्रति एकड़ पैदावार के अंतर का अंदाज़ा इस तालिका[1] से कीजिए —

---

१. स्टैम्प डडले, आवर डेवलपिंग वर्ल्ड, पृष्ठ-७३

गेहूं की पैदावार

प्रति एकड़ पैदावार (मीट्रिक टन) देश	१९३४-३८	१९५६
डेन्मार्क	१.२३	१.६३
हालैंड	१.२३	१.४५
इंग्लैंड	०.९४	१.२६
मिस्र	०.८१	०.९५
जापान	०.७६	०.८५
पाकिस्तान	०.३४	०.३०
भारत	०.२४	०.२९

इस सूची से मालूम होता है कि पूर्वी देश अपनी प्रति एकड़ पैदावार को तीन-चार गुना बढ़ा सकते हैं और स्वयं पश्चिमी देशों ने पिछले ३० वर्षों में प्रति एकड़ पैदावार बहुत बढ़ा ली है। इंग्लैंड में तो वृद्धि ३० प्रतिशत के क़रीब है।

४. अनाज की पैदावार का अगर पिछली चौथाई शताब्दी में अध्ययन किया जाए तो साफ़ मालूम होता है कि आबादी की वृद्धि के मुक़ाबले में पैदावार की वृद्धि कहीं अधिक है। डडले स्टैम्प के अंदाज़े के मुताबिक़ आबादी और पैदावार की तालिका पिछली चौथाई शताब्दी में यह है—[1]

	१९३४-३८	१९४८-५२	१९५७-५८
अनाज	८५	१००	११७
आबादी	९०	१००	११२.२
	(१९३५)	(१९५०)	(१९५७)

अर्थात अनाज की पैदावार में वृद्धि आबादी की वृद्धि से अधिक

१. स्टैम्प डडले, आवर डेवलपिंग वर्ल्ड, पृष्ठ-७१

रही है। स्टैम्प के शब्दों में अगर हम कुल कृषि-उत्पादन के सूचकांक पर विश्वास कर सकते हैं तो यह साफ़ ज़ाहिर होता है कि संसार में अन्न-उत्पादन की वद्धि आबादी की वृद्धि से अधिक द्रुतगति से हो रही है।

इस का प्रमाण यू० एन० ओ० की फ़ूड एन्ड एग्रीकल्चरल आर्गनाइज़ेशन की हाल की रिपोर्ट से मिलता है। कुल अन्न-उत्पादन का सूचकांक १९५२-५३ ई० में ९४ था, जो १९५८-५९ ई० में बढ़कर ११३ हो गया और अगर आबादी की वृद्धि को भी ले लिया जाए तो प्रति व्यक्ति पैदावार का इंडैक्स यह है—[1]

प्रति व्यक्ति पैदावार

	१९५२-५३	१९५८-५९
अनाज	९७	१०६
कुल कृषि-उत्पादन	९७	१०५

ऐसे ही अगर अलग-अलग देशों के उत्पादन का अध्ययन किया जाए तो वृद्धि की गति यह थी—

अन्न की पैदावार का इन्डेक्स[2]

देश	१९५२.५३	१९५८.५९
आस्ट्रिया	९१	१२१
यूनान	८१	१२०
इंग्लैंड	९५	१०५
अमेरिका	९८	११२
ब्राजील	८९	११९

---

१. Production year book, food and agricultural organisation, Uuited Nations, Rome, Vol. 13, 1959 P, 29.

२. वही पृष्ठ २९

मैक्सिको	८७	१२३
भारत	९०	१०५
जापान	९७	११९
इस्राईल	८२	१३०
ट्युनिशिया	९५	१३७
संयुक्त अरब गणराज्य	८६	१११
आस्ट्रेलिया	९८	१२०

इन तमाम ही देशों में उत्पादन की बृद्धि आवादी की बृद्धि से कहीं अधिक रही है और संसार का सामान्य रुझान यही है।

५. इन तमाम तथ्यों को सामने रख कर निष्पक्ष विशेषज्ञों का अनुमान है कि पैदावार की कमी या आर्थिक तंगी की समस्या के पैदा होने की कोई सम्भावना क़रीब या दूर के भविष्य में नहीं है। जे० डी० बर्नल लिखता है—

'अब से एक शताब्दी बाद आबादी दो गुनी या तीन गुनी हो जाएगी अर्थात अन्दाज़ा यह है कि २१ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आबादी ६ अरब से १२ अरब के बीच होगी। अब अनुमान यह है कि वर्तमान कृषि-तरीक़ों पर कोई असाधारण बोझ डाले बिना अर्थात सम्पूर्ण जगत में उन तरीक़ों को अपना कर के, जो वहां के लिए उचित हों और जो कला-दृष्टि से उस स्तर के हों, जो आज अर्द्ध औद्योगिक देशों में इस्तेमाल हो रहे हैं, इस आबादी की जरूरत को पूरा करने के लिए काफ़ी अन्न पैदा किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में अगले सौ वर्षों में अन्न की कमी के लिए कदापि कोई आधार मौजूद नहीं है और अगर कोई अकाल पड़ जाए तो वह मनुष्य की अपनी मूर्खता या उस की स्वार्थपरायणता के कारण होगा।'[1]

एफ. ए. ओ. (F. A. O.) की दस वर्षीय रिपोर्ट (१९४५-५५)

---

१. बर्नल० जे० डी० "वर्ल्ड विदाउट वार" पृष्ठ ६६

सम्पूर्ण जगत के हालात का सर्वेक्षण करने के बाद नतीजा निकालती है कि—

'ये तमाम चीज़ें इस विश्वास के लिए दृढ़ आधार जुटाती हैं कि अगले सौ वर्ष के भीतर संसार के शेष दो तिहाई भाग में भी वही कृषि-क्रान्ति आ जाएगी, जो अभी तक केवल एक तिहाई भाग में हुई है।'

उत्पादन में वृद्धि के बारे में उस रिपोर्ट के लेखक डा० लामर-टाइन एट्स (Dr. Lamartine Yates) लिखते हैं—

'यह निश्चित रूप से सम्भव दीख पड़ता है कि इस प्रोग्राम के सामूहिक प्रभाव अन्ततः उन तमाम आशातीत अनुमानों से भी कहीं अधिक हों, जो अति आशावादियों ने क़ायम किए हैं[1]।'

एफ़० ए० ओ० (F. A. O.) ही की एक दूसरी रिपोर्ट में कहा गया है—

'आबादी और अन्न और कृषि व उद्योग से सम्बन्धित वाद-विवाद में जो उलझावा (Confusion) है, उस का कारण वर्तमान और आगामी साधनों के बारे में हमारी जानकरियों की कमी है। कभी-कभी तो ऐसा जान पड़ता है कि कृषि-भूमि की उत्पादन-शक्ति को खत्म हो जाने वाली—(Exhaustible) समझ लिया गया है, बिल्कुल वैसे ही, जैसे कि एक कोयले की खान खत्म होने वाली है। निस्सन्देह दूरदर्शिता की कमी और ग़लत तरीक़े पर काम कर के उन्हें समाप्त किया जा सकता है, मगर जमीनों की उत्पादन-शक्ति को बहाल भी किया जा सकता है, और बढ़ाया भी जा सकता है। निराशायुक्त विचार आज बड़े आम हैं और उनका टीप का बन्द यह है कि खेती योग्य ज़मीन अपनी अन्तिम सीमा को पहुंच चुकी है, लेकिन वर्तमान विशेषज्ञ इस निराशायुक्त दृष्टिकोण से कदापि

१. "एग्रीकल्चर इन दि वर्ल्ड एकोनोमी" रिपोर्ट एफ़. ए. ओ. १९५६ पृष्ठ १३०

सहमत नहीं ।[1]

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डाक्टर कोलिन क्लार्क (Dr. Colin Clark) तो ऐसे तथ्यों के आधार पर, जिन का इन्कार नहीं किया जा सकता, यह दावा करता है कि अगर संसार की भूमि का ठीक-ठीक उपयोग किया जाएगा (जिस तरह कि हालैंड के किसान कर रहे हैं) तो वर्तमान मालूम तरीक़ों को इस्तेमाल कर के आज की आबादी से दस गुनी ज्यादा आबादी को (अर्थात २८ अरब व्यक्तियों को) पश्चिमी देशों के अन्न के उच्च स्तर पर क़ायम रखा जा सकता है और आबादी की अधिकता की कोई समस्या पैदा न होगी ।[2]

हमारा देश

रहा भारत, तो हमारा अंदाजा है कि आबादी की वृद्धि के साथ आजीविका-साधन में भी वृद्धि हो रही है । सन् १९२१ और १९३१ के मध्य जनसंख्या में वृद्धि का औसत १०.५ प्रतिशत रहा, परन्तु कषि-उत्पादन में ५ प्रतिशत और औद्योगिक उत्पादन में ५१ प्रतिशत की वृद्धि हुई । गत ३० वर्षों के भीतर इस देश की जनसंख्या तो केवल १३.५ प्रतिशत अधिक बढ़ी है, परन्तु उस के कृषि-उत्पादन में २९ प्रतिशत की वृद्धि हुई है । प्रत्यक्ष में हम जो कुछ देख रहे हैं, उससे भी ज्ञात होता है कि भारतवर्ष में वर्तमान जनसंख्या से दोगुनी अधिक जनसंख्या के लिए आजीविका-साधन मौजूद हैं । यहां की पृथ्वी का ६५ प्रतिशत भाग कृषि योग्य है । इस के अतिरिक्त प्राकृतिक ऐश्वर्य के बहुत से कारखाने मौजूद हैं, जिनसे अभी तक काम लेना

---

१. "एग्रीकल्चर इन दि वर्ल्ड एकोनोमी" रिपोर्ट एफ़. ए. ओ. १९५५ पृष्ठ ३५

२. क्लार्क कोलिन 'पापुलेशन एन्ड लिविंग स्टैंन्डर्ड, इन्टरनेशनल लेबर रिव्यू अगस्त १९५३ । इसी बात की और व्याख्या के लिए देखिए, ब्रिटिश मेडिकल जर्नल, लन्दन, ८ जुलाई १९६१, पृ० ११९-२०

बाक़ी है। उद्योग एवं व्यापार के मैदान में अभी तक भारत ने उतना काम भी नहीं किया है, जितना अन्य देश कर चुके हैं और प्रगति की जो सम्भावनायें अभी निहित हैं, उन का तो हम कोई अनुमान ही नहीं लगा सकते। इन तमाम बातों को देखने और समझने के बाद भी यदि कोई व्यक्ति इस चिन्ता में घुल रहा हो कि यह प्रतिदिन बढ़ने वाली जनसंख्या कहां रहेगी और क्या खाएगी, तो यह उस की अपनी मूर्खता है। उस का काम केवल मानव-कर्म-क्षेत्र में रह कर सोचना और काम करना है। इस क्षेत्र से निकल कर वह विशुद्ध ईश्वरीय प्रवन्ध-क्षेत्र में क़दम रखने का प्रयत्न करेगा, तो अपने लिए ऐसी कठिनाइयां उत्पन्न कर लेगा, जिन का हक़ीक़त में उस के पास कोई हल नहीं है।

मृत्यु का कष्ट

वर्थ-कंट्रोल के समर्थक स्वीकार करते हैं कि जातियों की संख्या को एक उपयुक्त सीमा के भीतर सीमित रखने का प्रबन्ध स्वयं प्रकृति ने किया है और यह प्रबन्ध मानव-जाति पर भी आच्छादित है, परन्तु वे कहते हैं कि प्रकृति इस कार्य को मृत्यु द्वारा पूरा करती है, जिस में मनुष्य के लिए कठोर आध्यात्मिक एवं शारीरिक विपदायें हैं। क्यों न हम इस के बजाय स्वयं अपने उपायों से अपनी आबादियों को सीमित रखने का प्रबन्ध कर लें? जीवित मनुष्यों के मृत्यु के घाट चढ़ने, विभिन्न विपत्तियों के कारण प्राण खोने और शेष के तड़प-तड़प कर मर जाने से तो कहीं उत्तम यह है कि आवश्यकता से अधिक मनुष्य उत्पन्न ही न हों।

यहां फिर ये लोग ईश्वरीय प्रवन्ध में अनुचित हस्तक्षेप के अपराधी होते हैं। हम पूछते हैं कि तुम्हारे सोचे-समझे उपायों से क्या युद्ध, महामारियां, बाढ़, भूकम्प इत्यादि बन्द हो जायेंगे? क्या तुमने ख़ुदा (अथवा स्वतः प्रकृति से) कोई ऐसा समझौता कर लिया है

कि जब तुम बर्थ-कंट्रोल को अपनाओगे, तो मौत का फ़रिश्ता पदच्युत कर दिया जाएगा ? अगर ऐसा नहीं है और निश्चय ही ऐसा नहीं है तो बताओ कि बर्थ-कंट्रोल और मौत के फ़रिश्ते की दुहरी 'सेवाओं' की चक्की में पिस कर मनुष्य का क्या बनेगा ? एक ओर तुम स्वयं अपने हाथों से अपनी आबादियों को घटा रहे हो, दूसरी ओर भूकम्प सहस्रों कनुष्यों को एक ही समय में मृत्यु की भेंट चढ़ाते रहेंगे। बाढ़ों में बस्तियां की वस्तियां उजड़ती रहेंगी। महामारियां आकर आबादियों पर झाड़ फेरती रहेंगी। युद्धों में तुम्हारे साइंसी हथियार लाखों, बल्कि करोड़ों मनुष्यों को मृत्यु के घाट उतार देंगे और मौत का फ़रिश्ता एक-एक करके मनुष्यों के प्राण खींचता रहेगा। क्या तुम हिसाब लगाकर इतना भी नहीं मालूम कर सकते कि जिस खज़ाने में आमदनी घटती चली जाए और खर्च यथावत रहे, वह कब तक भरपूर रहेगा ?[१]

---

१. केवल यूरोप में (रूस को छोड़ कर) प्रथम विश्व-युद्ध के कारण आबादी में २ करोड़ २४ लाख व्यक्तियों की कमी हो गई थी। इस में सैनिक की मौतें, सामान्य दर से अधिक शहरी आबादी की मौतें और एक करोड़ २६ लाख व्यक्तियों की कमी जन्म-हानि (Birth deficit) के रूप में शामिल हैं। रूस में पहला युद्ध और साम्यवादी क्रान्ति के कारण जन्म में एक करोड़ व्यक्तियों की कमी हुई। जर्मनी के बारे में अन्दाज़ा किया गया है कि १६ लाख व्यक्ति लड़ाई में काम आए, २५ लाख बच्चे शादियों के टूटने से और २६ लाख बच्चे लड़ाई में जन्म-दर के कम हो जाने के कारण कम पैदा हुए। दूसरे विश्व-युद्ध में मौतों का अन्दाज़ा ८५ लाख से एक करोड़ व्यक्तियों तक है : जन्म-दर में कमी की वजह से केवल फ्रान्स में १२ लाख व्यक्तियों की कमी हुई और बेल्जियम की स्थिति इस से भी अधिक बिगड़ी हुई थी। इसी आधार पर कहा जाता है कि लड़ाई मनुष्यों की संख्या को कम कर देती है और यह कमी केवल

इस प्रश्न को भी जाने दो। क्या तुम्हारे पास अपनी आबादियों के लिए 'उचित सीमा' निर्धारित करने का कोई मेयार है ? मान लीजिए है, तो क्या तुम उस मेयार के अनुसार ज़रूरत भर बच्चा पैदा करने और सिर्फ़ ज़रूरत से ज्यादा बच्चों की पैदाइश रोक देने की शक्ति रखते हो ? जब जन-साधारण में स्वार्थयुक्त मनोवृत्ति पैदा हो जाए और वे अपनी व्यक्तिगत परिस्थितियों एवं निजी इच्छाओं के आधार पर बच्चों की आवश्यकता तथा आवश्यकता के न होने का निर्णय करने में स्वच्छन्द हों और बर्थ-कंट्रोल के व्यावहारिक साधन तथा उपाय भी सरलतापूर्वक उन के लिए एकत्र हो जायें तो क्या यह सम्भव है कि देशों और राष्ट्रों की आबादी को किसी उचित सीमा ही तक घटाया जाए और इस हद से अधिक न घटने दिया जाए ? अनुमान की आवश्यकता नहीं। अनुभव साक्षी है कि संसार के अत्यधिक उन्नतिशील देश भी ऐसी कोई 'उपयुक्त सीमा' निर्धारित करने और व्यक्तियों के कर्मों को उस सीमा के भीतर सीमित करने में सफल नहीं हो सके हैं। फिर वह क्या सामान है, जिस को लेकर तुम इस ईश्वरीय विधि में हस्तक्षेप करने चले हो, जिस के अनुसार वह स्वयं मानव-आबादियों के लिए 'उपयुक्त सीमा' निर्धारित करता और एक अंदाज़े के साथ उनको घटाता-बढ़ाता है।[1]

युद्ध-क्षेत्र में ही नहीं होती, बल्कि युद्ध में शामिल देशों के घरों में भी होती है, केवल लड़ रही पीढ़ियों ही में नहीं होती, आने वाली पीढ़ियों में भी होती है। (लैंड्स, सोशल प्राब्लम्ज़, पृ० ६७७-७८)

१. ऐसे ही अकालों का सिलसिला है। सन १९२०-२१ में चीन में ५ लाख व्यक्ति अकाल के शिकार हो गए। १९४०-४३ में लगभग ६० लाख व्यक्तियों को पीली नदी की घाटी में अकाल और बाढ़ ने अपने घेरे में ले लिया। और अन्दाज़ा है कि इन में से १० लाख व्यक्ति मौत के घाट चढ़े। १९४३-४६ में अकाल के कारण यूनान की पूरी आबादी के नष्ट

आर्थिक बहाना

कहा जाता है कि सीमित आय रखने वाले माता-पिता बच्चों की अधिक संख्या के लिए अच्छी शिक्षा-दीक्षा, उत्तम सामाजिकता और एक उपयुक्त जीवन-आरम्भ के साधन एकत्र करने का सामर्थ्य नहीं रखते। जब बच्चों की संख्या माता-पिता की क्षमता से आगे बढ़ जाती है या ग़रीब माता-पिता के यहां सन्तान उत्पन्न हो जाती है तो उन का जीवन-स्तर घट जाता है। शिक्षा खराब, प्रशिक्षण अपूर्ण, भोजन, ककाल, वस्त्र प्रत्येक वस्तु निःकृष्टतम और आगामी उन्नति के मार्ग सीमित, ऐसी अवस्था में व्यर्थ जनसंख्या बढ़ाने से अच्छा है कि बर्थ-कंट्रोल द्वारा बच्चों को उसी सीमा तक सीमित रखा जाए, जिस सीमा तक माता-पिता के साधन साथ दे सकें और अनुपयुक्त परिस्थितियों में नस्ल की वृद्धि का सिलसिला तोड़ दिया जाए। सामाजिक हित एवं कल्याण के लिए इस से उत्तम उपाय नहीं हो सकता।

यह दलील आजकल लोगों को बहुत अपील कर रही है और देखने में बड़ी सुन्दर जान पड़ती है, परन्तु वास्तव में यह भी उतनी ही कमज़ोर है, जितनी पहली दोनों हैं। एक तो 'अच्छी शिक्षा-दीक्षा,'

हो जाने का ख़तरा पैदा हो गया था और रेड क्रास की असाधारण सहायता के बावजूद हज़ारों व्यक्ति समाप्त हो गए।

महामारियों के कारण मौतों का सिलसिला बराबर जारी है। इन्फ्लुइन्जा के कारण १९१८-१९ में अमेरिका में ५ लाख मौतें हुईं। भारत में इसी महामारी के कारण डेढ़ करोड़ व्यक्ति मरे और टाहिटी (Tahiti) में आबादी का सातवां भाग समाप्त हो गया। युद्ध के कारण जितनी मौतें हुई हैं, गन्दे रोगों से इनसे भी अधिक मौतें हो रही हैं।

'उत्तम सामाजिकता' और 'उपयुक्त आरम्भ' ही अस्पष्ट शब्द हैं, जिन का कोई स्पष्ट एवं निश्चित अर्थ नहीं है। हर व्यक्ति अपने मस्तिष्क में उन का भिन्न अर्थ रखता है और उन के लिए ऐसा जीवन-स्तर निर्धारित करता है, जो उस की अपनी परिस्थितियों एवं साधनों के सही अनुमान पर नहीं, बल्कि अपने से उत्तम लोगों के जीवन-स्तर पर पहुंचने की मनोलोलुपताओं पर आधारित हुआ करता है। ऐसे ग़लत जीवन-स्तर पर जो व्यक्ति अपनी सन्तान के लिए 'अच्छी शिक्षा-दीक्षा' और 'उत्तम सामाजिकता' और 'उपयुक्त आरम्भ' का इच्छुक होगा, वह निश्चय ही यही निर्णय करेगा कि उस के यहां एक दो बच्चों से अधिक बच्चे न हों, बल्कि कुछ परिस्थितियों में तो वह सिरे से निःसन्तान ही रहना पसन्द करेगा, क्योंकि लोगों की इच्छाओं का क्षेत्र, सामान्यतः उन के साधनों से अधिक विस्तृत होता है और जिन बातों को वे इच्छाओं की प्राप्ति पर आश्रित समझते हैं, वे सिरे से प्रकट ही नहीं होतीं। यह एक मात्र सिद्धान्त ही सिद्धान्त नहीं है, बल्कि एक वास्तविक तथ्य है। यूरोप में इस समय ऐसे लाखों जोड़े मौजूद हैं जो केवल इस लिए निःसन्तान रहना पसन्द करते हैं कि उन के समक्ष सन्तान की शिक्षा, दीक्षा, उत्तम सामाजिकता तथा उपयुक्त आरम्भ का स्तर इतना उच्च है कि वे व्यवहार रूप से इस तक पहुंचने का सामर्थ्य ही नहीं रखते।

इसके अतिरिक्त यह दलील सैद्धान्तिक रूप से भी ग़लत है। राष्ट्रों की उन्नति के लिए यह बात लाभदायक नहीं, बल्कि अति हानिकारक है कि उन की नस्लों की शिक्षा-दीक्षा तमाम की तमाम सुख एवं वैभव के वातावरण में हो और उनको कठिनाइयों, विपत्तियों धनहीनता तथा अथक परिश्रम का सामना ही न करना पड़े। यह चीज़ उस सब से बड़े प्रशिक्षालय को बन्द कर देगी जिस में मनुष्य की शिक्षा-दीक्षा, तुम्हारे मदरसों और कालिजों से अत्युत्तम ढंग पर

होती है। वह प्रशिक्षालय समय एवं काल प्रशिक्षालय है जिस को श्रेष्ठ अल्लाह ने स्थापित किया है, ताकि मनुष्य की सहनशीलता, सहिष्णुता, साहस तथा उत्साह की परीक्षा करे और उन्हीं को पास करे जो परीक्षा में पूरे उतर आयें।

व ल नब्लुवन्नकुम बि शय इम मिनल ख़ौफ़ि वल जूअि व नक़्सिम मिनल अम्वालि वल् अन्फ़ुसि वस्समराति व बश्शिरिस्सा-बिरीन (२ : १५५)

यह एक भट्टी है जो अशुद्ध को शुद्ध से विभेदित करती है और तपा-तपा कर खोट निकालती है। यहां विपदायें इसलिए डाली जाती हैं कि उन के मुक़ाबले की शक्ति पैदा हो, कठिनाइयां इस लिए पैदा की जाती हैं कि मनुष्य उन पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास करे, कठोरता इस लिए होती है कि मनुष्य की कमज़ोरियां दूर हों और उस की छिपी हुई शक्तियां व्यवहार-क्षेत्र में प्रकट हों। जो लोग इस प्रशिक्षालय से निवृत्त होकर निकलते हैं, वही संसार में कुछ कर के दिखाते हैं, और संसार में आज तक जितने बड़े-बड़े काम किए गए हैं, वह इस प्रशिक्षालय की सनद हासिल किए हुए लोगों ने किए हैं। तुम इस प्रशिक्षालय को बन्द कर के संसार को सुख-गृह में परिवर्तित करना चाहते हो, ताकि तुम्हारी नस्लें सुखार्थी, दुस्साहसी कामचोर और डरपोक बन कर उठें। तुम चाहते हो कि तुम्हारी सन्तान भोग-विलास के पालने में आंख खोले, ऊंचे मदरसों और विराट निवास स्थानों में रह कर शिक्षा प्राप्त करे और युवक होकर जीवन-क्षेत्र में क़दम रखे तो इस प्रकार कि एक 'उपयुक्त आरम्भ' के लिए पर्याप्त पूंजी मौजूद हो। तुम आशा रखते हो कि इस प्रकार वे संसार में सफ़ल होंगे और उन्नति के आसमानों पर चमकेंगे। परन्तु तुम को मालूम होना चाहिए कि ऐसी शिक्षा-दीक्षा के साथ तुम तीसरी श्रेणी के पशु पैदा कर सकते हो या अधिक से अधिक द्वितीय श्रेणी के। प्रथम श्रेणी के मनुष्य तुम्हारी नस्लों में कभी न उठेंगे। विश्वास न

आये तो विश्व का इतिहास और महान विभूतियों की जीवन-चर्या उठा कर देख लो, तुम को प्रथम श्रेणी के जितने भी मनुष्य मिलेंगे, उन में कम से कम नव्वे प्रतिशत ऐसे होंगे जो दीन व अकिंचन माता-पिता के यहां पैदा हुए, विपदाओं की गोद में पल कर उठे, इच्छाओं के खून और कामनाओं के त्याग के साथ युवावस्था व्यतीत किया। जीवन रूपी समुद्र में विना किसी साधन-सामग्री के फेंक दिए गए, लहरों से तैरना सीखा, थपेड़ों से बढ़ने का पाठ पढ़ा और अन्ततः सफलता-तट हर अपनी उच्चता का पताक़ा लहरा कर ही छोड़ा।

कुछ और दलीलें

ये तीन बड़ी दलीलें थीं। इन के बाद तीन छोटी दलीलें और भी हैं, जिन का हम संक्षेप में उल्लेख कर के संक्षेप ही में उत्तर भी देंगे।

कहा जाता है कि बर्थ-कंट्रोल द्वारा उत्तम प्रकार की नस्लें उत्पन्न की जा सकती हैं, जिन का स्वास्थ्य अच्छा हो, अंग-प्रत्यंग सुदृढ़ हों और जिन में उत्तम कार्य-क्षमता हो। इस विचार का आधार इस कल्पना पर है कि मनुष्य के यहां जव कभी एक-दो वच्चे होंगे, शक्तिवान, स्वस्थ, बुद्धिमान एवं विवेकी होंगे और जब अधिक वच्चे होंगे, तो सव के सव निःशक्त, अस्वस्थ, निर्बुद्ध एवं अविवेकी होंगे, परन्तु इस कल्पना के समर्थन में न कोई ज्ञानात्मक उक्ति है और न नियमित रूप से निरीक्षणों एवं अनुभवों के परिणाम, केवल भ्रम ही भ्रम है, जिस के विरुद्ध हज़ारों गवाहियां इस घटना-स्थल में मौजूद हैं। वास्तव में मनुष्य के जन्म के सम्वन्ध में कोई नियम वनाया ही नहीं जा सकता। वह पूर्ण रूप से ईश्वर के हाथों में है और ईश्वर जिस प्रकार चाहता है, पैदा करता है।

हुवल्लज़ी युसव्विरुकुम् फ़िलअर्हामि कै-फ़ यशाउ। (३ : १)

शक्तिशाली, स्वस्थ और बुद्धिमान सन्तान पैदा करना और निःशक्ति, रोगी और अविवेकी सन्तान न होने देना मनुष्य के वश से वाहर है।

इसी से मिलती-जुलती एक दलील यह है कि वर्थ-कंट्रोल कनुष्य को ऐसे बच्चों को व्यर्थ जन्म और पालन-पोषण की कठिनाइयों से वचा देता है; जिन की विश्व को आवश्यकता नहीं है, जो कभी लाभ-प्रद बनने वाले नहीं हैं अथवा युवावस्था तक पहुंचने से पहले ही मर जाने वाले हैं। यह विचार उस समय सही होता, जब मनुष्य के पास यह मालूम करने का साधन होता कि कौन-सा वच्चा किन गुणों का अधिकारी होगा ? योग्य होगा या अयोग्य ? जीवित रहेगा अथवा मर जाएगा ? उस का वजूद लाभप्रद होगा या बेकार ? जब यह चीज़ मानव-दृष्टि से पूरी तरह छिपी हुई है तो केवल अटकल पर कोई मत निर्धारित करना स्पष्ट मूर्खता है।

यह भी कहा जाता है कि अधिक बच्चों के जन्म देने से औरत का स्वास्थ्य विगड़ जाता है और उस के सौन्दर्य में भी कमी आ जाती है, परन्तु पिछले पृष्ठों में हम वर्णन कर चुके हैं कि वर्थ-कंट्रोल के कृत्रिम उपाय भी स्वस्थ एवं सौन्दर्य के लिए कुछ कम हानिप्रद नहीं हैं। उनसे भी स्वास्थ्य को उतनी ही क्षति पहुंचती है, जितनी कि सन्तान की अविवृद्धि से उत्पन्न हो सकती है। डाक्टरी सिद्धान्तानुसार कोई ऐसा सामान्य सिद्धान्त नहीं बनाया जा सकता कि स्त्री कितने बच्चों का वोझ सहन कर सकती है। यह वात प्रत्येक स्त्री की वैयक्तिक स्थिति पर निर्भर है। अगर एक डाक्टर किसी स्त्री की विशिष्ट परिस्थितियों को दृष्टि में रख कर यह राय क़ायम करे कि गर्भ एवं गर्भपात का संकट उस के जीवन के लिए दुष्कर है तो ऐसी स्थिति में निस्सन्देह डाक्टर के परामर्श से वर्थ-कंट्रोल का कोई उचित रूप धारण किया जा सकता है, वल्कि अगर माता का प्राण बचाने के लिए आवश्यक हो तो गर्भपात भी कराना अवैध नहीं है, परन्तु

स्वास्थ्य को एक मात्र ढोंग बना कर बर्थ-कंट्रोल को सामान्य हित की चीज़ बना लेना और सदैव उस पर अमल करते रहना किसी प्रकार भी वैध नहीं।

इस्लामी सिद्धान्त के पूर्णरूपेण प्रतिकूल

बर्थ-कंट्रोल के समर्थकों की उपरोक्त दलीलों पर दृष्टि डालने से स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाता है कि यह आन्दोलन वस्तुत: ऐहिकता एवं अनीश्वरवाद के विष-वृक्ष की उपज है। जिन लोगों के दिमाग़ से ईश्वर की धारणा निकल चुकी है और जो संसार के मामलों में इस दृष्टि से सोचते और काम करते हैं कि ईश्वर सिरे से मौजूद ही नहीं है या अगर है तो केवल एक निलम्बित अस्तित्व है और मानव आप ही अपने भाग्य का निर्माता और अपने तमाम मामलों को व्यवहार में लाने वाला है, उन्होंने ही इस आंदोलन को जन्म दिया है और इन्हीं दिमाग़ों को इस आंदोलन की दलीलें अपील करती हैं। इस तथ्य के स्पष्ट हो जाने के बाद यह बात किसी व्याख्या की मुहताज नहीं रहती कि यह आंदोलन मूलत: इस्लाम के प्रतिकूल है। इसके सिद्धांत पूर्णरूपेण इस्लामी सिद्धान्त के विरोधी हैं और इस्लाम का एकमात्र उद्देश्य ही उस मनोवृत्ति को मिटाना है, जिस से बर्थ-कंट्रोल जैसे आंदोलनों ने जन्म लिया है।

एक भ्रान्ति का समाधान

मुसलमानों में जो लोग बर्थ-कंट्रोल के समर्थक हैं, उन को अपने समर्थन में क़ुरआन से एक शब्द भी नहीं मिल सकता, इस लिए वे हदीस की ओर पलटते हैं और कुछ ऐसी हदीसों से प्रमाण ढूंढ निकालते हैं, जिन में 'अज़्ल'[1] की इजाज़त दी गई है, पर हदीसों से

---

१. सम्भोग का वह रूप है जब कि एक पुरुष सन्तानोत्पत्ति से बचने के लिए स्त्री के गर्भाशय में वीर्य न जाने दे और मुक्ति प्राप्त कर ले।

प्रमाणित करने में कुछ बातों को ध्यान में रखना जरूरी है, जिन की उपेक्षा कर के किसी (धार्मिक) अध्यादेश का निष्कर्षण नहीं किया जा सकता :

१ सम्बन्धित समस्या के बारे में तमाम हदीसों की तह को पहुंचा जाए।

२. प्रिय सन्देष्टा (सल्ल०) के कथनों के समय तथा स्थान को दृष्टि में रखा जाए।

३. उस समय अरब की जो स्थिति थी उसको ध्यान में रखा जाए

अतएव हम इन तीनों बातों को ध्यान में रख कर उन हदीसों पर दृष्टि डालेंगे जो इस सम्बन्ध में बयान की जाती हैं। यह सभी को मालूम है कि अरब जाहिलियत में बर्थ कंट्रोल के लिए हत्या का चलन आम था जिस के दो कारण थे। एक आर्थिक स्थिति का चिंताजनक होना, जिनके कारण माता-पिता अपनी सन्तान का बध कर डालते थे, ताकि उन की रोज़ी में कोई साझीदार न पैदा हो। दूसरे आत्म-सम्मान की हद से बढ़ी हुई भावना, जो लड़कियों की हत्या का प्रेरक होती थी। इस्लाम ने आकर उस को बलात् समाप्त किया और इस सम्बन्ध में अरबों की मनोवृत्ति ही बदल दी। इस के बाद मुसलमानों का रुझान 'अज़्ल' अर्थात गर्भाशय में वीर्य्य पहुंचाए बिना 'संम्भोग' की ओर बढ़ा, पर यह रुझान आम न था। न बर्थ कंट्रोल का कोई आंदोलन ही प्रचलित था, न इस को 'राष्ट्रीय नीति' बनाना उद्देश्य था, न इस के प्रेरक अज्ञानता के युग की वह भावनायें एवं विचार थे, जिन के कारण सन्तति-हत्या के अत्याचारपूर्ण ढंग पर अमल किया जाता था बल्कि वस्तुत: इसके तीन कारण थे जो हदीसों के अनुगमन से हम को ज्ञात होते हैं।

एक यह विचार कि लौंडी से सन्तान न हो।

दूसरे यह कि लौंडी के बच्चे की माता हो जाने से यह भय था कि उस को फिर सदैव के लिए अपने पास रखना होगा।

तीसरे यह कि दूध पिलाने के समय में गर्भाधान हो जाने से दूध पीते बालक को क्षति पहुंचने का भय था।

इन कारणों से मुख्य परिस्थितियों से कुछ सहावा रज़ि० ने अज़ल की आवश्यकता का अनुभव किया और यह देख कर कि इस कार्य के नाजायज होने का कोई आदेश क़ुरआन व हदीस में नहीं आया है, इस पर अमल किया। उदाहरणार्थ हज़रत इब्ने अब्बास, साद बिन अबी वक़्क़ास और अबू अय्यूब अन्सारी रज़ि०। इन्हीं में से एक हज़रत जाबिर रज़ि० हैं, जिन्होंने शास्त्रनियामक की खामोशी को उन की सम्मति समझा है। अतएव उन से जो हदीसें वर्णित हैं उन के शब्द इस प्रकार हैं—

'हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के समय में 'अज़ल' किया करते थे, इस हाल में कि क़ुरआन उतर रहा था'।

'हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के समय में 'अज़ल' करते थे जबकि क़ुरआन उतर रहा था।'

इन हदीसों से प्रकट होता है कि हज़रत जाबिर रज़ि० और उन के से विचार रखने वाले सहाबा रज़ि० ने 'अज़ल' के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट आदेश न होने के कारण लाभ उठाया। एक और हदीस जो इन्हीं सहाबी से इमाम मुस्लिम ने नक़ल की है कि "हम संदेष्टा के समय में 'अज़ल' करते थे, इस की सूचना हज़रत मुहम्मद सल्ल० को पहुंची और आपने हम को रोका नहीं' इस हदीस में भी संदिग्धता है। स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं होता; कि 'अज़ल' के सम्बन्ध में किस प्रकार प्रश्न किया गया और हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने उस पर क्या फ़र्माया।

इस का विस्तृत विवेचन दूसरी हदीसों में भी है। अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० से वर्णित है कि हमारे हाथ लौंडियां आईं और हमने अज़ल किया, फिर इस सम्बन्ध में हज़रत मुहम्मद सल्ल० से पूछा तो आपने फ़र्माया 'क्या तुम ऐसा करते हो ? क्या तुम ऐसा करते हो??

क्या तुम ऐसा करते हो ??? क़ियामत तक जो बच्चे पैदा होने हैं, वे तो होकर ही रहेंगे।' (बुखारी)

इमाम मालिक ने मुअत्ता में इन्हीं अबू सईद से यह कथन नक़ल किया है कि वनी मुस्तलक़ के युद्ध में हमारे साथ लौंडियां आईं। बाल-बच्चों की दूरी हम पर भार हो रही थी। हम ने चाहा कि इन स्त्रियों से आनन्दित हों, पर इस के साथ हमारी इच्छा यह भी थी कि उन को बेच दें। अतः हमने विचार किया कि उन से 'अज़्ल' करना चाहिए, ताकि सन्तान पैदा न हो। हमने हुज़ूर सल्ल० से प्रश्न किया। आपने फ़र्माया—

मा अलैकुम अल्लातफ़अलू मामिन नस्मतिन काइनतिन इल्ला वहि य-काइनतुन

(क्या विगड़ जाएगा यदि तुम ऐसा न करो? क़ियामत तक जो बच्चे पैदा होने वाले हैं, वे तो होकर ही रहेंगे।)

मुस्लिम की हदीस है कि जब 'अज़्ल' के सम्बन्ध में हज़रत मुहम्मद सल्ल० से प्रश्न किया गया, तो आपने फ़र्माया--

ला अलैकुम अल्ला तफ़अलू ज़ालिकुम

(यदि तुम ऐसा न करो तो कुछ नुक़्सान न हो जाएगा)

एक दूसरी हदीस में है—

वलिमा यफ़अलु ज़ालि-क अहदुकुम

(और तुममें से कोई यह काम क्यों करे ?)

एक और हदीस में है कि एक व्यक्ति ने आकर कहा कि मेरे पास एक लौंडी है और मैं नहीं चाहता कि उस से सन्तान हो। इस पर हुज़ूर ने फ़र्माया—

'तू चाहे तो अज़्ल कर ले, परन्तु जो सन्तान उस के भाग्य में लिखी है, वह तो होकर ही रहेगी।'

इनके अलावा हज़रत अबू सईद से तिर्मिज़ी ने यह वर्णन भी नक़ल किया है कि सहाबा में से जो ज्ञानी थे वे साधारणतया 'अज़्ल' को घृण

समझते थे। मुअत्ता में इमाम मालिक ने बयान किया है कि हज़रत इब्ने उमर रज़ि० भी उन लोगों में से हैं जो 'अज़्ल' को नापसन्द करते थे।

इन तमाम कथनों को सामने रखने से ज्ञात होता है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने इस काम की इजाज़त न दी थी, वल्कि आप इस को व्यर्थ एवं अप्रिय कर्म समझते थे। आपको जिन साथियों को धर्मज्ञ होने का पद प्राप्त था, वे भी इसको अच्छी दृष्टि से न देखते थे, पर चूंकि 'अज़्ल' का कोई सर्व-व्यापी आंदोलन राष्ट्र में प्रचलित नहीं था और इसको एक सर्व साधारण कार्य-पद्धति वनाया नहीं जा रहा था, वल्कि केवल कुछ व्यक्ति अपनी विवशताओं एवं आवश्कताओं के आधार पर इस क्रिया को करते थे, इस लिए आपने इसको स्पष्ट रूप से अवैध घोषित नहीं किया। यदि उस वर्थ कंट्रोल का कोई सर्व-व्यापी आंदोलन आरम्भ किया जाता, तो निश्चय ही हुज़ूर सल्ल० अति कठोरता से इसको रोकते।

अज़्ल पर वर्थ कंट्रोल के दूसरे तरीक़ों का भी अनुमान करके हम कह सकते हैं कि इन तरीक़ों को शास्त्रनियामक ने केवल इस कारण हराम नहीं किया कि कुछ परिस्थितियों में मनुष्य वस्तुतः उन को ग्रहण करने पर वाध्य होता है और सावधानी का तक़ाज़ा यही है कि उसको ऐसा करने की इजाज़त दी जाए। उदाहरणार्थ, गर्भाधान से स्त्री का प्राण संकट में पड़ जाना, उसके स्वास्थ्य को असाधारण क्षति पहुंचने का भय या दूध पिलाने के समय में दूध पीते वच्चे को क्षति पहुंचने का भय या ऐसे और ही अन्य कारण। ऐसी परिस्थितियों में अगर मनुष्य डाक्टरी रायों से बर्थ कंट्रोल का कोई रूप धारण करे तो यह जायज़ है, जैसा कि हम ऊपर लिख आए हैं, पर अनावश्यकतावश उसको एक सामान्य कार्य-पद्धति वनाना इस्लाम के पूर्णरूपेण प्रतिकूल है और वे समस्त विचार जिन के आधार पर ऐसी कार्य-पद्धति धारण करने की ओर रुझान पैदा होता है इस्लामी सिद्धांत के विरुद्ध है।

परिशिष्ट १

इस्लाम और फ़ेमिली प्लानिंग

यों तो इस विषय पर मत व्यक्त करने के लिए यह बात बिल्कुल काफ़ी समझी जा सकती है कि औलाद की पैदाइश को किसी अभीष्ट सीमा के भीतर रखने की इच्छा और प्रयत्न और उस के व्यावहारिक तरीक़ों के बारे में इस्लाम के आदेश नक़ल कर दिए जायें और फिर यह बता दिया जाए कि लेखक के नज़दीक इन आदेशों की रोशनी में ये चीज़ें जायज़ हैं या नाजायज़, लेकिन सच तो यह है कि इस तरह के एक तंग दायरे में विषय और वार्ता को सीमित कर के बात करना न तो शोध-कार्य का हक़ अदा करने के लिए काफ़ी है और न इस तरीक़े से इस्लाम का दृष्टिकोण ही ठीक समझा जा सकता है। इसके लिए पहले ही यह जानना ज़रूरी है कि 'फ़ेमिली प्लानिंग' की समस्या अपने आप में क्या है, क्यों पैदा हुई है, हमारे जीवन में किन-किन पहलुओं से इसका सम्बन्ध है। इस पर अमल करने से जीवन के विभिन्न पहलुओं पर क्या प्रभाव पड़ते हैं और यह कि इस के लिए कोई व्यक्तिगत यत्न और राष्ट्रीय स्तर पर किए गए यत्नों में कोई अंतर भी है या नहीं और अगर अंतर है तो वह क्या है और इस दृष्टि से दोनों के आदेशों में क्या अन्तर होना चाहिए। इन बातों को अच्छी तरह जान लेने के बाद ही यह सम्भव हो सकता है कि हम इस बारे में स्वभावगत धर्म के आदेशों की वास्तविकता तक पहुंच

सकें और उन का पूरा-पूरा उद्देश्य समझ सकें। इसलिए मैं पहले इन्हीं बातों के बारे में कुछ कहूंगा।

समस्या का स्वरूप

'फ़ेमिली प्लानिंग' वास्तव में कोई नई चीज़ नहीं है, बल्कि एक प्राचीन विचार का केवल एक नया नाम है। मनुष्य को अपने इतिहास के विभिन्न कालों में यह आशंका सताती रही है कि उस की नस्ल बढ़ने की सम्भावनायें असीम हैं और धरती के साधन सीमित हैं। अगर वह अबोध रूप से नस्ल बढ़ाता चला जाए तो यह आबादी कहां समाएगी और क्या खाएगी। इस आशंका को प्राचीन काल का आदमी बड़े सादे तरीक़े से बयान किया करता था, पर वर्तमान समय के आदमी ने बाक़ायदा हिसाब लगा कर बता दिया कि हमारी आबादी ज्यामितीय ढंग से बढ़ती है और इस के विपरीत हमारी रोज़ी के साधन, चाहे कितने ही अच्छे तरीक़ों से बढ़ाए जायें, बहरहाल वह अधिक से अधिक केवल गणितीय ढंग ही से बढ़ सकते हैं। दूसरे शब्दों में इंसानी आबादी १-२-४-८-१६-३२-६४-१२८-२५६ के अनुपात से बढ़ती है और रोज़ी के साधन केवल १-२-३-४-५-६-७-८-९ के अनुपात ही से बढ़ने सम्भव हैं। अतएव अगर इन्सानी आबादी किसी रुकावट के बिना बढ़ती चली जाए तो वह हर २५ वर्ष में दोगुनी होती चली जाएगी और दो शताब्दी के भीतर ही १ से शुरू होकर २५६ तक जा पहुंचेगी, लेकिन रोज़ी के साधन इस मुद्दत में १ से चल कर केवल ९ तक पहुंचेंगे। तीन शताब्दी में यह अनुपात ४०९६ : १३ होगा और दो हज़ार वर्ष में आबादी और उस के आर्थिक साधनों के मध्य सिरे से कोई अनुपात ही न रह जाएगा। यह सीधा-सा हिसाब लगा कर विश्व-स्तर पर सोचने वाले लोग धरातल के बारे में और क्षेत्रीय स्तर पर सोचने वाले लोग सीमित क्षेत्रों के बारे में, यह परेशानी व्यक्त करते हैं कि संसार में या अमुक

क्षेत्र में, आबादी अगर यों ही बढ़ती रही तो, भले ही आर्थिक साधनों को बढ़ाने के लिए हाथ-पांव मारे जायें, उन्नति व प्रगति तो दूर की बात, हमें जीवन बिताने के लिए भी पूरे साधन न जुट पायेंगे, यहां तक कि एक समय वह आएगा जब धरती पर सब आदमियों के लिए खड़े रहने की जगह भी बाक़ी न रहेगी।

यह है समस्या का स्वरूप। इस समस्या को हल करने के लिए प्राचीन समय का आदमी, यद्यपि अब भी पहले दोनों साधनों का उपयोग करने से चूक तो नहीं रहा है, पर अब वैज्ञानिक प्रगति के साथ उस का अधिकतर ज़ोर तीसरे साधन पर है। वह इस उद्देश्य के लिए ऐसी दवाओं और यंत्रों से भी काम लेना चाहता है, जिन से सन्तानोत्पत्ति-शक्ति को बाक़ी रखते हुए आदमी जब तक चाहे, औलाद की पैदाइश को रोक सके और ऐसे साधनों का भी उपयोग करने पर उतारू है जिन से मर्द या औरत या दोनों स्थायी रूप से बांझ हो जायें। इसका नाम कभी बर्थ कंट्रोल रखा जाता है, कभी इसे सन्तति-सीमाकरण के नाम से याद किया जाता है और कभी इस के लिए फ़ेमिली प्लानिंग (परिवार नियोजन) या ऐसा ही कोई और सुन्दर परिभाषिक शब्द गढ़ लिया जाता है।

क्या आबादी की वृद्धि से धनहीनता का ख़तरा सही है?

अब हमें सबसे पहले यह देखना चाहिए कि वह आशंका कहां तक सही है जिस के कारण यह समस्या पैदा हुई।

इस प्रश्न पर जब हम विचार करते हैं तो पहली ही नज़र में यह तथ्य हमारे सामने आता है कि पूरे मानव-इतिहास में आज तक कभी कभी मानव-नस्ल उस ज्यामितीय तरीक़े से नहीं बढ़ी है जो माल्थस और फ्रांसिस प्लास के अनुयायी बड़े हिसाबी ढंग से बयान करते हैं और कोई काल ऐसा नहीं आया है जब आबादी और साधनों में वह

अनुपात रहा हो जिस का उन लोगों ने दावा किया हो।। अगर ऐसा होता तो मानव-नस्ल कभी की इस संसार से मिट चुकी होती और आज हम इस समस्या पर वार्ता करने के लिए मौजूद ही न होते।

यह एक जानी-बूझी वास्तविकता है और शायद इसी कारण इस को कुछ अधिक विचारणीय नहीं समझा जाता है कि यह धरती जिस पर मानव आवाद है, मानव के आने से बहुत पहले मौजूद थी और पहले ही इस में वे तमाम साधन जुटा दिए गए थे, जो मानव-जीवन और मानव-संस्कृति व सभ्यता के विकास के लिए आवश्यक थे। मनुष्य ने यहां आकर कोई चीज़ पैदा नहीं की है, वल्कि जो कुछ यहां मौजूद था, केवल उसे अपनी बुद्धि और परिश्रम से ज्ञात कर लिया है और उस से काम लिया है। आरम्भिक मानव-आवादी की आवश्यकताओं से लेकर आज इस वीसवीं शताब्दी के मनुष्य की आवश्यकताओं तक कोई आवश्यकता ऐसी नहीं है जिसे पूरा करने के साधनों को यहां मौजूद न पाया गया हो और शायद किसी को इससे इंकार न होगा कि आगे भी जो आवश्यकतायें मनुष्य की पैदा होंगी, उन के लिए अनुकूल वस्तुएं कहीं न कहीं वातावरण में या धरातल पर या धरती की तहों में या समुद्र की गहराइयों में मौजूद हैं। मनुष्य न इन वस्तुओं का वनाने वाला है, न उन का स्थान, उन की मात्रा और उन के प्रकट होने का समय निश्चित करने में उस का लेशमात्र भी कोई दखल है। कोई ईश्वर को माने या प्रकृति नामक किसी अंधी शक्ति को, बहरहाल इस बात को मानना ही पड़ेगा कि जो भी इस जगत में मनुष्य को लाने का ज़िम्मेदार है, उसी ने मनुष्य की तमाम आवश्यकताओं का ठीक-ठीक अन्दाज़ा कर के उन के अनुसार हर प्रकार की सामग्री यहां पहले से जुटा दी है।

ये सारे साधन सदा से मनुष्य के सामने नहीं रहे हैं। जव मनुष्य पहले-पहले यहां आया है, तो पानी, मिट्टी, पत्थर, वनस्पतियां और जंगली जानवरों के अलावा पेट भरने का कोई साधन उसे दीख न

पड़ता था, पर ज्यों-ज्यों आबादी बढ़ी है और वह यहां जीने के लिए काम करता गया है, उन साधनों के अक्षय भंडार उस के लिए खुलते गए हैं। उसने नए-नए साधन खोज निकाले हैं और पुराने साधनों के नए प्रयोगों को भी ज्ञात किया है। आज तक के मानव-इतिहास में कभी एक क्षण भी ऐसा नहीं आया है कि मानव-आबादी तो फैली हो, मगर उस के साथ-साथ आर्थिक साधन न फैले हों। मनुष्य अनेकों बार इस भ्रम में फंसा है कि इस धरती पर जितने कुछ भी अजीविका भंडार थे, वे सब उस के सामने आ चुके हैं और अब मानव आबादी को उन्हीं साधनों पर जीवन बिताना है जो आंखों से नज़र आते हैं, लेकिन एक बार नहीं, सैकड़ों बार मानव-जाति को यह तजुर्बा हो चुका है कि आबादी की वृद्धि के साथ-साथ प्रकृति ऐसी-ऐसी जगहों से अपार आजीविका-भंडार निकालती चली गई है, जहां उनके पाए जाने का मनुष्य विचार भी नहीं कर सकता था।

हज़ारों वर्ष ईसा पूर्व से मनुष्य अपने चूल्हे पर रखी हुई हंडिया से भाप निकलती देख रहा था, पर ईसा से १७०० सौ वर्ष बाद तक भी किसी को यह अंदाज़ा न था कि अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यही भाप अजीविका के कितने नए द्वार खोलने वाली है। सुमेरी सभ्यता के समय से आदमी तेल और उस के जलने से भिज्ञ था, पर १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक भी किसी को यह मालूम न था कि बहुत जल्द धरती के पेट से पेट्रोल के सोते उबलने वाले हैं और उसके साथ ही मोटरों और हवाई जहाज़ों का उद्योग उभर कर आर्थिक साधनों का एक नया संसार पैदा करने वाला है। अनजाने समय से मनुष्य रगड़ से चिंगारियां छूटते देख रहा था, लेकिन बिजली का मर्म उस पर हज़ारों वर्ष बाद जाकर इतिहास के एक विशेष मोड़ पर खुला और शक्ति का एक बिल्कुल नया भंडार उस के हाथ आ गया, जिस से आज मानव-आर्थिकता के वे काम लिए जा रहे हैं जिन का अब से डेढ़ सौ वर्ष पहले भी कोई अल्लाह का बन्दा सोच भी नहीं

सकता था, फिर यह अणु (Atom) जिस के विश्लेष्य होने और न होने का विवाद ईसा जन्म से भी वर्षों पहले से दार्शनिकों के शिक्षालयों में हो रहा था, उस के बारे में आखिर कौन जनता था कि बीसवीं शताब्दी में यह अणु फटेगा और शक्ति का वह खज़ाना उसके भीतर से निकलेगा जिसके सामने मनुष्य के सारे जाने-पहचाने साधन तुच्छ होकर रह जायेंगे। ये वह परिवर्तन हैं, जो आर्थिक साधनों में पिछले दो सौ वर्ष के भीतर-भीतर प्रकट हुए हैं और उन्होंने मनुष्य को संसार में जीवन बिताने के लिए वह कुछ सामग्रियां जुटा दी हैं और उस के जीवन-साधनों में वह वृद्धि की है, जिस का सपना भी अठारहवीं शताब्दी में नहीं देखा जा सकता था। उन के प्रकट होने से पहले अगर कोई व्यक्ति केवल अपने समय के आर्थिक साधनों को ही देख कर यह हिसाब लगाता कि मानव-आबादी की वृद्धि का ये साधन कहां तक साथ देंगे तो अन्दाज़ा कीजिए कि वह कितना मूर्ख होता।

इस प्रकार का हिसाब लगाने वाले केवल यही ग़लती नहीं करते कि अपने समय के सीमित ज्ञान को भविष्य के लिए भी काफ़ी समझ बैठते हैं, वल्कि वे इस वात को भी भूल जाते हैं कि आवादी की वृद्धि से केवल खाने वालों की वृद्धि ही नहीं होती, कमाने वालों की भी वृद्धि होती है।

अर्थ शास्त्र की दृष्टि से पैदावार के तीन तत्व माने जाते हैं—ज़मीन, पूंजी और आदमी। इन में से असल और सब से बड़ा तत्व आदमी है, लेकिन अधिक आवादी के ग़म में घुलने वाले उस को उत्पादन के बजाय मात्र उपभोग का तत्व समझ लेते हैं के तत्व की हैसियत से उस के चरित्र को नजरन्दाज़ कर देते हैं। उन्हें यह विचार तक नहीं रहता कि आज तक मनुष्य ने जितनी प्रगति की, आवादी की वृद्धि के साथ, वल्कि उसी के कारण की है। आबादी में वृद्धि न केवल नए तत्वों को जुटाती है, वल्कि कार्य के लिए कुछ प्रेरक

तत्व भी पैदा कर देती है। हर दिन और अधिक मनुष्यों के लिए भोजन, वस्त्र, मकान और दूसरी आवश्यकताओं को पूरी करने की अनिवार्यता ही वह मूल प्रेरक है जो मनुष्य को वर्तमान साधनों के विस्तार, नए साधनों की खोज और हर जीवन-विज्ञान में आविष्कार करने को विवश करता है। इस के कारण बंजर ज़मीनें कृषि योग्य हो जाती हैं, दलदलों और झाड़ियों और समुद्रों के नीचे से ज़मीन निकाली जाती है, खेती के नए तरीक़े खोजे जाते हैं, खानें खोदी जाती हैं, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और समुद्र में हर ओर मनुष्य हाथ-पांव मारता है और जीवन-साधनों की खोज में हर दिशा को बढ़ता चला जाता है। यह प्रेरक न हो तो सुस्ती, अकर्मण्यता और जो कुछ है, उसी पर भरोसा कर लेने के सिवा और क्या प्राप्त होगा? यही प्रेरक तो है जो एक ओर आदमी को अधिक से अधिक काम करने पर उभारता है और नए-नए काम करने पर उभारता है और दूसरी ओर रोज़ नए-नए काम करने वाले भी मैदान में लाता चला जाता है।

क्या आबादी की वृद्धि से सच में आर्थिक साधन कम हुए हैं?

हमारे समय का निकटतम इतिहास उन लोगों के हिसाब को झुठलाने के लिए काफ़ी है, जो कहते हैं कि जीवन-साधनों की वृद्धि आबादी की वृद्धि का साथ नहीं दे सकती।

१८८० में जर्मनी की आबादी ४५ मिलियन थी। उस समय वहां के निवासी भूखों मर रहे थे और मुद्दत से हज़ारों की संख्या में जर्मन लोग अपने देश से निकल-निकल कर बाहर चले जा रहे थे, लेकिन इस के बाद ३४ वर्ष के भीतर जर्मनी की आबादी ६८ मिलियन तक पहुंच गई और इस मुद्दत में बजाय इस के कि आबादी की वृद्धि से जर्मनों के जीवन-साधन कम हो जाते, उन के साधनों में

आवादी की वृद्धि के मुक़ावले में कई सौ गुना अधिक वृद्धि हो गई, यहां तक कि उन्हें अपनी आर्थिक मशीन को चलाने के लिए वाहर से आदमी मंगाने पड़े। सन् १६०० में जो विदेशी जर्मनी में काम कर रहे थे, उन की तायदाद ८ लाख थी। सन १६१० में यह तायदाद १३ लाख के क़रीव पहुंच गई।

इस से भी अधिक विचित्र स्थिति वह है जो द्वितीय विश्व-युद्ध के वाद से पश्चिमी जर्मन में देखी जा रही है। वहां आवादी में स्वाभाविक वृद्धि के अलावा पूर्वी जर्मनी, हालैंड, चेकोस्लोवाकिया और दूसरे कम्युनिस्ट देशों से जर्मन नस्ल के लगभग एक करोड़ २५ लाख शरणार्थी भी पहुंचे हैं और अब तक हर दिन सैंकड़ों की तायदाद में चले आ रहे हैं। इस देश का क्षेत्रफल केवल ६५ हजार वर्ग मील है और आवादी ५ करोड़ २० लाख से ऊपर पहुंच चुकी है, जिस के हर पांच आदमियों में एक शरणार्थी है। फिर इस आबादी में ६५ लाख आदमी अयोग्य होने के कारण पेन्शन पा रहे हैं, लेकिन इस के बावजूद पश्चिमी जर्मनी की आर्थिक स्थिति दिन प्रति दिन उन्नति कर रही है। उस का धन युद्ध से पहले के संयुक्त जर्मनी के धन से भी अधिक है। उसे आबादी में वृद्धि की नहीं, आवादी की कमी की शिकायत है और काम करने के लिए जितने हाथ मौजूद हैं, उन सब का उपयोग करने के वाद वह काम करने वाले और हाथों को भी चाहता है।

हालैंड को देखिए। अठारहवीं शताब्दी में उस की आवादी मुश्किल से दस लाख थी। डेढ़ सौ वर्ष के भीतर वह तरक़्क़ी कर के १६५० में एक करोड़ से ऊपर पहुंच गई। यह आवादी केवल १२८५० वर्ग मील के क्षेत्र में वस रही है, जहां प्रति व्यक्ति के लिए पूरी एक एकड़ कृषि योग्य जमीन भी प्राप्त नहीं है, लेकिन आज यह आवादी न केवल अपनी खाद्य सामग्री एकत्र कर रही है, वल्कि बहुत सा पदार्थ तो वाहर निर्यात कर रही है। उस ने समुद्र को धकेल कर

और दलदलों को साफ़ कर के दो लाख जमीन निकाली है और तीन लाख एकड़ ज़मीन और निकालने की कोशिश कर रही है। उस के आज के धन से उस धन का कोई मेल ही नहीं है, जो डेढ़ सौ वर्ष पहले उस की दस लाख आवादी को प्राप्त था।

इंग्लैंड को देखिए। १७८६ ई० में ब्रिटेन व आयरलैंड की सामूहिक जन-संख्या एक करोड़ वीस लाख थी। १९३१ ई० में ४ करोड़ ६० लाख हो गई और आज दक्षिणी आयरलैंड निकल जाने के बाद भी ५ करोड़ २६ लाख है। पर क्या कोई व्यक्ति कह सकता है कि इस पांच गुनी बृद्धि ने ब्रिटेन की आवादी को पहले से अधिक धनहीन कर दिया है ?

सामूहिक रूप से सम्पूर्ण जगत को लीजिए। १८ वीं शताब्दी के आखिर से उस की आवादी में असाधारण बृद्धि होनी शुरू हुई है. पर उस समय से लेकर आज तक संसार की आवादी जितनी बढ़ी है उस से कहीं अधिक उत्पादन के साधन बढ़े हैं। आज मध्यवर्गीय लोगों को वह कुछ प्राप्त है जो दो सौ साल पहले वादशाहों को भी प्राप्त न था। आज के जीवन-स्तर से दो सौ वर्ष पहले के जीवन-स्तर का मुक़ावला ही क्या है ?

आबादी में वृद्धि का सही इलाज

इन उदाहरणों से यह वात स्पष्ट हो जाती है कि आवादी और जीवन-साधनों के बीच सन्तुलन बाक़ी रखने का यह नुस्खा कि आबादी को घटाया जाए या उसे बढ़ाने से रोक दिया जाए, सिरे से विल्कुल ही ग़लत है, इस से तो सन्तुलन बना रहने के बजाए और अधिक विगड़ जाने की आशंका है। इस के बजाए आवादी में वृद्धि का सही इलाज यह है कि जीवन-साधनों को वढ़ाने और नए साधनों को खोज निकालने की और कोशिशें की जायें। यह नुस्खा जहां भी आज़माया गया है, वहां आवादी और साधनों के मध्य एक मात्र

सन्तुलन ही बाक़ी नहीं रहा है, बल्कि आबादी की वृद्धि की अपेक्षा साधनों और जीवन-स्तरों में बहुत ज़्यादा वृद्धि हुई है।

यहां तक जो कुछ कहा गया है, वह केवल आजीविका और उस के उस असीम साधनों के बारे में था, जो मनुष्य के पैदा करने वाले ने—या नस्तिकों की भाषा में प्रकृति ने—अपनी ज़मीन में उसके लिए जुटा रखे हैं। अब मैं संक्षेप में स्वयं मानव-आबादी और उसकी बृद्धि के बारे में भी कुछ कहूंगा ताकि इस समस्या का यह पहलू भी हमारे सामने आ जाए कि क्या सच में, हम उसका कोई सही नियोजन (Planning) कर भी सकते हैं या नहीं।

मानव जन-संख्या का वास्तविक नियोजन करने वाला कौन है?

शायद कोई व्यक्ति भी इस भ्रम में न होगा कि वह स्वयं अपने निश्चय व इरादे से इस जगत में आया है। केवल यही नहीं कि उसके आने में उसके अपने निश्चय और इरादे का कोई दख़ल नहीं है, बल्कि उसके मां-बाप का दख़ल भी इस मामले में नाममात्र का है। वर्तमान युग के अन्वेषणों से जो तथ्य प्रकाश में आए हैं, उनसे मालूम होता है कि हर सम्भोग के अवसर पर मर्द के शरीर से जो तत्व निकलता है, उसमें २२ करोड़ से लेकर ३० करोड़ तक कीटाणु (Spermatozoa) मौजूद होते हैं, बल्कि कुछ विशेषज्ञों ने तो इसका अन्दाज़ा ५० करोड़ लगाया है। इन करोड़ों कीटाणुओं में से हरेक अपने भीतर एक मनुष्य बन जाने की पूरी क्षमता रखता है, बशर्ते कि उसे किसी औरत के अंड-कोशा (Egg Cell or Ovum) में दाखिल हो जाने का मौक़ा मिल जाए। इन में से हर कीटाणु पैतृक विशेषताओं और व्यक्तिगत गुणों के एक पृथक सामन्जस्य का पोषक होता है, जिससे एक अलग व्यक्तित्व जन्म ले सकता है। दूसरी ओर हर व्यस्क नारी के गर्भाशयों (Ovaries) में लगभग ४ लाख कच्चे

अंडे मौजूद रहते हैं, पर उन में से एक पाकी (तुहर) की मुद्दत में केवल एक अंडा पक्का होकर किसी समय (सामान्यत: मासिक धर्म के आने से १४ दिन पहले) बाहर आता है और अधिक से अधिक २४ घंटे तक इसके लिए तैयार रहता है कि अगर मर्द का कोई कीटाणु आकर उसमें प्रवेश कर जाए तो गर्भ ठहर जाए। १२ वर्ष की उम्र से ४८ वर्ष की उम्र तक ३६ वर्ष की मुद्दत में एक नारी के गर्भाशय औसतन ४३८ पक्के अंडे बाहर निकालते हैं जो फलदायक हो सकते हैं। इन अंडों में से भी हरेक के भीतर मातृ-वंश की मौरूसी विशेषतायें और व्यक्तिगत गुणों का एक पृथक सामंजस्य होता है, जिससे एक अलग व्यक्तित्व वजूद में आ सकता है। मर्द-औरत के हर सम्भोग के मौक़े पर मर्द के शरीर से करोड़ों कीटाणु निकल कर औरत के अंडे की खोज में दौड़ लगाते हैं, मगर या तो वहां अंडा मौजूद नहीं होता या वे सब उस तक पहुंचने में असफल हो जाते हैं। ऐसे ही औरत की हर पाकी (तुहर) की मुद्दत में एक विशेष समय पर एक अंडा निकलता है और एक दिन व रात तक मर्द के कीटाणुओं का इन्तिज़ार करता रहता है, पर इस बीच उनमें या तो सम्भोग ही नहीं होता या होता है तो किसी कीटाणु की पहुंच उस अंडे तक नहीं होती। यों बीसियों सम्भोग, बल्कि कुछ लोगों के उम्र भर के सम्भोग निष्फल बीत जाते हैं। मर्द के अरबों कीटाणु नष्ट होते रहते हैं और औरत के सैकड़ों अंडे बरबाद हो जाते हैं। केवल एक विशेष घड़ी होती है जब मर्द के एक कीटाणु को औरत के एक अंडे के भीतर दाखिल होने का मौक़ा मिल जाता है और उसके नतीजे में गर्भ हो पाता है।

यह है वह व्यवस्था जिसके तहत् मनुष्य जन्म लेता है। इस व्यवस्था पर एक विहंगम दृष्टि डाल कर ही आप स्वयं देख सकते हैं कि उसके भीतर हमारे नियोजन के लिए कितनी गुंजाइश है। किसी मां, किसी बाप, किसी डाक्टर और किसी सरकार का इस

वारे में लेश मात्र भी कोई दखल नहीं है कि एक जोड़े के वहुत से सम्भोगों में से किस सम्भोग में गर्भ ठहर जाए। मर्द के अरवों कीटाणुओं में से किसी विशेष कीटाणु का औरत के सैकड़ों अंडों में से किस अंडे के साथ ले जाकर मिलाया जाए और इन दोनों के मिलाप से किस प्रकार का व्यक्तित्व पैदा किया जाए। फ़ैसला तो बड़ी बात, किसी को यह भी पता नहीं होता कि वास्तव में कब एक औरत के गर्भाशय में गर्भ ठहर जाता है और उसमें किन विशेषताओं और किस योग्यता के मनुष्य की नींव डाली गई है। यह सब कुछ उस सत्ता के इशारे से होता है जो मानवीय निश्चयों से उच्च है और उस सृष्टि की सारी योजना, बिना किसी साझीदारी के बना और चला रही है। वही गर्भ के ठहरने की घड़ी तै करता है। वहां उस विशेष कीटाणु और उस विशेष अंडे का चयन करता है जिन्हें एक दूसरे से मिलना है और वही यह तै करता है कि उनके मिलने से लड़का पैदा किया ज़ाए या लड़की। सही व पूर्ण मनुष्य हो या अधूरा और कटा-फटा, सुन्दर हो या कुरूप, बुद्धिमान हो या निर्बुद्धि, सुपुत्र पैदा हो या कुपुत्र। इस सारी योजना में जो काम मनुष्य के सुपुर्द किया गया है, वह इससे अधिक कुछ नहीं है कि मर्द और औरत अपनी प्राकृतिक मांग पूरी करने के लिए आपस में मिलें और सन्तानोत्पत्ति की मशीन को बस हरकत दे दें। इसके वाद सब कुछ स्रष्टा के वश में है।

मानव जन-संख्या का वास्तविक नियोजन वातस्व में रचना को यही व्यवस्था कर रही है। आप तनिक विचार करें, एक ओर मनुष्य की सन्तानोत्पत्ति-शक्ति का हाल यह है कि एक मर्द के शरीर से केवल एक समय में जो वीर्य्य निकलता है वह देश की आवदी से कई गुनी आवादी पैदा कर सकता है, पर दूसरी ओर इस प्रवल उत्पादन-शक्ति को किसी श्रेष्ठतम सत्ता ने इतना सीमित कर रखा है कि आदि काल से आज तक हज़ारों साल की मुद्दत में मानव-नस्ल केवल

तीन अरब की तायदाद तक पहुंच सकी है। आप स्वयं हिसाब लगा कर देख लें, तीन हज़ार वर्ष ईसा पूर्व से अगर सिर्फ़ एक मर्द और औरत की औलाद को स्वाभाविक वेग से बढ़ने का अवसर मिल जाता और वह हर ३० या ३५ वर्ष में दोगुनी होती चली जाती तो आज केवल उसी एक ज़ोड़े की औलाद इतनी बड़ी संख्या में होती कि उसे लिखने के लिए २६ अंकों की आवश्यकता पड़ती। प्रश्न यह है कि मानव-जाति की जो आबादी इस वेग से बढ़ सकती थी, आख़िर रचयिता की अपनी योजना के सिवा और किसकी योजना ने आज तक उसको क़ाबू में रखा है? वास्तव में उसी की लागू योजना मनुष्य को संसार में लाई है। वही यह तै करता है कि किस समय कितने आदमी पैदा करे और किस वेग से आदम की औलाद को बढ़ाए या घटाए। वही एक-एक व्यक्ति, एक-एक मर्द और एक-एक औरत के बारे में यह तै करता है कि वह किस रूप में किन शक्तियों और योग्यताओं के साथ पैदा हो, किन परिस्थितियों में पले-बढ़े और कितना कुछ काम करने का मौक़ा उसे दिया जाए। वही यह तै करता है कि किस समय किस जाति में कैसे आदमी पैदा किए जायें और कैसे न किए जायें, किस जाति को कितना बढ़ने दिया जाए और कहां जाकर उसे रोक दिया जाए या पीछे फेंक दिया जाए। उसके इस नियोजन को न हम समझ सकते हैं, न हममें उसे निलम्बित कर देने की शक्ति है। हम इस में हस्तक्षेप करने का प्रयत्न करेंगे तो यह अंधेरे में तीर चलाने का समानार्थी होगा, क्योंकि इस कारख़ाने को जिस महान विधि के साथ चलाया जा रहा है, उस के प्रत्यक्ष को भी हम पूरी तरह नहीं देख रहे हैं, कहां यह कि उस के अप्रत्यक्ष तक हमारी निगाह पहुंच सके और हम तमाम सम्बन्धित तथ्यों को जान कर कोई योजना बना सकें।

सम्भव है कोई सज्जन मेरी इस बात को धार्मिकता की एक तरंग क़रार देकर पीठ पीछे डालने की कोशिश करें और पूरे ज़ोर के साथ

यह प्रश्न करें कि अपनी आवादी को अपने आर्थिक साधनों को देख कर हम स्वयं क्यों न निश्चित कर लें, मुख्य रूप से जबकि ईश्वर ने हमको ऐसे ज्ञानात्मक व कलात्मक साधन दे दिए हैं जिन से हम आवादी बढ़ाने और मिटाने में समर्थ हो गए हैं ? इसलिए अव मैं तनिक विस्तार में यह वताऊंगा कि आवादी के पैदा होने और वढ़ने के प्राकृतिक प्रवन्ध में हमारे हस्तक्षेप के परिणाम क्या हो सकते हैं और व्यावहारिक रूप से जहां यह हस्तक्षेप किया गया है, वहां वास्तव में परिणाम क्या निकल रहे हैं।

आबादी का नियोजन करने के बजाए परिवार का नियोजन क्यों ?

इस सिलसिले में पहली वात, जिसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, यह है कि फ़ेमिली प्लानिग (परिवार नियोजन) के पक्ष में अर्थ शास्त्र के आधार पर जितनी दलीलें दी जाती हैं, वे वास्तव में फ़ेमिली प्लानिग का नहीं वल्कि आवादी के नियोजन (Populatian Planning) का तक़ाज़ा करते हैं। दूसरे शब्दों में इन दलीलों का तक़ाजा यह है कि हम एक ओर अपने देश के आर्थिक साधनों का ठीक-ठीक हिसाब लगायें और दूसरी ओर यह तै करें कि इन साधनों के अनुपात से इस देश की आबादी इतनी होनी चाहिए और इस रफ़्तार से उस में मरने वालों की जगह नए आदमी आने चाहियें, पर सच तो यह है कि इस प्रकार का नियोजन उस समय तक नहीं हो सकता, जब तक विवाह और परिवार की संस्थाओं को विल्कुल खत्म कर के तमाम मर्दों और औरतों को सरकार का 'मज़दूर' न बना लिया जाए और ऐसा प्रवन्ध न कर दिया जाए कि दोनों जातियों के इन मज़दूरों को एक निश्चित योजना के अनुसार केवल उत्पादन (Production) के लिए सरकारी ड्यूटी के रूप में एक-दूसरे से मिलाया जाता रहे और अभीष्ट संख्या में औरतों के गर्भवती हो

जाने के बाद उन को एक-दूसरे से अलग कर दिया जाया करे या फिर यह नियोजन इस रूप में हो सकता है कि औरतों और मर्दों के प्रत्यक्ष सम्भोग को बिल्कुल निषिद्ध कर दिया जाए। ख़ून के बैंकों की तरह 'मनी बैंक' क़ायम कर दिए जायें और पिचकारियों के ज़रिए गायों, भैंसों और घोड़ियों की तरह औरतों को भी एक विशेष निश्चित संख्या में गाभिन किया जाता रहे। इन दो शक्लों के सिवा कोई तीसरी शक्ल ऐसी नहीं हो सकती जिस से एक योजना के अनुसार देश के आर्थिक साधन और उसकी आबादी के बीच सन्तुलन बनाए रखा जा सके।

चूंकि मनुष्य अभी तक इस पतन के लिए तैयार नहीं है इसलिए विवश होकर आबादी के नियोजन के लिए उसे पारिवारिक नियोजन का तरीक़ा अपनाना पड़ता है अर्थात यह कि आदमी के बच्चे पैदा तो उन्हीं छोटे-छोटे आज़ाद कारख़ानों में हों, जिन का नाम 'घर' है और उन के जन्म का प्रबन्ध भी केवल एक-एक मां और एक-एक बाप के हाथों में ही रहे, लेकिन इन 'आज़ाद कारख़ानेदारों' को इस बात पर तैयार किया जाये कि वे स्वतः पैदावार कम कर दें।

फ़ेमिली प्लानिंग के साधन

इस उद्देश्य को व्यावहारिक रूप से प्राप्त करने के दो तरीक़े अपनाये जाने सम्भव हैं और वही अपनाये जा रहे हैं—

एक यह कि व्यक्तियों से उनके निजी स्वार्थ के नाम पर अपील की जाये और निरन्तर प्रचार द्वारा उनमें यह एहसास पैदा किया जाये कि अधिक बच्चे पैदा करके वे अपना जीवन-स्तर घटा लेंगे, इसलिए उन्हें अपने सुख-वैभव और धन-सम्पन्नता के लिए और अपने बच्चों का भविष्य बेहतर बनाने के लिए कम बच्चे पैदा करने चाहियें। अपील का यह रूप निश्चय ही इस कारण अपनाना पड़ता है कि स्वतन्त्र व्यक्तियों को अपने निजी मामलों में स्वतः अपने अमल

पर पाबन्दियां लगाने के लिए विशुद्ध सामूहिक स्वार्थ के नाम पर तैयार नहीं किया जा सकता। इस उद्देश्य के लिए उनके निजी हित से अपील करना बहुत ज़रूरी है।

दूसरा तरीक़ा यह अपनाना पड़ता है कि व्यापक स्तर पर ऐसे तरीक़ों का ज्ञान लोगों में फैलाया जाए और ऐसे यन्त्रों या दवाइयों को आम लोगों के हाथों में पहुंचा दिया जाए, जिनसे मर्द और औरत आपसी आनन्द प्राप्त करते रहें, पर गर्भ न होने दें।

इस नियोजन के परिणाम

इन दोनों उपायों के इस्तेमाल से जो परिणाम निकलते हैं उन्हें मैं क्रमवार आपके सामने रखता हूं :

१. आबादी की कमी

इन तरीक़ों से जो फेमिली प्लानिंग की जाती है, वह कभी उन उद्देश्यों को पूरा नहीं कर सकती जिनके लिए आबादी के नियोजन पर ज़ोर दिया जाता है। आबादी के नियोजन के लिए तो यह ज़रूरी है कि हम अपने देश के साधनों को देखकर यह तै करें कि यहां इतने निवासी होने चाहिएं और इनके अन्दर नए इन्सानों की पैदाइश इस अनुपात से होती रहनी चाहिये, ताकि देश की जन-संख्या उस अभीष्ट स्तर पर क़ायम रहे, लेकिन जब यह तै करना एक-एक विवाहित जोड़े के अधिकार में हो कि वे कितने बच्चे पैदा करें और कितने न करें और इस चीज़ का फ़ैसला, वे देश की आवश्यकता की दृष्टि में रखकर नहीं, अपने सुख-वैभव, और जीवन-स्तर में सुधार की दृष्टि से करने लगें तो इस बात की कोई गारंटी नहीं कि वे निश्चय ही इतने बच्चे पैदा करते रहेंगे जितने उन के देश व राष्ट्र को अपनी आबादी का स्तर बनाये रखने की ज़रूरत है। ऐसी स्थिति में इसी की आशा अधिक है कि जितना-जितना उनमें निजी सुख और जीवन-स्तर के उठने का

चस्का पड़ता जायेगा, वे औलाद की पैदाइश कम करते चले जायेंगे। यहां तक कि राष्ट्र की आबादी बढ़ने के बजाए घटनी शुरू हो जायेगी।

इस परिणाम की केवल आशा ही नहीं की जाती, बल्कि व्यवहारतः फ्रांस में हो चुका है। संसार में पहला देश, जिसने बर्थ कंट्रोल के तरीक़ों को व्यापक स्तर पर आज़माया है, यही फ्रांस है। वहां १९ वीं शताब्दी के आरम्भ से ही यह आंदोलन लोकप्रिय होने लगा था। एक शताब्दी के भीतर-भीतर इसका फल यह हुआ कि फ्रांस के अधिकांश ज़िलों में जन्म-दर, मृत्यु-दर से कम होता चला गया। १८९० से १९११ तक २१ वर्षों में से सात वर्ष ऐसे गुजरे, जिन में सामूहिक रूप से फ्रांस का जन्म-दर, मृत्यु-दर से एक लाख ६८ हज़ार कम था। १९११ ई० के मुक़ाबले में १९२१ में फ्रांस की आबादी २१ लाख कम निकली। १९३२ ई० में फ्रांस के ९० ज़िलों में से केवल १२ ऐसे थे जिनका जन्म-दर मृत्यु-दर से कुछ अधिक था। १९३३ ई० में ऐसे ज़िलों की तायदाद केवल ६ रह गई अर्थात ८४ ज़िले ऐसे थे जिन में मरने वालों की संख्या पैदा होने वालों से अधिक थी और सिर्फ़ ६ ज़िले ऐसे थे जिन में पैदा होने वाले मरने वालों से अधिक थे। इसी मूर्खता का फल फ्रांस को दो विश्वव्यापी युद्धों में ऐसी भयानक हारों के रूप में देखना पड़ा, जिन्होंने उस की महानता को समाप्त कर दिया।

प्रश्न यह है कि क्या हमारा देश भी यह खतरा मोल ले सकता है जबकि उसे हर क्षेत्र में कुशल मनुष्यों की ज़रूरत है?

२. चरित्र का ह्रास

निजी स्वार्थ के नाम पर जो अपील बच्चे कम पैदा करने के लिए की जाएगी, उस का प्रभाव सिर्फ़ बच्चे ही कम पैदा करने तक सीमित न रहेगा। एक बार आप लोगों के सोचने का अन्दाज़ बदल

कर इस रुख पर डाल दीजिए कि उनकी कमाई का अधिक से अधिक भाग उन के अपने ही सुख-वैभव पर खर्च होना चाहिए और उन के भीतर यह एहसास पैदा कर दीजिए कि परिवार के जो सदस्य कमाने के वजाय केवल खर्च करने वाले हैं, उन के शरीक हो जाने से कमाने वाले का जीवन-स्तर गिर जाता है, जिसे सहन न करना चाहिए, इस के वाद आप देखेंगे कि लोगों को केवल नई पैदा होने वाली औलाद ही न खलेगी, वल्कि उन को अपने बूढ़े मां-वाप भी खलेंगे, अपने भाई-वहन भी खलेंगे, ऐसे पुराने रोगी भी, जिन के स्वस्थ होने की आशा ही न रह गई हो, ऐसे रिश्तेदार भी खलेंगे जो अपाहिज और नाकारा हो चुके हों, तात्पर्य यह कि हर उस व्यक्ति का वजूद उन की दृष्टि में असह्य वोझ वन जायेगा, जो उस की कमाई में हिस्सा बटा कर उन का जीवन-स्तर गिराता है। स्पष्ट है जो व्यक्ति स्वयं अपनी औलाद तक का वोझ उठाने के लिए तैयार न हो और इसी कारण आने वालों का रास्ता रोक कर खड़ा हो जाए, वह आखिर उन लोगों का बोझ कैसे उठायेगा जो पहले से आये बैठे हैं और औलाद से कम ही प्रिय हो सकते हैं। इस तरह यह आंदोलन हमारे चरित्र का दीवाला निकाल देगा, हमारे व्यक्तियों को स्वार्थी वना देगा और उनके मन से त्याग, प्रेम, सहानुभूति और सहायता के भावना-स्रोतों को सुखा कर रख देगा।

यह परिणाम भी मात्र अटकल व अनुमान के आधार पर नहीं निकाला गया है, वल्कि जिन समाजों में सोचने का यह ढंग पैदा किया गया है वहां ये सारी बातें अमलन हो रही हैं। पश्चिमी देशों में आज बूढ़े माता-पिता के साथ जो व्यवहार हो रहा है और भाई-वहनों और निकटतम नातेदारों को विपत्तियों में उनकी जैसी कुछ देख-भाल की जाती है, उसे कौन नहीं जानता ?

—०—

३. ज़िना की अधिकता

इस आँदोलन को व्यावहारिक रूप से सफल बनाने के लिए जब बर्थ-कंट्रोल के तरीक़ों का ज्ञान आमतौर पर फैलाया जायेगा और उसके साधन व उपकरण सामान्य-जनों तक पहुंचा दिये जायेंगे तो किसी के पास भी इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि इस ज्ञान से और इन साधनों व उपकरणों से केवल विवाहित जोड़े ही फ़ायदा उठायेंगे, बल्कि ज्यादा सही यह है कि विवाहित जोड़े इस से उतना लाभ नहीं उठायेंगे जितना बिन-ब्याहे 'दोस्त' उठायेंगे और इस से ज़िना को वह तरक़्क़ी होगी जो हमारे समाज के इतिहास में कभी नहीं हुई है। जहां शिक्षा-दीक्षा में धर्म व चरित्र का दिन प्रतिदिन ह्रास होता चला जा रहा हो, जहां सिनेमा, नग्न चित्र, गन्दा साहित्य और बेहयाई के गाने, यौन-कामुकता को हर दिन बढ़ा रहे हों, जहां पर्दे के सीमायें टूट रही हों और मर्दों-औरतों के अबाध मेल-जोल के अवसर दिन प्रतिदिन अधिक से अधिक पैदा हो रहे हों, जहां औरतों के पहनावे में नग्नता और सौन्दर्य-प्रदर्शन चरम सीमा पर हो, जहां बहु-पत्नित्त्व के मार्ग में क़ानूनी रुकावटें खड़ी कर दी गयी हों, पर नाजायज़ ताल्लुक़ात के रास्ते में कोई क़ानूनी रुकावट न हो और जहां १३ वर्ष से कम उम्र की लड़की का विवाह निषिद्ध हो, वहां चरित्र-हीनता के रास्ते में बस एक ही अन्तिम रुकावट बाक़ी रह जाती है और वह है नाजायज़ गर्भ का भय। एक बार यह रुकावट भी दूर कर दीजिए और दुष्प्रवृत्ति वाली औरतों को यह इत्मीनान दिला दीजिए कि वे गर्भ ठहरने का कोई खतरा मोल लिए बिना ही अपने आपको अपने मर्द मित्रों के सुपुर्द कर सकती हैं, इसके बाद आप देखेंगे कि ज़िना की बाढ़ के आ जाने से कोई शक्ति न रोक सकेगी।

यह परिणाम भी मात्र काल्पनिक नहीं है, बल्कि संसार में जहां

भी वर्थ कंट्रोल का चलन आम हुआ है, वहां ज़िना का अमल इतना वढ़ा है कि उस का कोई उदाहरण मानव-इतिहास में नहीं मिलता।

व्यक्तिगत वर्थ कंट्रोल और उस का सामूहिक आंदोलन

फ़ेमिली प्लानिंग को एक सामान्य आंदोलन के रूप में प्रचलित करने के ये तीन परिणाम ऐसे हैं जिन से बचना किसी तरह सम्भव नहीं है। अगर वर्थ कंट्रोल केवल कुछ व्यक्तिगत ममालों तक सीमित रहे, जिन में कोई विवाहित जोड़ा अपने निजी हालात के आधार पर इस की ज़रूरत महसूस करता हो और एक संयमी और नेक आलिम उस की ज़रूरत को सही मान कर, सावधानी वरतने के लिए इसे 'जायज़' का फ़तवा दे दे और सिर्फ़ एक डाक्टर ही से उसे बर्थ कंट्रोल के साधन व उपकरण मिल सकें, तो इस से वे सामूहिक हानियां कभी नहीं हो सकतीं जिन का मैंने अभी-अभी उल्लेख किया है, पर इस सीमित व्यक्तिगत वर्थ कंट्रोल की हैसियत उस आंदोलन से बिल्कुल ही भिन्न है जो फ़ेमिली प्लानिंग के लिए व्यापक स्तर पर आम लोगों में फैलाई जाए और जिस के साथ गर्भ-निरोधक साधन भी हर-हर व्यक्ति तक पहुंचा दिए जाएं। ऐसी स्थिति में उपरोक्त परिणामों के निकलने से कोई रोक नहीं सकता।

इस्लाम का दृष्टिकोण

इस वार्ता के बाद मेरे लिए यह वताना वहुत आसान हो गया है कि जिस स्वभावगत धर्म के हम अनुयायी हैं, वह इस के बारे में हमारी क्या रहनुमाई करता है। आमतौर पर वर्थ कंट्रोल के समर्थक जिन हदीसों से 'अज़्ल' (Coitus Interrupts) का जायज़ होना सिद्ध करते हैं, वे इस वास्तविकता को भुला देते हैं कि इन हदीसों की पृष्ठभूमि में ब्रर्थ कंट्रोल का कोई आम आंदोलन मौजूद न था।

उस समय हज़रत मुहम्मद सल्ल० के सामने कोई व्यक्ति यह फ़तवा पूछने के लिए नहीं गया था कि हुज़ूर ! हम ऐसा कोई आंदोलन चला सकते हैं या नहीं, वल्कि वहां तो विभिन्न समयों में अनेकों व्यक्तियों ने केवल अपने व्यक्तिगत हालात पेश कर के केवल यह मालूम किया था कि ऐसी स्थिति में एक मुसलमान के लिए अज़्ल करना जायज़ है या नहीं। इन अलग-अलग पूछने वालों को आपने जो उत्तर दिये थे, उन में से कुछ में आपने इस से मना फ़र्माया, कुछ में इसे एक व्यर्थ का कार्य कहा और आप के कुछ उत्तरों से या आप की ख़ामोशी से जायज़ होने का पहलू भी निकलता है। इन अनेकों उत्तरों में से अगर केवल इन्हीं उत्तरों को छांट लिया जाए, जो जायज़ होने के पक्ष में जाते हैं, तब भी उनको वस व्यक्तिगत वर्थ कंट्रोल ही के लिए दलील बनाया जा सकता है। इस के आधार पर एक आम आंदोलन जारी कर देने की बात जायज़ नहीं कही जा सकती। यह बात मैं अभी आप से कह चुका हूं कि व्यक्तिगत वर्थ कंट्रोल और उस के सामूहिक आंदोलन में कितना महान अन्तर है। इस अन्तर को भुला कर एक के जायज़ होने को दूसरे के लिए जायज़ बना देने की दलील दूर की कौड़ी से अधिक की हैसियत नहीं रखती।

रहा नस्ल को सीमाकृत करने का सामूहिक आंदोलन, तो उस के मौलिक चिन्तन से लेकर उस की कार्य-पद्धति तक और उस के व्यावहारिक परिणामों तक, हर चीज़ इस्लाम से निश्चित रूप से संघर्षीत है। उस का मौलिक चिन्तन आख़िर इस के अलावा क्या है कि आवादी वढ़ेगी तो आजीविका कम हो जाएगी और जीने के लाले पड़ जायेंगे, लेकिन क़ुरआन शुरू से ही इस चिन्तन को ग़लत कहता है। वह वार-वार विभिन्न तरीक़ों से यह वात मनुष्य के बुद्धिगम्य करता है कि रोज़ी देना उसी की ज़िम्मेदारी है जिसने पैदा किया है। वह पैदाइश का काम अन्धा-धुन्ध तरीक़ों से नहीं कर रहा है कि आंखें वन्द कर के वस पैदा करता चला जाए और यह न देखे कि

जिस धरती पर वह इस मख़्लूक़ (जीव) को डाल रहा है, यहां उस की रोज़ी का सामान भी है या नहीं। यह काम उसने किसी और पर नहीं छोड़ा है कि पैदा तो वह कर दे और रोज़ी पहुंचाने की चिन्ता कोई दूसरा करे। वह मात्र रचयिता ही नहीं, पालनहार भी है और अपने काम को वह स्वयं अधिक जानता है। इस विषय पर जगह-जगह क़ुरआन मजीद में वार्ता की गई है। अगर मैं इस सिलसिले की तमाम आयतें आप को सुनाऊ तो बात लम्बी हो जाएगी। मैं यहां नमूने की कुछ आयतों का अनुवाद प्रस्तुत करता हुं—

'और कितने ही जानदार हैं कि अपनी रोज़ी उठाए नहीं फिरते। अल्लाह ही उन को रोज़ी देता है, वही तुमको रोज़ी देगा।'

—अल-अनकबूत ६०

'ज़मीन में चलने वाला कोई जीव ऐसा नहीं है जिस की रोज़ी अल्लाह के ज़िम्मे न हो।' —हूद : ६

'वास्तव में अल्लाह ही रोज़ी देने वाला है, बड़ी शक्ति वाला ज़बरदस्त।' —अज्ज़ारियात : ५८

'आसमानों और ज़मीन के ख़ज़ाने उसी के हाथ में हैं। जिस के लिए चाहता है, रोज़ी फैला देता है और जिस के लिए चाहता है तंग कर देता है।' —अश्शूरा : १२

'और हमने धरती में तुम्हारे लिए आजीविका-साधन जुटा दिए हैं और उन दूसरों के लिए भी, जिन को रोज़ी देने वाले तुम नहीं हो। कोई चीज़ ऐसी नहीं है जिस के ख़ज़ाने हमारे पास न हों और हम (इन ख़ज़ानों में से) जो चीज़ भी उतारते हैं, एक सोचे-समझे ढंग से उतारते हैं। —अल-हिज्र : २०-२१

इन तथ्यों का उल्लेख करने के बाद अल्लाह मनुष्य के ज़िम्मे जो काम डालता है, वह यह है कि उस के इन ख़ज़ानों से वह अपनी रोज़ी खोजने का प्रयत्न करे। दूसरे शब्दों में रोज़ी देना अल्लाह का काम है और ढूंढ़ना मनुष्य का काम।

'पस अल्लाह ही के पास रोज़ी तलाश करो और उसी की बन्दगी बजा लाओ और उस के कृतज्ञ बनो।' —अन्कबूत : १७

इसी आधार पर क़ुरआन मजीद अनेकों स्थानों पर उन लोगों की निन्दा करता है जो अज्ञानता-काल में रोज़ी की कमी के भय से अपनी औलाद को क़त्ल कर दिया करते थे।

'और क़त्ल न करो अपनी औलाद को निर्धनता के भय से हम तुम्हें रोज़ी देते ही हैं, उन को भी देंगे।'

—अनआम १५१, बनी इस्राईल ३१

इन आयतों में निन्दा एक ही ग़लती की नहीं है, बल्कि दो ग़लतियों की है। एक ग़लती यह है कि वे अपनी औलाद को क़त्ल कर दिया करते थे और दूसरी ग़लती यह कि वे सन्तान के जन्म को अपने लिए निर्धनता का कारण समझते थे। इसीलिए दूसरी ग़लती का सुधार यह कह कर फ़रमाया गया कि आने वाले मनुष्यों को रोज़ी पहुंचाने का ज़िम्मेदार तुमने अपने आप को क्यों समझ लिया है। तुम को भी हम रोज़ी देते हैं, उन की भी रोज़ी हमारे ही ज़िम्मे है। अब अगर नस्ल की बढ़ोतरी को रोकने के लिए बच्चों का क़त्ल न किया जाए, बल्कि ऐसे साधन प्रयोग में लाए जाने लगें, जिन से गर्भ ही न ठहरने पाये तो यह केवल पहली ग़लती से रुकना होगा, दूसरी ग़लती फिर भी बाक़ी रह जाएगी, जबकि आर्थिक साधनों के तंग हो जाने का खतरा ही सन्तान के जन्म को रोकने का मूल प्रेरक हो।

यह तो है क़ुरआन का दृष्टिकोण उस चिन्तन के बारे में, जिन के कारण बर्थ कंट्रोल का विचार संसार में पहले भी पैदा होता रहा है और आज भी पैदा हो रहा है। अब उन परिणामों पर एक दृष्टि डालिए जो इस विचार को एक सामूहिक आन्दोलन का रूप देने से निश्चय ही पैदा होते हैं और स्वयं विचार कीजिए कि क्या इस्लाम इन में से किसी परिणाम को भी पसन्द कर सकता है। जो धर्म ज़िना को निकृष्ट नैतिक अपराध समझता हो और उस के लिए कठोर से

कठोर दण्ड निश्चित करता हो, क्या आप आशा रखते हैं कि वह किसी ऐसे आंदोलन को सहन करेगा जिस के फ़ैलने से समाज में इस अप्रिय कुकर्म के आम चलन का भय हो ? जो धर्म मानव-समाज में नातेदारों से सम्बन्ध जोड़ने और त्याग व सहानुभूति का भाव रखने पर बल देता हो, क्या आप आशा करते हैं कि वह इस स्वार्थयुक्त मनोवृत्ति के पलने-बढ़ने को सहन कर लेगा जो बर्थ कंट्रोल से निश्चित रूप से पैदा होती है ? ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर सामान्य बुद्धि स्वयं दे सकती है। इनके लिए आयतें और हदीसें लाने की ज़रूरत नहीं।

—o—

परिशिष्ट २

बर्थ कन्ट्रोल आन्दोलन पर एक वैज्ञानिक दृष्टि

—प्रोफ़ेसर ख़ुर्शीद अहमद

आज पूर्वी देशों में और मुख्य रूप से इस्लामी जगत में बर्थ कंट्रोल के आंदोलन को बड़ी तेज़ी से फैलाने की कोशिश की जा रही है। धर्म और बुद्धि—दोनों दृष्टि से इस पर ज़ोरदार बहसें हो रही हैं और सोच-विचार के अनेकों पहलू सामने आ रहे हैं। इन वार्ताओं से कोई सहमत हो या मतभेद रखता हो, पर इस सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता कि वाद-विवाद द्वारा सत्य की खोज का रास्ता आसान हो जाता है और दलीलों के टकराव से सही बात तक पहुंचने के अधिक अवसर पैदा हो जाते हैं। वैज्ञानिक वार्ताओं की सबसे बड़ी उपयोगिता ही यह है कि वे सोच-विचार के मार्गों को प्रकाशमान कर के मानव-चिन्तन के विकास की सामग्री जुटा देती हैं। सच्चा इंसान वह है जो अन्धानुकरण के पिटे-पिटाए मार्ग को अपनाने के बजाए अल्लाह की दी हुई क्षमताओं से काम लेकर ईमानदारी और निष्ठा के साथ अपना रास्ता निकालता है, तर्कों की भाषा में बात करता है और तजुर्बे से शिक्षा ग्रहण करता है।

दुर्भाग्यवश इस्लामी जगत में एक वर्ग ऐसा पैदा हो गया है जिस

ने अपनी मानसिक व चिन्तनगत स्वतन्त्रता को पश्चिम की दासता की चौखट पर भेंट चढ़ा दिया है जो 'इज्तिहाद' के बजाय यूरोप के अन्धानुकरण और नक़्क़ाशी की रीति अपनाता है और अपने मस्तिष्क से सोचने के बजाए पश्चिम के दैनिक जीवन पर आंखें बन्द कर के अमल करना चाहता है। पक्षपात, अन्धानुकरण, अनुदारता कुछ धार्मिकों ही के एक विशेष वर्ग में नहीं पायी जाती, ये विशेषतायें वर्तमान शिक्षा व सभ्यता पर गर्व करने वाले व्यक्तियों में भी मौजूद हैं और पहले गिरोह से कहीं अधिक हैं। ये लोग 'इज्तिहाद' का नाम बड़े ज़ोर से लेते हैं, पर इस से उन का अभिप्राय केवल यह होता है कि इस्लाम को किसी तरह पश्चिम के सांचे में ढाला जाए। वास्तविक 'इज्तिहाद' जिस चीज़ का नाम है, उस की इन्हें हवा भी नहीं लगी। ये अपने मस्तिष्क से सोचने के बजाए पश्चिम के मस्तिष्क से सोचते हैं, पश्चिम की भाषा बोलते हैं और पश्चिम के पद-चिह्नों पर बिना सोचे-समझे बढ़े चले जा रहे हैं। वहां अच्छी चीज़ें भी हैं और बुरी भी। हमें अपनी आंखें खोल कर देखना चाहिए और अपने मस्तिष्क से काम लेते हुए पूरे विवेक के साथ अपना रास्ता स्वयं निकालना चाहिए। अन्धानुकरण किसी भी राष्ट्र की मानसिक मृत्यु और सांस्कृतिक दीवालिया का सूचक है।

स्वर्गीय डा० इक़बाल अपनी सारी उम्र इसी मनोवृत्ति का विरोध करते रहे। उन्हें ऐसे लोगों से यही शिकायत थी कि—

तक़लीद पे यूरुप के रज़ामन्द हुआ तू।
मुझ को तो गिला तुझ से है, यूरुप से नहीं है॥

वह अफ़सोस के साथ कहते हैं—

कर सकते थे जो अपने ज़माने की इमामत।
वे कुहना दिमाग़ अपने ज़माने के हैं पैरू॥

और उन का आह्वान अपने राष्ट्र के लिए यह था—

देखे तू ज़माने को अगर अपनी नज़र से।

अफ़लाक मुनव्वर हों तेरे नूरे सहर से ॥
ख़ुर्शीद करे कस्बे ज़िया तेरे शरर से ।
ज़ाहिर तेरी तक़दीर हो सीमाये क़मर से ॥
दरिया मुतलातिम हों तेरी मौजे गुहर से ।
शर्मिदा हो फ़ितरत तेरे एजाज़े हुनर से ॥
अग़यार के अफ़कार व तखय्युल की गदाई ।
क्या तुमको नहीं अपनी ख़ुदी तक भी रसाई ॥

वर्थ कंट्रोल की समस्या पर दुर्भाग्यवश इस्लामी जगत में इसी अन्धानुकरण और पश्चिमी मनोवृत्ति के साथ विचार किया जा रहा है । जरूरत है कि हम पश्चिम के रंगीन शीशों से अपनी दुनिया को देखने के बजाए उस के सही रंग में देखें और उदारता और विशाल-हृदयता का प्रमाण दें । दलील के लिए हमारा दिल हमेशा खुला हुआ हो और मात्र पक्षपात और नक़्क़ाली के आगे हम किसी क़ीमत पर भी हथियार न डालें, इसलिए कि वह, 'जो न दलील को सुनता है और न दलील से बात करना चाहता है, पक्षपाती, अनुदार और कठ-हुज्जती है और वह जो दलील का मुक़ाबला करने का साहस नहीं करता, वास्तव में दास है और जो दलील देने की योयग्ता ही नहीं रखता, वह मन्दबुद्ध और मूर्ख है ।'

हम चाहते हैं कि आप इस समस्या पर दासता-दृष्टि से विचार करने के बजाए स्वतन्त्र व निष्पक्ष होकर विचार करें । हमारी वर्तमान पेशकश इसी सिलसिले की एक कड़ी है ।

१. क्या वर्थ कंट्रोल का आधार आर्थिक है ?

वर्थ कंट्रोल के समर्थक आज कल अपने तर्कों का आधार आर्थिक मामलों पर रखते हैं और आबादी की अधिकता से पैदा होने वाली आर्थिक कठिनाइयों के मुक़ाबले के लिए बर्थ कंट्रोल की नीति को अपनाने का प्रस्ताव लाते हैं, पर प्रश्न पैदा होता है कि क्या सचमुच

वर्तमान जगत में इस आंदोलन को उन्नति आर्थिक कारणों से ही प्राप्त हुई है ? इतिहास के अध्ययन से तो जान पड़ता है कि आर्थिक साधनों और वर्थ कंट्रोल में कदापि कोई सम्बन्ध नहीं रहा ।

माल्थस (Malthus) ने आबादी की समयस्या के आर्थिक पहलू को अवश्य प्रस्तुत किया था और आवादी की वृद्धि को रोकने का मश्विरा भी उसने ज़रूर दिया था (स्पष्ट रहे कि वर्थ कंट्रोल का माल्थस कट्टर विरोधी था । वह तो सन्तति-निरोध के लिए ब्रह्मचर्य और दाम्पत्य जीवन में नैतिक अनुवन्ध अपनाने पर ज़ोर देता था) पर उस के जीवन में और उसके वाद जो आर्थिक और औद्योगिक क्रान्ति पश्चिमी जगत में आई उसने स्थिति ही पूरी वदल दी और उस के कारण जीवन का वह रुख सामने आया जो माल्थस की दृष्टि से ओझल था, अर्थात उत्पादन-वृद्धि की असीम सम्भावनायें ।

१७६८ ई० में माल्थस ने उत्पादन-साधनों की कमी की वात कही थी, लेकिन १६ वीं शताब्दी की आर्थिक प्रगति के प्रकाश में उस के वयान किए हुए तमाम ख़तरे हवाई साबित हुए ।

१८६८ ई० में पूरे सौ साल वाद, सर विलियम क्रोक्स, अध्यक्ष ब्रिटिश एसोसिएशन ने फिर ख़तरे की घंटी बजाई और कहा कि सन् १६३१ तक पैदावार की कमी भयानक रूप अपना लेगी और मानवता वड़े पैमाने पर अकाल और मौत से दो-चार होगी, लेकिन १६३१ ई० में संसार उत्पादन-अभाव के बजाए उत्पादन-आधिक्य (Over Production) की समस्या से दो-चार था । आवादी और आर्थिक-साधनों के वारे में आज तक जो भी भविष्यवाणियां की गई हैं, उन के वारे में एक ही वात विश्वास के साथ कही जा सकती है—और वह यह कि ये सदैव ग़लत ही सावित हुई हैं । प्रो० जिड और रिस्ट (Charles Gide and Charles Rist) तो यहां तक कहते हैं कि—

'निस्सन्देह इतिहास उस (अर्थात माल्थस) की वताई आशंकाओं

की पुष्टि करने से इन्कार कर देता है। संसार के किसी एक देश में भी ऐसी स्थितियां नहीं पैदा हुई जिन के आधार पर उसे जन-संख्या आधिक्य (Over Population) में फंसा समझा जा सके। वल्कि कुछ स्थितियों में तो—जैसे फ्रांस में—आवादी की बृद्धि वहुत ही सुस्त रफ़्तार से हुई। दूसरे देशों में बृद्धि उल्लेखनीय है, पर कहीं भी यह धन-बृद्धि से अधिक तेज़ रफ़्तार नहीं है।'[1]

एरिक रोल (Erich Roll) भी यही कहता है—

'आर्थिक प्रगति की वास्तविकताओं ने माल्थस के सिद्धान्त का अच्छी तरह खंडन कर दिया है।'[2]

इतिहास का निष्पक्ष अध्ययन इस अकाट्य सत्य को स्पष्ट करता है कि किसी भी पश्चिमी देश में बर्थ कंट्रोल की नीति को इसलिए नहीं अपनाया गया कि उस देश में आर्थिक साधनों का अभाव था और देश का उत्पादन आवादी की बढ़ती जरूरतों के लिए अपर्याप्त था। इस आंदोलन के फ़ैलने का समय (उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से वीसवीं शती के आरम्भिक ३० वर्ष तक) यूरोप व अमेरिका की आर्थिक प्रगति और स्मृद्धि का समय है। जो लोग इस आन्दोलन को आर्थिक कारणों की पैदावार समझते हैं, वे आर्थिक इतिहास से अपनी अज्ञानता का प्रमाण जुटाते हैं, जैसे निम्न आंकड़े इस मनगढ़न्त कहानी का पर्दा चाक कर देते हैं कि इस आंदोलन का आधार आर्थिक है—

देश	समय	प्रति राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि
इंगलैंड	१८६० से १९३८ तक	२३१%

१. जिड एन्ड रिस्ट 'ए हिस्ट्री आफ एकोनोमिक्स डाक्ट्रिन्स लन्दन', १९५०, पृ० १४५।

२. रोल एरिक, 'ए हिस्ट्री आफ एकोनोमिक्स थाट, न्यूयार्क, १९४७, पृ० ३१।

अमेरिका	१८६९ से १९३८ तक	३८१%
फ्रांस	१८५० से १९३८ तक	१३५%
स्वीडन	१८६१ से १९३८ तक	६६१%

यह वृद्धि आबादी की वृद्धि के साथ और उस के बावजूद हुई है। इसी तरह अगर आबादी की वृद्धि को लेने के बाद इन देशों की उन्नति की वार्षिक रफ़्तार देखी जाए तो वह यह थी—

देश	पैदावार की रफ़्तार में वार्षिक वृद्धि
इंग्लैंड	२.९%
अमेरिका	४.८%
स्वीडन	८.५%
फ्रान्स	१.५%[1]

इस से मालूम हुआ कि बर्थ कंट्रोल पर यूरोप में उस समय अमल हुआ जबकि वहां का जीवन-स्तर उच्च था और उस में वृद्धि हो रही थी और देश की पैदावार हर वर्ष तेज़ी के साथ बढ़ रही थी। दूसरे शब्दों में उस समय कोई आर्थिक संकट मौजूद न था और उस आंदोलन का कोई वास्तविक आर्थिक आधार नहीं पाया जाता था। स्वयं आज भी विश्व की वस्तुस्थिति यही है। १९४८ ई० से अब तक औसतन खाद्य उत्पादन में २.७ प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि हो रही है जो आबादी की वृद्धि की रफ़्तार से दो गुनी है तथा उस समय के औद्योगिक उत्पादन में लगभग ५ प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि हुई है। आबादी की यह वृद्धि तीन गुने से भी अधिक है।[2]

---

१. ये तमाम आंकड़े निम्न पुस्तक से लिए गए हैं—
बुखानन एण्ड एलिस, 'अप्रोचेज टू एकोनोमिक डेवलपमेन्ट' न्यूयार्क, १९५५ पृ० २१४-१५।

२. ए. जिमरमैन का लेख 'ओवर पोपुलेशन और What's New, शिकागो, अंक २११ स्प्रिंग १९५९ ई०।'

अगर इस आन्दोलन का कोई आर्थिक आधार न था, तो फिर प्रश्न पैदा होता है कि उस के फैलने का मूल कारण क्या था। हमारे विचार से मूल कारण सामाजिक व सांस्कृतिक था। पश्चिम में औरत और मर्द की समता और अबाध मेल-मिलाप के आधार पर जो समाज गठित हुआ था उस की स्वाभाविक व तार्किक अपेक्षा यह थी कि बर्थ कंट्रोल को बढ़ावा मिले ताकि मनुष्य आनन्दित भी हो ले और उन ज़िम्मेदारियों से भी बच जाए जो प्रकृति ने उस पर डाली हैं।

पश्चिम के इतिहास में बर्थ कंट्रोल की समता पूर्ण रूप से सामाजिक व सांस्कृतिक हैसियत रखती है और आर्थिक पहलू से अगर उस का कुछ सम्बन्ध है, तो 'बनाव' की दिशा में नहीं 'बिगाड़' की दिशा में है, इसलिए कि औरत की गोद के सूनेपन और मर्द की बेकारी (Unemployment) का बड़ा निकट सम्बन्ध है जिसे लार्ड कीन्स, प्रो० हेंसन और प्रो० कोल जैसे अन्वेषकों ने वर्तमान आर्थिक वार्ताओं में स्पष्ट किया है।

२. बर्थ कंट्रोल और विश्व-राजनीति

जैसाकि हमने ऊपर लिखा है, बर्थ कंट्रोल का न कोई आर्थिक आधार पहले था और न आज है। पश्चिम में इस की उन्नति सामाजिक और सांस्कृतिक कारणों से हुई और आज पश्चिम जिन उद्देश्यों के लिए उसका प्रचार कर रहा है, वे मूलतः राजनीतिक हैं—

इतिहास का हर छात्र इस बात को जानता है कि आबादी की बढ़ौतरी का राजनीतिक महत्व बड़ा मौलिक है। हर सभ्यता और हर विश्व-शक्ति ने अपने रचनात्मक और गठनात्मक युग में आबादी बढ़ाने की कोशिश की है। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ विल डूरान्ट इसे सांस्कृतिक प्रगति का एक महत्वपूर्ण कारण बताता है। आर्नल्ड टायन बी० भी आबादी की अधिकता को उन मौलिक चुनौतियों

(Challanges) में से एक समझता है जिन के उत्तर में एक सभ्यता पनपती-बढ़ती है। इतिहास की उन तमाम जातियों में, जिन्होंने कोई महान कार्य किया है, सदैव आवादी बढ़ाने की रीति अपनाई है। इस के विपरीत पतनशील सभ्यताओं में आवादी की कमी की समस्या पैदा होती है। आवादी की कमी अन्ततः राजनीतिक और सामूहिक शक्ति के ह्रास का कारण वनती है और वह व्यक्ति जो इस स्थिति में फंस जाए, धीरे-धीरे गुमनामी के गर्त में जा गिरता है। सभ्यता के जितने भी प्राचीन केन्द्र हैं, उन सब का इतिहास इस सत्य पर गवाही देता है।

वर्तमान यूरोप की राजनीतिक और आर्थिक सहायता का रहस्य भी आवादी की वृद्धि ही में निहित है। प्रोफ़ेसर ओरगांस्की (Albrano F. K, Organski) के शब्दों में—

'आवादी में महा वृद्धि—ऐसी वृद्धि जो निर्बाध रूप से हुई थी—यूरोप को संसार की प्रथम श्रेणी की शक्ति वनाने में निर्णायक सिद्ध हुयी। यूरोप की आवादी की धमाकेदार और असाधारण वृद्धि (Population Explosion) के कारण देश में नई औद्योगिक आर्थिकता को चलाने के लिए कारिन्दे मिल गए और दूसरी ओर यूरोप से वाहर दुनिया भर में फैल जाने के लिए शरणार्थी (Emigrant) और ऐसे सिपाही और संचालक मिल गए जो दूरस्थ क्षेत्रों में फैले हुए उस राज्य का संचालन कर सकें, जिस के क्षेत्र में संसार के कुल क्षेत्रफल का आधा और कुल आबादी का एक तिहाई था।"[1]

---

१. ओरगांस्की, अलब्रानो, एफ. के. 'पापुलेशन एन्ड पालिटिक्स', साइन्स मैंगेज़ीन, अमेरिकन एसोसिएशन फार दी एडवान्समेन्ट आव साइन्स, वाइड लोरी स्टुआर्ट एच., पापुलेशन एक्सप्लोजन, डान, कराची, जुलाई १७, १६३१।

प्रोफ़ेसर ओरगांस्की का विचार है कि संसार के तमाम ही देशों में सब से अच्छी दशा उस देश की रही है जिस में आबादी अधिक हो और उस युग में रही है, जब आबादी तेज़ी से बढ़ रही हो।

प्रोफ़ेसर कोलन क्लार्क कहता है कि—

'ब्रिटेन वासियों ने निर्भीकता के साथ माल्थस की बातों को सुनने से इन्कार कर दिया। अगर वे माल्थस के आगे झुक जाते तो आज ब्रिटेन बस अठारहवीं शताब्दी के ढंग का छोटा-सा एक कृषि-प्रधान राष्ट्र होता। अमेरिका और ब्रिटिश 'कामन वेल्थ' के विकास व प्रगति का तो कोई प्रश्न ही न था। उच्चस्तरीय उद्योग की स्वाभाविक आर्थिक अपेक्षाये, विस्तारवादी, बड़ी मंडी और गमनागमन की एक प्रभावपूर्ण व्यवस्था हैं जो एक बढ़ती हुई आबादी ही के रूप में हासिल की जा सकती हैं।"[१]

आबादी का यह महत्व बड़े प्रभावपूर्ण राजनीतिक और आर्थिक पहलू रखता है और उन में से कुछ की ओर इशारा ज़रूरी है—

इस समय संसार में आबादी का विभाजन कुछ इस प्रकार है कि एशिया और इस्लामी जगत आबादी के सब से बड़े केन्द्र हैं। इन भागों के मुक़ाबले में पश्चिमी देशों की आबादी कम है और आबादी के रुझान साफ़ बता रहे हैं कि भविष्य में उनके अनुपात में अभी और कमी होगी। पिछले पांच सौ साल से पश्चिम के राजनीतिक नेतृत्व व आधिपत्य का आधार वह वैज्ञानिक और मशीनी श्रेष्ठता थी जो उसे पूर्वी देशों पर प्राप्त थी और जिस के कारण उसने आबादी की कमी के बावजूद अपना राजनीतिक संरक्षकत्व प्राप्त कर लिया, बल्कि उपनिवेशवाद के आरम्भिक युग ने इस ग़लत-फ़हमी को जन्म दिया कि कम आबादी के बावजूद पश्चिम स्थायी रूप से अपना

---

१. क्लार्क कोलिन, 'वर्ल्ड पापुलेशन एण्ड फूड सप्लाई' नेचर जिल्द १८१, मई १९५८।

आधिपत्य जमाए रख सकता है, लेकिन नए हालात और नई हक़ीक़तों ने इस ग़लत-फ़हमी के पर्दे को चाक कर दिया है।

पश्चिमी देशों की आवादी लगातार कम होने से उनकी राजनीतिक शक्ति में भी ह्रास पैदा होना शुरू हुआ और पहले युद्ध के वाद यह एहसास पैदा होना शुरू हुआ कि वर्थ कंट्रोल की नीति राजनीतिक और सामूहिक दृष्टि से बड़ी मंहगी पड़ रही है। फ्रान्स ने अपना विश्व स्थान धीरे-धीरे खो दिया और मार्शल पतियान ने दूसरे विश्व-युद्ध के अन्तर पर खुल्लम-खुल्ला इस वात को स्वीकारा कि फ्रान्स के पतन का एक बड़ा मौलिक कारण बच्चों की कमी (Too Few Children) और आबादी का घटना है। इंग्लैंड और दूसरे देशों पर इसके प्रभाव पड़ने शुरू हुए और इन परिणामों को देख कर स्वीडन, जर्मनी, फ्रान्स, इंग्लैंड और इटली, इन तमाम देशों में आबादी को कम करने के बजाए आवादी बढ़ाने की कोशिश की जा रही है, लेकिन हर सम्भव प्रयत्न के वादजूद पश्चिम यह आशा नहीं रखता कि वह अपनी आवादी को इतना वढ़ा सकेगा कि वह अपनी राजनीतिक साख को वाक़ी रख सके और विश्व-नेतृत्व का मुकुट यथापूर्व पहने रहे। उसे साफ़ नज़र आ रहा है कि आवादी को बढ़ा कर भी वह भविष्य में पूरब और इस्लामी जगत का मुक़ावला न कर सकेगा।

फिर वे कलात्मक, वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारियां भी, जो आज तक पूरब पर पश्चिम की श्रेष्ठता को वनाए हुए थीं और जिन से पूर्वी देशों को बड़ी कोशिश से महरूम रखा गया था, आज उन देशों में तेज़ी के साथ फैलने लगी हैं और चूंकि उन देशों की आबादी भी पश्चिमी देशों के मुक़ावले में कई गुना अधिक है, इसलिए नए मशीनी यंत्रों से सुसज्जित होने के बाद इन राष्ट्रों के शासित रहने की कोई सम्भावना बाक़ी नहीं रहती, बल्कि प्राकृतिक नियमों के कारण इस क्रान्ति का अनिवार्य परिणाम यह होगा कि पश्चिम का

राजनीतिक नेतृत्व उन स्थानों से उभरेगा जहां आबादी भी अधिक है और जो कलात्मक, तकनीकी और सामरिक निपुणता भी रखते हैं। इन हालात में पश्चिम अपने नेतृत्व को बनाए रखने के लिए जो खेल खेल रहा है, वह बड़ा खतरनाक है अर्थात पूर्वी देशों में बर्थ कंट्रोल और फ़ेमिली प्लानिंग के जरिए आबादी कम करने का प्रयत्न और कलात्मक जानकारियों के प्रसार में बाधायें डालना। हम यह बात किसी पक्षपात के आधार पर नहीं कह रहे हैं, बल्कि हम स्वयं पश्चिमी साधनों ही से उसे सिद्ध कर सकते हैं। आबादी की समस्या पर बीसियों पुस्तकें ऐसी मौजूद हैं जिन में पूरब के इस नए खतरे को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया गया है और उस का इलाज यह बताया गया है कि इन देशों में बर्थ कंट्रोल का चलन किया जाए। यह सारा साहित्य मौजूद है और पश्चिमी मस्तिष्क और पश्चिमी सरकारों को प्रभावित कर रहा है और उपनिवेशवादी शक्तियों का व्यवहार भी इस की पुष्टि कर रहा है। अपने दावे के समर्थन में हम कुछ गवाहियां पेश करते हैं। फ्रैंक नोटीनेस्टीन प्रसिद्ध अमेरिकी पत्रिका फ़ारेन अफेयर्स में Politics and power in postwar Europe के शीर्षक के अन्तर्गत लिखता है—

'अब इस की कोई सम्भावना नहीं कि उत्तरी, पश्चिमी या मध्य यूरोप की कोई जाति पूरे विश्व को चुनौती दे सके। जर्मनी दूसरी यूरोपीय जातियों की तरह उस युग से गुज़र चुका है जब वह संसार की महान शक्ति बन सके और इस का कारण यह है कि अब कलात्मक और तकनीकी सभ्यता उन देशों में भी पहुंच गई है जिन की आबादी बहुत तेजी से बढ़ रही है।'

वास्तव में यूरोप के राजनीतिक नेतृत्व को बीसवीं शताब्दी के दूसरे आधे में एशिया और इस्लामी जगत की बढ़ती हुई आबादियों

---

१. Foreign Affairs, April, 1944.

से भयानक राजनीतिक खतरा है। अमेरिकी पत्रिका 'टाइम' अपने ११ जनवरी सन् १९६० के अंक में लिखता है—

'आबादी के आधिक्य के बारे में अमेरिका और यूरोपीय राष्ट्रों की तमाम बौखलाहट और उन के सारे उपदेश वास्तव में बड़ी हद तक फल हैं उन राजनीतिक परिणामों व प्रभावों के एहसास के, जो नए हालात और एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमेरिका की आबादी के बढ़ने और बहुसंख्यक बन जाने के कारण जिस की आशायें की जा सकती हैं।'[1]

आर्नल्ड ग्रीन लिखता है कि—

'पिछले पचास वर्षों में संसार की आबादी दोगुनी हो गई है जिस के कारण समूचे संसार के आर्थिक व सामरिक सन्तुलन (Balance of Economic and military Power) पर एक भारी बोझ पड़ रहा है।'[2]

आर्थर मेक कारमेक खुले शब्दों में इस बात को प्रगट करता है कि—

'प्रगतिशील देशों के लोगों के लिए इस बात में एक स्वाभाविक रुचि है कि कम प्रगतिशील देशों में मनुष्यों की संख्या कम हो जाए और यह इसलिए है कि वे उन की बढ़ती हुई संख्या में अपने उच्च जीवन-स्तर और फिर स्वयं अपनी राजनीतिक सुरक्षा (Security) के लिए स्थायी खतरा समझते हैं।'

मेक कारमेक पश्चिम के इस रवैए पर कटु आलोचना करता है और साफ़-साफ़ कहता है कि पूर्वी लोग जल्द ही इस घिनौने खेल को देख लेंगे और फिर वे पश्चिम को कभी माफ़ नहीं करेंगे, इसलिए कि यह—

---

१. 'टाइम मैग्जीन' जनवरी १९६०।

२. ग्रीन आर्नल्ड एच० सोशियोलोजी, अनलिसिस आव लाइफ इन सोसाइटी, न्यूयार्क, १९६०, पृ० १५४।

"एक नए प्रकार का साम्राज्य है, जिस का उद्देश्य पिछड़े हुए राष्ट्रों को और पिछड़ा बना देता है—मुख्य रूप से कालों को—ताकि गोरों का आधिपत्य बाक़ी रहे।"[1]

हम पश्चिमी विचारों के ऐसे असंख्य लेखों को प्रस्तुत कर सकते हैं, पर आंखें खोलने के लिए यही कुछ गवाहियां काफ़ी हैं।

इस पूरी वार्ता से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भविष्य में वही देश छायेंगे, जिन की आबादी अधिक है और जो नई तकनीक से भी सुसज्जित हैं। अब इस की तो कोई सम्भावना नहीं है कि इन देशों को नए तकनीक से महरूम रखा जाए, इसलिए पश्चिमी नेतृत्व व आधिपत्य को बाक़ी रखने वाली केवल एक ही चीज़ हो सकती है और वह है इन देशों में बर्थ कंट्रोल और फ़ेमिली प्लानिंग। यही कारण है कि पश्चिमी देश स्वयं तो आबादी बढ़ाने के लिए एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रहे हैं, पर पूर्वी देशों में यही राष्ट्र प्रचार की बेहतरीन शक्तियों का प्रयोग कर के बर्थ कंट्रोल का प्रसार कर रहे हैं[2] और बहुत से भोले-भाले मुसलमान भी हैं जो ख़ुद आगे बढ़ कर इस जाल में फ़ंस रहे हैं।

मक्र की चालों से बाज़ी ले गया सरमायादार।
इन्तिहाए सादगी से खा गया मज़दूर मात॥

किन्तु अब बिल्ली थैले से बाहर आ चुकी है। अगर अब भी हमने धोखा खाया तो नतीजों की ज़िम्मेदारी स्वयं हम पर होगी

---

१. वही, पृ० ७८।

२. इस मामले का एक दिलचस्प पहलू यह है पश्चिमी राष्ट्रों का यह सारा प्रचार उन के मित्र देशों तक ही सीमित है। इन के शत्रु चीन और रूस इस से बिल्कुल ही अप्रभावित हैं। दूसरे शब्दों में पश्चिमवासी इस तरीक़े से अपने मित्र ही कम कर रहे हैं, शत्रुओं को कम करना उन के वश में नहीं है।
—लेखक

और हमारे वही 'हितैषी', जो सस्नेह हमें फ़ेमिली प्लानिंग का पाठ पढ़ा रहे हैं, कल हमारी कमज़ोरी से फ़ायदा उठा कर हम पर अपना पूर्ण आधिपत्य जमाने का यत्न करेंगे। इस खतरे को अल्लामा इक़वाल ने वहुत पहले महसूस कर लिया था और इस्लामी समुदाय को सचेत किया था कि इस से सजग रहें। उन के ये शब्द आज भी हमें सोच-विचार का निमंत्रण दे रहे हैं—

'आम तौर पर अब हिन्दुस्तान में जो कुछ हो रहा है या होने वाला है वह यूरोप के प्रचारों का प्रभाव है। इस प्रकार के साहित्य की एक बाढ़ है, जो हमारे देश में आती जा रही है। कुछ दूसरे साधन भी इन के प्रचार व प्रसार के लिए अपनाए जा रहे हैं। हालांकि इन के अपने देशों में आवादी घटाने के वजाय वढ़ाने के यत्न किए जा रहे हैं। इस आंदोलन का एक बड़ा उद्देश्य मेरे नज़दीक यह है कि यूरोप की अपनी आबादी उस के अपने पैदा किए हुए हालात के कारण, जो उस के वश में नहीं हैं, वहुत कम हो रही है और उसके मुक़ाबले में पूरब की आबादी दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है और इस चीज़ को यूरोप अपने राजनीतिक अस्तित्व के लिए भारी खतरा समझता है।'

यह है इस समस्या की वास्तविकता और इस आंदोलन की मूल राजनीतिक पृष्ठभूमि। जव तक हम इस आंदोलन का उसकी मौलिक पृष्ठभूमि में अध्ययन नहीं करेंगे, हम न उस की वातस्विकता समझ सकेंगे और न कोई सही कार्य-पद्धति ही तैयार कर सकेंगे।

३. आज़ादी की समस्या और प्रतिरक्षा

आवादी के प्रतिरक्षात्मक महत्त्व के वारे में हम संक्षिप्त रूप से कुछ इशारे कर चुके हैं। प्रोफ़ेसर आरेगांस्की ने बड़ी सच्ची वात कही है कि, 'शक्ति अधिक उसी गुट के पास होगी, जिस के पास व्यक्ति अधिक हों।' जिन लोगों की दृष्टि सामरिक प्रगति पर है, वे

इसे खूब जानते हैं कि एटमी हथियारों के बाद सेना की अधिकता और आवादी की अधिकता का प्रतिरक्षात्मक महत्व पहले से वहुत अधिक वढ़ गया है। कुछ समय पहले ऐसा लगता था कि युद्ध में हथियारों के मुक़ावले में मनुष्य का महत्व कम हो रहा है और मानव-शक्ति निष्प्रभ होती जा रही है। पर अव इस विचार के स्वस्थ होने पर कम ही लोग विश्वास करते हैं। आखिर कोरिया की लड़ाई में चीन ने मात्र संख्या-आधिक्य के कारण ही अमेरिका के बेहतरीन हथियारों को प्रभावहीन वना दिया था। स्वयं अमेरिका के नए सैनिक-संगठन में थल सेना और गोरिल्ला सेना को नए सिरे से वढ़ाने का प्रयत्न हो रहा है, इसलिए आवादी की समस्या पर प्रतिरक्षात्मक दृष्टि से विचार करना बेमौक़ा न होगा। वर्थ कंट्रोल और फ़ेमिली प्लानिंग की मुहिम चलाने वाले देशों को यह पहलू दृष्टि से कभी न ओझल होने देना चाहिए।

४. कुछ आर्थिक वास्तविकताएं

बर्थ-कंट्रोल की समस्या अपने मूल के एतवार से आर्थिक नहीं है, लेकिन इस के कुछ पहलू एसे अवश्य हैं, जिन पर आर्थिक दृष्टि से विचार किया जा सकता है।

इस सिलसिले में सब से पहली चीज़ तो यह है कि जनसंख्या का आधिक्य आम तौर से आर्थिक हैसियत से लाभप्रद ही होता है। हर वह व्यक्ति, जो संसार में आता है, वह अपने पास केवल एक पेट ही नहीं रखता, दो हाथ, दो पांव और एक दिमाग़ भी रखता है। पेट अगर भूख की फ़र्माइश करता है तो ये पांचों मिल कर उन्हें पूरा करने की कोशिश करते हैं और आर्थिक विचारकों का एक वड़ा प्रभावशाली गिरोह इस मत का समर्थन करता है कि पिछड़े देशों में आरम्भिक आर्थिक क्रान्ति के लिए बढ़ती हुई आवादी बड़ी लाभप्रद है, क्योंकि उस के द्वारा वड़ी संख्या में श्रमिक (Labour) और

प्रभावपूर्ण मांग (Effective Demand) प्राप्त होती है और एक प्रगतिशील अर्थ-व्यवस्था में प्रगति को बाक़ी रखने और मांग को बढ़ाने के लिए (ताकि बाज़ार मन्दा न हो) आबादी में बराबर बढ़ोतरी अत्यावश्यक है। लार्ड कीन्ज़ (J. M. Keynes) प्रो० हैन्सन, डाक्टर कोलिन क्लार्क, प्रो० जी० डी० एच० कोल और अनेक दूसरे विचारक यही दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं और आर्थिक इतिहास उनके इस दृष्टिकोणों का समर्थन करता है।

दूसरी चीज़ यह है कि समूचे विश्व के साधन वर्तमान आबादी ही नहीं, बल्कि कल्पना की जाने वाली हर सम्भव आबादी की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए काफ़ी हैं। साधन ज़रूरत से कहीं अधिक हैं और बेकार पड़े हैं। कोलिन क्लार्क इस मत को ठोस सत्य के आधार पर व्यक्त करता है कि संसार की वर्तमान आबादी से दस गुनी अधिक आबादी को संसार के केवल मालूम साधनों के सही इस्तेमाल से पश्चिमी यूरोप के उच्चतम जीवन-स्तर पर बाक़ी रखा जा सकता है।[1] प्रो० जे० डी० बरनाल (J. D. Bernal) भी अपनी स्वतन्त्रता और वैज्ञानिक गवेषणाओं के बाद यही मत व्यक्त करता है।[2]

तीसरी बुनियादी चीज़ यह है कि वर्तमान आबादी के जो आंकड़े प्रस्तुत किए जाते हैं, वे तो बड़ी हद तक अवश्य ही विश्वसनीय हैं,

---

१, 'पोपुलेशन ग्रोथ एण्ड लिविंग स्टैण्डर्ड' प्रकाशक इन्टरनेशनल लेबर रिव्यू अगस्त १९५३

२. प्रोफेसर बरनाल ने बड़े वैज्ञानिक ढंग से एक अति शोधयुक्त पुस्तक 'वर्ल्ड विदाउट वार' (World Without War) के विषय पर तैयार की है और इन्कार न करने योग्य सामग्री के आधार पर सिद्ध किया है कि विश्व-साधन बढ़ती हुई आबादी के लिए बहुत काफ़ी है। (लन्दन, १९५८)

लेकिन अतीत और भविष्य के साधनों के बारे में जो अन्दाज़े उन की बुनियाद पर क़ायम किए जाते हैं, उन पर बातचीत की बड़ी गुंजाइश है। डेमोग्राफ़ी (Demography) का ज्ञान अभी बहुत नया है और उस की खोजें उस स्थान तक नहीं पहुंची हैं, जहां भरोसे के साथ भविष्य के बारे में कोई अन्दाज़ा क़ायम किया जा सके। हम बहुत से बहुत निकट भविष्य के बारे में कुछ कह सकते हैं, लेकिन सदियों बाद की आबादी की स्थिति के बारे में कोई विश्वासपूर्ण अन्दाज़ा क़ायम नहीं कर सकते।

अभी तक हमारे पास जानकारियां प्राप्त करने के वे साधन नहीं हैं, जिन के आधार पर निश्चित अन्दाज़े पेश किए जा सकें। फिर आबादी के रुझानों के बहुत से कारण अभी तक अज्ञात हैं, जैसे डाक्टर आर्नल्ड टायनबी (Dr. Arnold Toynbee) हमें बताता है कि २३ में से २८ सभ्यताओं की उन्नति की चरम सीमा पर पहुंच कर आप से आप आबादी में वृद्धि की रफ़्तार में कमी हो जाती है। इसकी पुष्टि आबादी की स्वाभाविक वृद्धि के इतिहास से भी होती है, जैसे रेमन्ड पर्ल अपने एक लेख में लिखता है कि—

'औद्योगिक प्रगति, नगरों के विस्तार (Urbanisation) और उन के फलस्वरूप होने वाली आबादी का घनापन एक देश में जितना अधिक होगा, उतनी ही उस देश में उत्पादन-शक्ति बढ़ेगी और आबादी वृद्धि का दर कम होता जाएगा। कुछ स्पस्ट अपवादों को छोड़ कर सदैव ऐसा ही हुआ है।"[1]

डाक्टर मेड और एफ़० आर० एस० अपने १६५७ ई० के रीथ लेक्चर्ज़ में आबादी-ज्ञान के अन्दाज़ों की कठिनाइयां सविस्तार बयान

---

१. पर्ल रेमण्ड, 'दि बायोलोजी आव पापुलेशन ग्रोथ इन दि नेचुरल हिस्ट्री आव पापुलेशन' पृ० २७७

करते हैं ।[1] संयुक्त राष्ट्र की एक सरकारी रिपोर्ट में भी इस बात को व्यक्त किया गया है कि यह समझना दुरुस्त न होगा कि आगामी शताब्दी में भी वृद्धि उसी रफ़्तार से होगी, जितनी कि अतीतकाल में हुई है ।'

इस रिपोर्ट के अनुसार—

'यह बात बड़ी मूर्खतापूर्ण होगी कि हर इस समय अपने अन्दाज़ों को भविष्य की दूरस्थ घाटियों तक ले जाएं ।[2]

इस रिपोर्ट के अनुसार उचित अन्दाज़े इस शताब्दी के अन्त तक के लिए क़ायम किए जा सकते हैं, इस से अधिक नहीं । लेकिन कुछ दूसरे विशेषज्ञों का विचार है कि हम अधिक से अधिक आगामी दस-पन्द्रह वर्षों तक का अन्दाज़ा क़ायम कर सकते हैं । इस से अधिक करना कोई सावधानी नहीं है ।[3] और एक समाजशास्त्री पूरी वार्ता को इस प्रकार समेटता है कि—

'आबादी के बारे में अनुमानों और भविष्यवाणियों में रुचि बहुत कम हो गई है और इस का कारण विश्वास की कमी है । थोड़े समय पहले तक आबादी के विशेषज्ञों (Non Demographers) में यह प्रचार पाया जाता था कि आबादी-विज्ञान एक ऐसा ज्ञान है, जिस में भविष्य की घटनाओं के बारे में भविष्यवाणी असाधारण रूप से सही उतरती है, लेकिन ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, निराशा बढ़ती गई और अब अविश्वास आम बात हो गई है ।[4]

---

१. देखिये डाक्टर पी० बी० मेडावर (P. B. Medawar) की पुस्तक 'मनुष्य का भविष्य' (The future of man) लन्दन, १६०६, अध्याय प्रथम (The failibility of Prediction)

२. 'दि फ़्यूचर ग्रोथ आव वर्ल्ड पापुलेशन' पृ० २१

३. 'माइग्रेशन न्यूज़, जेनेवा, मार्च-अप्रेल १६५६ पृ० २

४. सोशियोलोजी टूडे एड० आर० के० कोर्टन, न्यूयार्क १६५६, पृ० ३१५

इस से मालूम हुआ कि आर्थिक दृष्टि से स्वयं आबादी के अंदाज़े और उस के रुझानों पर भी बड़ी सावधानी के साथ विचार होना चाहिए और सामान्य पत्रकारों की तरह यह कह देना कि ६०० साल के बाद संसार में खड़े होने की जगह भी बाक़ी नहीं रहेगी, अति आपत्तिजनक है।

चौथी बात यह है कि आर्थिक दृष्टि से अगर आबादी की समस्या पर विचार किया जाए तो इस का आर्थिक ढांचे से बड़ा निकट का सम्बन्ध है। पश्चिम ने अपने हालात के अनुसार एक विशेष ढांचा बनाया, जो उच्च स्तर और पूंजी के केन्द्रीयकरण पर आधारित था और जिस में सारी कोशिश श्रम के भाग को कम करने और पूंजी के भाग को बढ़ाने पर खर्च हुई। ऐसे उद्योग को अर्थशास्त्र की परिभाषा में कैपिटल इन्टेन्सिव इन्डस्ट्री (Capital intensive industry) कहते हैं। इस प्रकार के आर्थिक ढांचे में श्रम की ज़रूरत बराबर कम होती जाती है और आबादी के बढ़ने से बेरोज़गारी की समस्या खड़ी हो जाती है। लेकिन अगर यह ढांचा किसी और आधार पर खड़ा किया जाए और उसे कोई दूसरा रूप दिया जाए तो आबादी की समस्या पैदा न होगी। इस का उदाहरण जापान में मिलता है। जापान ने इस बात को महसूस कर लिया था कि कैपिटल इन्टेन्सिव (Capital Intensive) के लिए औद्योगिक ढांचा उचित नहीं है। वहां पूंजी की कमी और श्रम का आधिक्य था, इसलिए उसने छोटे स्तर के उद्योग का विकेन्द्रीकरण (Decentralisation) के हाथ बढ़ावा दिया और उस की कार्य-क्षमता को उच्चतम स्तर पर पहुंचाने की कोशिश की। इसी का फल था कि उस का उद्योग (Labour Intensive) हो गया और उस में आबादी की असाधारण वृद्धि के बावजूद बेरोज़गारी या आबादी की अधिकता की समस्या पैदा न हुई।

जापान का क्षेत्रफल भारत से तो कई गुना कम है, वह तो पाकिस्तान के क्षेत्रफल से भी बहुत कम है, फिर देश के पूरे क्षेत्रफल

का केवल १७ प्रतिशत भाग उपयोग के योग्य है, शेष तमाम ज्वालामुखी पर्वतों के सिलसिले के कारण बेकार है। इस तरह उस का उपयोगी क्षेत्रफल पाकिस्तान के क्षेत्रफल का लगभग १/१२ भाग है, लेकिन इस देश ने अपनी घनी आवादी को भी वड़े अच्छे स्तर तक उठाया और अपनी आर्थिक शक्ति को वह ऐसे स्थान पर ले गया कि उस के उद्योगों ने ब्रिटेन और अमेरिका की मण्डियों पर क़ब्जा कर लिया, यहां तक कि यूरोप के सारे प्रगतिशील राष्ट्र मिल कर भी आर्थिक क्षेत्र में उस का मुक़ाबला न कर सके। न केवल यह, वल्कि उस की शक्ति एक ऐसे स्थान पर पहुंच गई, जहां से उसने स्वयं राजनीतिक क्षेत्र में भी सम्पूर्ण पश्चिमी जगत को चुनौती दे दी।

इस से मालूम हुआ कि आवादी की समस्या का अध्ययन मात्र काम चलाऊ ढंग से नहीं होना चाहिए। अगर आर्थिक व्यवस्था के ढांचे को आवादी के अनुकूल तरक़्क़ी दे दी जाए तो आर्थिक दृष्टि से आबादी की समस्या पैदा हो जाने का कोई प्रश्न नहीं। सच तो यह है कि आज के संसार में अगर आवादी के लिए निर्धनता, ग़रीवी और वदहाली की समस्या पैदा होती है, तो इस का कारण हमारी ग़लतियां हैं। प्राकृतिक साधन इसके ज़िम्मेदार नहीं हैं। इस सिलसिले में भी कुछ बुनियादी बातें हम बताना चाहते हैं।

(१) हम अपने साधनों को ठीक-ठीक इस्तेमाल नहीं कर रहे हैं। साधन मौजूद हैं और भारी मात्रा में मौजूद हैं, लेकिन मनुष्य अपनी सुस्ती और काहिली की वजह से उन से लाभान्वित नहीं हो रहा है। संसार में धनहीनता का सब से वड़ा मौलिक कारण यही है।

(२) प्रकृति ने पूरे संसार में उन तमाम साधनों को जुटा दिया है, जो मानवता के लिए ज़रूरी हैं। साधनों का विभाजन इस प्रकार है कि पूरा जगत एक इकाई या (Unity) की हैसियत रखता है। कोई एक देश भी ऐसा नहीं है, जो अपनी ज़रूरत की तमाम चीज़ें

केवल अपने साधनों से प्राप्त कर ले, हां पूरे संसार के तमाम साधन सब मनुष्यों के लिए काफ़ी हैं। मनुष्य को अपनी संकीर्णता को छोड़ कर ऐसी समस्याओं के विश्व-आधारों पर विचार करना होगा। हम एक देश के लिए यह ज़रूरी नहीं समझते कि हर-हर शहर में उस की ज़रूरत की तमाम चीज़ें पैदा हों। यही दृष्टिकोण पूरे विश्व के लिए भी अपनाना होगा। तभी संसार के साधन मानवता के हित व कल्याण के लिए इस्तेमाल हो सकेंगे।

(३) इसी ग़लत दृष्टिकोण का फल है कि इस समय धन का विभाजन वहुत ग़लत है। जिन भागों में पैदावार की वहुतात है, वह वहीं नष्ट हो रही है और शेष मानवता के कल्याण के लिए इस्तेमाल नहीं हो रही। जो लोग कहते है कि संसार का उत्पादन कम है, वे यह नहीं जानते कि पश्चिमी जगत के और मुख्य रूप से अमेरिका के लिए मूल समस्या उत्पादन-आधिक्य (Over Production) की है। इस के लिए अधिक पैदावार को ठिकाने लगाने की समस्या सिर-दर्द का कारण वनी हुयी है। अमेरिका की सरकार को २० करोड़ से ४० करोड़ डालर (लगभग एक अरब रुपए) तक मात्र अधिक आलुओं को नष्ट करने या कम मूल्य पर बेचने पर व्यय करने पड़ते हैं। केलीफ़ोर्निया में करोड़ों रुपयों की किशमिश और मुनक्क़ा सूअरों को खिला दी जाती है। अमेरिका के कमोडिटी क्रेडिट कार्पोरेशन (U. S. Commodity Credit Corporation) के पास २० अरव डालर (लगभग ९० अरब रुपए) का अधिक माल बेकार पड़ा हुआ है। इस में कुछ चीज़ें ये हैं—

रूई	५० लाख गांठ	लगभग	मूल्य	७५ करोड़	डालर
गेहुं	४० करोड़ बिशल[1]	,,	,,	९० ,,	,,
मक्का	६० ,, ,,	,,	,,	९० ,,	,,

१. एक विशल २९ सेर का होता है।

अंडे (सूखे हुए)	७	,,	पौंड	,,	,,	१०	,,	,,
मक्खन	१०	,,	,,	,,	,,	६	,,	,,
दूध (सूखा हुआ)	२५	,,	,,	,,	,,	३	,,	,,[1]

इसी प्रकार F. A. O. के आंकड़ों से मालूम होता है कि बिना इस्तेमाल किए हुए स्टाक बराबर बढ़ रहे हैं। अरबों मन खाद्य और दूसरे पदार्थ संसार के कुछ भागों में बेकार पड़े सड़ रहे हैं और उन की रक्षा पर करोड़ों रुपया व्यय किया जा रहा है, जबकि संसार के दूसरे भागों में उपवास और भुखमरी का राज्य है। प्रश्न यह है कि जब स्थिति यह है तो फिर हम अभाव को और आर्थिक साधनों को क्यों रोएं ? शेक्सपियर के अथनानुसार—

'Thc fault, dear Brutus, is, not in our stars,
But in yourselves that we are under lings',

'ज़मीन व आसमान में ख़राबी नहीं, स्वयं हम में है और हमें अपनी आंख की शहतीर की ओर देखना चाहिए।'

यह पश्चिमी मनुष्य का स्वार्थ है, जो संसार में आर्थिक बदहाली का कारण है। सभ्य मनुष्य एक ओर अपनी अधिक पैदावार को कृत्रिम मूल्यों को बाक़ी रखने के लिए नष्ट कर रहा है और मानवता को उस से लाभान्वित नहीं होने देता। दूसरी ओर वह अपने सारे साधनों को पैदावार के लिए इस्तेमाल नहीं करता, बल्कि उन्हें सुख-वैभव और विनाश की भेंट चढ़ा देता है। प्रो० लैंड्स के कथनानुसार—

अहम् भोगी पश्चिमी व्यक्ति एक ऐसे स्थान पर पहुंच गया है, जहां वह अपनी सारी शक्तियों को खाद्य-पदार्थ को बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करने पर तैयार ही नहीं है।[2]

---

१. डडले स्टैम्प, 'आवर डेवलगिंग वर्ल्ड,' पृ० ११६

२. लैंडंम 'सोशल प्रोब्लम्स' १९५९ पृ० ६००

(४) पूर्वी देशों में काहिली और सुस्त रफ़्तारी ज़रूर है, पर इन के साधनों से पश्चिम जिस तरह लाभ उठा रहा है, वह भी उनके लिए एक बहुत बड़ा बोझ है, जिस के फलस्वरूप उन की ग़रीबी और आर्थिक परेशानी कुछ और भी अधिक हो गई है। उपनिवेशवाद ने जिस प्रकार इन देशों के साधनों को लूटा-खसोटा है और अफ्रीक़ा में आज भी लूट रहा है, वह बड़ी कड़वी दास्तान है। स्वतन्त्रता के बाद भी सौ तरीक़ों से इन देशों का शोषण जारी है। इस का केवल एक उदाहरण मूल्यों में अस्थिरता (Instability) है। पश्चिमी देश, जो इन देशों की चीज़ के खरीदार हैं, मूल्यों में दृढ़ता नहीं आने देते, जिस का फल यह है कि इन देशों को बड़े भारी माली नुक़्सान पर अपना माल बेचना पड़ता है। उदाहरणार्थ केवल कोको के मूल्यों में, असाधारण अभाव के कारण, पश्चिमी अफ्रीक़ा के देशों को केवल एक वर्ष (१९५६ ई०) में ६२ करोड़ डालर का नुक़्सान हुआ (१९५४ में मूल्य ५७ सेंट प्रति पौंड था, जो १९५६ ई० में २६ सेंट पर आ गया) या रबड़ के मूल्यों में अथिरता के कारण एक वर्ष में दक्षिणी पूर्वी एशिया को एक अरब ३२ करोड़ डालर का नुक़्सान हुआ। १९५१ में मूल्य ५६ सेंट प्रति पौण्ड था, जो १९५४ में २३ सेंट रह गया।[1]

अगर तमाम सच्चाइयों को सामने रखा जाए तो मालूम होता है कि मनुष्य की परेशानियां स्वयं मनुष्य की ही पैदा की हुई हैं। जो दो उदाहरण हमने ऊपर दिए हैं, उन से अन्दाज़ा हो सकता है कि अगर मूल्यों को स्थिर किया जाता और इन देशों की मजबूरी से नाजायज़ फ़ायदा न उठाया जाता तो यह सारी पूंजी उन की आर्थिक उन्नति के लिए इस्तेमाल हो सकती थी। पिछड़े हुए देशों में पूंजी की कमी अवश्य है और यह कमी सामाजिक प्रगति की राह में बाधक भी है,

---

१. डडले स्टैम्प, वही पुस्तक, पृ० १७२

पर स्वयं इस कमी के कारण क्या हैं? इन का सम्बन्ध स्वयं इन्हीं तत्वों की 'मेहरबानियों' से जा मिलता है, जो पूंजी के अभाव का राग सुबह व शाम अलापते हैं और पूर्वी लोगों को बच्चे कम पैदा करने का मश्विरा देते हैं।

(५) ऐसे ही संसार के साधनों का जो भाग युद्ध की तैयारी पर व्यय हो रहा है, अगर उस के बड़े भाग को आर्थिक निर्माण के लिए प्रयुक्त किए जा सके, तो संसार की निर्धनता एक नियमित समय में ही समाप्त हो सकती है। १९५०-५७ के आंकड़ों के आधार पर यह बात कही जा सकती है कि उस ज़माने में कम से कम ९० अरब डालर वार्षिक (लगभग ४०० अरब रुपए वार्षिक) सामरिक तैयारी पर ख़र्च हुआ है।[1] बरनाल विस्तृत विवेचन के बाद यह सिद्ध करता है कि—

'यह रक़म उस समय से कहीं अधिक है, जो संसार के तमाम पिछड़े देशों में द्रुतगति व्यावहारिक प्रगति की प्राप्ति के लिए ज़रूरी है।'[2]

और दूसरे कारणों के साथ ये मोटे-मोटे कारण हैं, जो संसार में ग़रीबी और आर्थिक पिछड़ेपन के ज़िम्मेदार हैं। आबादी की समस्या का असली हल उन बाधकों को दूर करने में है, इन्सानों की पैदाइश रोकने में नहीं है।

(५) क्या बर्थ-कंट्रोल कोई हल हो सकता है?

बर्थ-कंट्रोल के बारे में धार्मिक और बौद्धिक दृष्टि से जो वार्ताएं गुज़र चुकी हैं, उन के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शरीअत में इस के लिए कोई गुंजाइश नहीं। अगर बर्थ कंट्रोल की

---

१. देखिये बरनाल, (वर्ल्ड विदाउट वार) पृ० २१

२. देखिये बरनाल, पृ० २०

कोई गुंजाइश है तो वह उन वास्तविक व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिए है, जिन में शरीअत ने किसी उच्चतर मस्लहत के लिए एक कमतर बुराई को पसन्द किया है और वहां भी यह व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है कि वह वास्तविक कठिनाइयों और समस्याओं को सामने रख कर, ईश्वर के सामने जवाबदेही के पूरे एहसास के साथ और डाक्टरी मश्विरे के आधार पर ऐसा करे। अगर यह कार्य मात्र वासना-तृप्ति के लिए किया जाए तो शरीअत की निगाह में यह नाजायज़ है, इसलिए धार्मिक दृष्टि से तो किसी देश-व्यापी अभियान के लिए कदापि कोई गुंजाइश नहीं हो सकती।

फिर इस आन्दोलन की जो मनोवैज्ञानिक, नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हानियां होती हैं, वे भी विनाशकारी हैं, और स्वयं बुद्धि इस आन्दोलन को देश के लिए लाभप्रद नहीं समझती।

ये तमाम बातें ठीक! पर हम तो यह महसूस करते हैं कि इस्लामी जगत और पूर्वी देशों की स्पष्ट वास्तविकताएं इस बात का पता दे रही हैं कि यह आन्दोलन यहां एक लम्बी मुद्दत तक सफल नहीं हो सकता। विशुद्ध भौतिकवादी आधारों पर भी इसकी सफलता की सम्भावनाएं अस्पष्ट हैं और अन्ततः इस की हैसियत 'गुनाह बे-लज्ज़त' (निःस्वाद पाप) से अधिक न होगी। हम इस सम्बन्ध में भी सोच-विचार के लिए कुछ बातें प्रस्तुत करते हैं।

पहली बात यह है कि बर्थ-कन्ट्रोल कोई स्वीकारात्मक वस्तु नहीं उसके ज़रिए हालात का मुकाबला करने के बजाय उन के आगे हथियार डाल देने की रीति अपनाई जाती है। यह एक निषेधात्मक वस्तु है और इसके ज़रिए कोई भी समस्या हल नहीं होती। संसार की आवश्यकता रोटी है, गर्भ-निरोधात्मक गोली नहीं। यह पूरा आन्दोलन एक निषेधात्मक आन्दोलन है और आर्थिक समस्या का कोई स्वीकारत्मक हल प्रस्तुत नहीं करता, यही कारण है कि यह

अगर सफल हो ही जाए, तव भी आर्थिक दृष्टि से देश को कुछ प्राप्त नहीं होता और हम वहीं रहते हैं, जहाँ थे, वल्कि कई पेचीदगियों में गिरफ़्तार हो जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि इस आन्दोलन का नतीजा, अगर इस पर वड़ी कड़ाई से अमल हो, तब भी—कम से कम शताब्दी, अर्द्ध शताब्दी के वाद निकलेगा। स्वयं यूरोप में इस के नतीजे वड़ी मुद्दत के बाद प्रकट हुए थे, इसलिए कोई तात्कालिक प्रभाव हमारी अर्थ-व्यवस्था पर इसका नहीं पड़ सकता। लम्वी मुद्दत में शायद इसके कुछ नतीजे निकलें, लेकिन लम्वी मुद्दत के बारे में, जैसा कि लार्ड डिकेंस ने कहा है, हम सिर्फ़ एक ही चीज़ जानते हैं और वह यह कि, 'लम्वी मुद्दत में हम सव मर जाएंगे।'

'In the long run we all shall be dead'.

तीसरी चीज़ यह है कि बर्थ-कंट्रोल केवल एक स्वास्थ्य-वर्द्धक या आर्थिक स्कीम नहीं है, जिससे संसार के हर देश में, जब चाहे परिचित करा दिया जाए, इसकी सफलता के लिए एक विशेष सांस्कृतिक वातावरण और कुछ प्रमुख नैतिक व सामाजिक दृष्टियों (Attitudes) का होना ज़रूरी है और उन की अनुपस्थिति में यह चल ही नहीं सकती। होरास बेल शा (Horace Bel Shaw) कहता है कि—

'वर्थ-कट्रोल के प्रचार से इस बात की आशा की जाती है कि आम लोगों में वीसियों वर्ष (Many decades) के वाद जन्म-दर कम होगा। यह प्रचार धीरे-धीरे जनमत तैयार करेगा। लेकिन क्रम वताता है कि इस प्रकार के प्रचार के उस समय तक प्रभावपूर्ण होने की आशा नहीं की जा सकती, जव तक किसी दूसरे सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनों द्वारा इस के लिए वातावरण न तैयार कर लिया जाए।'[1]

१· बेलशा मोरेह, 'पोपुलेशन ग्रोथ एन्ड लेविल्स आव कंज़म्पशन (विद स्पेशल रेफ़रेन्स टू कन्ट्रीज इन एशिया), लन्दन १९५६, पृ० २५.

यही लेखक आगे लिखता है—

'अनेक प्रकार की बाधाएं और आर्थिक व कलात्मक कठिनाइयां इतनी दृढ़ और प्रभावपूर्ण है कि बर्थ-कंट्रोल के लिए शिक्षा और प्रचार के प्रत्यक्ष तरीक़े जल्द फल न दे सकेंगे, जिस तरह स्वयं पश्चिम में भी वे तुरन्त फल न दे सके थे।'[१]

बेल शा इस नतीजे पर पहुंचता है कि—

'फलतः हम सन्तुलन के साथ जो बात कह सकते हैं, वह यह है कि लम्बी मुद्दत में लोगों के रवैये की तब्दीली की सम्भावनाओं के सिलसिले में हम उचित ही, बड़ी हद तक, आशावान (Qualified optimist) हो सकते हैं तथा आगामी जन्म-दर के बीस-तीस साल में ऐसी कमी के सिलसिले में जो मृत्यु-दर की कमी की पूर्ति कर दे, हम बड़ी हद तक निराश (Qualified Pessimist) हैं।'[२]

इसलिए यह लेखक मश्विरा देता है कि असल ध्यान आबादी से हट कर दूसरे साधनों पर देना चाहिए। सर चार्ल्स डार्विन जो बर्थ कंट्रोल का उग्र समर्थक है अपने ताज़ा लेख 'दी प्रेशर आफ़ पापुलेशन' में लिखता है कि—

'भले ही बड़ी तेज़ी के साथ यह (अर्थात बर्थ कंट्रोल का आंदोलन) फैलाया जाए, यह बात कल्पनातीत जान पड़ती है कि एक अरब लोगों की आदतों में इतनी पूर्ण क्रान्ति पचास साल के भीतर भी आ सकती है। सच तो यह है कि इस सम्बन्ध के इधर के अनुभव तो बड़े ही निराशाजनक हैं—यद्यपि यह कार्य इस योग्य है कि इसको अवश्य ही प्रोत्साहन दिया जाए, पर इस की कदापि आशा नहीं कि पचास वर्ष बाद भी यह संसार की आबादी के एक छोटे से भाग को अधिक

---

१. बेलशा मोरेस, 'पोपुलेशन ग्रोथ एन्ड लेविल्स आफ़ कंज़म्पशन (विद स्पेशल रेफेरेन्स टू कन्ट्रीज इन एशिया), लन्दन १९५६, पृ० २५,

२. वही पृ० ४५।

प्रभावित कर सकेगा ।"[1]

'उन देशों में जहां डाक्टरी सेवाएं बहुत ही कम मिल पाती हैं और बड़े-बड़े क्षेत्रों में बिल्कुल ही इन का अभाव है, बर्थ कन्ट्रोल न व्यवहार्य है और न इस की सफलता की संभावनाएं हैं ।"[2]

भारत में बर्थ कंट्रोल के आंदोलन का एक प्रथम ध्वाजावाहक डा० चन्द्रशेखर अपनी एक नई पुस्तक में लिखता है कि—

'जहां तक बर्थ कंट्रोल के संदेश को देहात के लाखों व्यक्तियों तक पहुंचाने का प्रश्न है, यह बात कही तो आसानी से जा सकती है लेकिन उसे व्यवहार रूप देना अति-कठिन है। स्थिति यह है कि आज एशिया के देहातों में डाक्टरी सुविधाओं का अभाव है। लाखों घरों में पानी का नल और स्नान गृह तक नहीं है और न ही शौचालयों का कोई प्रबन्ध है। देहात अस्पतालों और क्लिनिकों से बहुत दूर-दूर हैं और जिन स्थानों पर कुछ सुविधायें मौजूद हैं, वहां भी निर्धनता, अज्ञानता, दुर्बलता और निष्क्रियता की कठिन और परेशान कर देने वाली समस्यायें मौजूद हैं (जो उन्हें निष्क्रिय बना देती हैं।)'

यह तो हुई सामान्य कठिनाइयां, जहां तक प्रमुख आवश्यकताओं का प्रश्न है, वह हर-हर राष्ट्र में भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। सामाजिक और नैतिक दृष्टियां, धार्मिक विश्वास, पारिवारिक संगठन, यौन-रीतियां और उन के विधान, घरेलू हालात और दूसरे असंख्य तथ्य हैं जो बर्थ कंट्रोल के लिए तत्परता या अ-तत्परता पर प्रभाव डालेंगे और हमें स्पष्ट शब्दों में यह बात स्वीकार कर लेना चाहिए कि संसार के घने आबाद क्षेत्रों की जातियों और नस्लों के बारे में,

---

१. Darwin Mr. Charles 'The Pressure of Population, what's new ? No. 210, 1959, P. 3.

२. मेक कारमिक, वही पुस्तक पृ० ५७ ।

इन बातों से सम्बन्धित हमें बहुत कम जानकारियां प्राप्त हैं। इसलिए इस की सम्भावना है कि भारत के एक झोंपड़े, चीन के एक छप्पर और जापान या बर्मा के एक देहाती मकान से आपरेशन के कार्यों, दवाओं और बर्थ कंट्रोल के साधनों व उपकरणों के इस्तेमाल की सम्भावना अभी शताब्दियों दूर है।"[१]

अमेरिकी अर्थ-शास्त्री प्रोफ़ेसर रिचर्ड मेयर इस मत को व्यक्त करता है कि पिछड़े हुए देशों में बर्थ कंट्रोल के साधनों का प्रसार एक आर्थिक विचित्रता होगी। वह इस के तात्कालिक प्रभावों का बिल्कुल इंकारी है और ऐसे सात कारणों का उल्लेख करने के बाद, जो इस आंदोलन के मार्ग में बाधक हैं और जिन को दूर किए बिना उसे उन्नति प्राप्त नहीं हो सकती, लिखता है—

'ये वे हालात हैं जो किसी समाज में उसी समय मौजूद हो सकते हैं जब वहां आर्थिक प्रगति हो चुकी हो। संसार में अभी तक कोई एक उदाहरण भी ऐसा नहीं है, जो बताता हो कि एक ऐसी ग्राम्य आबादी ने, जिस का शिक्षा-स्तर गिरा हुआ हो और किसी प्रकार जीवन बिता रही हो, अपनी राज़ी-खुशी से बर्थ कंट्रोल को अपना लिया हो और उसे सफल भी बना लिया हो।'[२]

वर्तमान अनुभव भी विशेषज्ञों के उपर्युक्त मतों की पुष्टि करता है। जापान और प्योरटोरिको में दूसरे युद्ध के बाद करोड़ों रुपए के व्यय पर बर्थ कंट्रोल को प्रसारित किया गया और गर्भ-निरोधक दवाइयों को फैलाया गया, लेकिन दोनों जगह यह आंदोलन असफल रहा। अन्ततः जापान में गर्भपात (Abortion) को अपनाया गया

---

१. डा० श्रीपति चन्द्र शेखर त्रिपाठी, 'हंग्री प्यूपुल एन्ड एम्पटी लैंडस' लन्दन, १९५६, पृ० २५२-५३।

२. रिचार्ड म्यूर 'साईंस एन्ड एकोनोमिक डेवलपमेन्ट,, मसाच्यूट्स, १९५६ पृ० १४३।

और प्योरटोरिको में आपरेशन द्वारा बांझ कर देने का तरीक़ा अपना लिया गया।[1]

इस से मालूम हुआ कि वर्थ कंट्रोल—पूर्वी देशों में अव्यावहारिक है—इस के तजुर्बे नाकामियाब हो रहे हैं, और—अगर यह कामियाव हो भी जायें तव भी इस के प्रभाव पचास साल से एक शताब्दी बाद तक प्रकट होंगे 'और कौन जीता है तेरी ज़ुल्फ़ के सर होने तक।'

इस आन्दोलन के अव्यावहारिक होने के सिलसिले में एक पहलू और भी विचारणीय है। वर्थ कंट्रोल के जो साधन व उपकरण भी आज तक मालूम किए जा सके हैं, वे सब अति ख़र्चीले हैं।

पिछले दिनों इंग्लैंड के राज्य सभा (House of Lords) में वर्थ कंट्रोल पर बड़ी रोचक वार्ता हुई है। इस वार्ता में भाग लेते समय एक वक्ता ने बताया कि भारत के तजुर्बे इस बात पर गवाह हैं कि गर्भ-निरोधक साधनों का प्रयोग अति खर्चीला है और एक डाक्टर के शब्दों में, 'भले ही यह अति विचित्र लगे, पर सच तो यह है कि देहाती इलाक़ों में एक बच्चे के जन्म पर उतना ख़र्च नहीं आता जितना गर्भ-निरोधक साधनों की प्राप्ति पर है।' इस वार्ता में भाग लेते समय लार्ड केसी ने ए० एस० पार्क्स के हवाले से कहा कि—

'नई ज्ञात गोली के लिए ज़रूरी है कि महीने में २० गोलियां इस्तेमाल की जायें। एशियाई देहात की एक अनपढ़ महिला के लिए यह खखेड़-बहुत ही परेशानी की और असह्य बात है। शेष तमाम साधन (गर्भ-निरोधक) भी बेकार हैं, क्योंकि कुछ तो प्रभावी नहीं, कुछ बहुत मंहगे हैं और कुछ बहुत कष्टप्रद।'[2]

गर्भ-निरोध के नए साधनों के मंहगे होने का अंदाज़ा केवल एक उदाहरण से कीजिए—

---

१. देखिए मेक कारमिक, वही पुस्तक, पृ० ७१, ७५, ८६, ७।

२. ब्रिटिश मेडिकल जर्नल, लन्दन, जुलाई ८, १९६१, पृ० १२०।

आजकल वर्थ कंट्रोल की जिन गोलियों की वहुत चर्चा है, वे केवल इसी रूप में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं, जब हर माह उन का पूरा कोर्स इस्तेमाल किया जाए अर्थात २० गोलियां। अगर एक भी दिन छूट जाता है तो पूरी दवा निष्प्रभ हो जाती है। इस प्रकार हर औरत को साल में २४० गोलियां खानी पड़ेंगी, तब वह सन्तान के 'ख़तरे' से सुरक्षित हो सकेगी। एक गोली का मूल्य ५० सेन्ट है, जिस का अर्थ यह है कि हर साल एक औरत को १२० डालर या लगभग ५४० रुपए केवल इन गोलियों पर ख़र्च करने होंगे।[1]

६. असल हल

इस पूरी वार्ता के वाद स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न पैदा होता है कि असल हल क्या है ? इस सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण यह है कि असल हल पैदावार को वढ़ाना और आर्थिक, सांस्कृतिक साधनों को तरक़्क़ी देना है। सच तो यह है कि आर्थिक प्रगति और उत्पादन वृद्धि ही को 'हल' कहा जा सकता है, वरन् वर्थ कंट्रोल के लिए 'हल' का शब्द प्रयोग करना स्वयं उस शब्द का निरादर है।

अगर आप थोड़ा सा भी विचार करेंगे तो महसूस कर लेंगे कि वर्थ कंट्रोल की नीति को अपनाना वास्तव में अपनी पराजय स्वीकार करना है। इस का अर्थ तो यह है कि हम मनुष्य की क्षमताओं और विज्ञान की शक्तियों से निराश हो जायें और साधन व उत्पादन को वढ़ाने के बजाए मनुष्यों को ही कम करने लगें। अगर कपड़ा शरीर पर सही नहीं आता तो साइज़ वढ़ाने के वजाए मानव-देह ही की काट-छांट शुरू कर दी जाए ताकि वस्त्र ठीक आ जाए।

अगर इस दृष्टिकोण के पीछे कार्यकारी मनोवृत्ति का विश्लेषण

---

१. ये जानकारियां डोन मरे के लेख 'हाउ सेफ आर दी न्यू ब्रिटिश कंट्रोलपिल्स ?' प्रकाशित कोनेट अक्तूबर १९६० से ली गयी हैं।

किया जाए तो साफ़ जान पड़ता है कि इस में मनुष्य की हैसियत मूल ध्येय (End) की नहीं वल्कि केवल एक साधन जैसी है। जिस तरह और उत्पादनों को मांग के अनुसार वढ़ाया और घटाया जाता है, उसी प्रकार मनुष्यों की पैदावार को भी वढ़ाया और घटाया जाए। जिस तरह गेंदें, बल्ले और जूते ज़रूरत के अनुसार तैयार किए जाते हैं, वैसे ही मनुष्य भी माप के अनुसार तैयार किए जायें। मानो मनुष्य की हैसियत यह नहीं है कि हर चीज़ उसकी ज़रूरत के अनुसार ठीक की जाए, वल्कि सही वात यह है कि आर्थिक स्थिति के अनुसार स्वयं 'मनुष्य' ही को ठीक कर लिया जाए। दूसरे शब्दों में मनुष्य भी बस दूसरी चीज़ों की तरह एक चीज़ (Commodity) है और इस से अधिक कुछ नहीं।

यह मनोवृत्ति बड़ी ही घटिया मनोवृत्ति है और इस नीचता तक आदमी उसी समय उतर सकता है जव वह तमाम आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों का आदर करना छोड़ दे। मनुष्य मूल ध्येय है और शेष तमाम वस्तुएं उस की ज़रूरत को पूरा करने का एक साधन हैं। अगर आप इस क्रम को उलट देंगे तो मनुष्य अपने मूल स्थान से गिर जाएगा। और अगर मानवता के स्थान से गिर कर उसने भौतिक स्मृद्धि पा भी ली तो उस का क्या लाभ? इसी मनोवृत्ति पर आलोचना करते हुए प्रो० कोलन क्लार्क अपनी रिपोर्ट में लिखता है --

'कुछ लोग कहते हैं कि आर्थिक कारण इस वात का तक़ाज़ा करते हैं कि आबादी की वृद्धि की रफ़्तार को कम किया जाए या यह कि एक स्थिर (Stationary) या पतनशील आबादी मूल अभीष्ट है। मुझे इन में से किसी प्रस्ताव से कदापि कोई दिलचस्पी नहीं। मेरे विचार से आर्थिक विचारकों का काम यह है कि वे बतायें कि अर्थ व्यवस्था को आबादी की आवश्यकतानुसार कैसे ढाला जाए, न यह कि आवादी को अर्थ व्यवस्था के अनुसार किस प्रकार काटा-छाटा

जाए। मां-बाप अपनी रुचि और अपनी पसन्द के अनुसार बच्चे पैदा करते हैं और उन्हें भविष्य में भी ऐसा ही करना चाहिए। किसी अर्थ-शास्त्री को, भले ही वह बड़ा ज्ञानी व महान विशेषज्ञ हो और किसी प्रधान मंत्री को, भले ही वह महा शक्तिशाली हो, यह अधिकार नहीं है कि वह मां-बाप से यह कहे कि ऐसा न करो। कदापि नहीं? सारे अधिकार दूसरे पलड़े में हैं। हर मां-बाप को जरूर यह अधिकार है कि वह अर्थ-शास्त्रियों और प्रधान मंत्रियों से यह मांग करे कि वे अर्थ व्यवस्था को इतना सुगठित बनाएं कि तमाम लोगों की उन की मौलिक आवश्यकतायें पूरी हो जायें।"

हमारे विचार से समस्या का असल हल पैदावार को बढ़ाने और आर्थिक साधनों को प्रगतिशील बनाने में है और इस की असीम सम्भावनायें मौजूद हैं। जिस चीज़ की ज़रूरत है, वह साहस, योग्यता, सही नियोजन और व्यावहारिक प्रयत्न है। अगर हम झूठे आश्रयों को छोड़ कर अपनी शक्तियां रचनात्मक कार्यों में लगा दें तो कोई कारण नहीं कि संसार के दूसरे प्रगतिशील देशों से अच्छा स्तर न बना लें। असल खराबी हमारा अपना हतोत्साह होना और अकर्मण्य बन कर जीवन बिताना है, वरन् प्रकृति ने हमें भी वह कुछ दे रखा है, जिस के बल-बूते पर हम बहुत कुछ कर सकते हैं, पर हम करते ही नहीं।

—o—

१. क्लार्क कॉलिन, 'रिपोर्ट, ए जनरल रिव्यू आव सम एकोनोमिक प्राब्लम्स आव पाकिस्तान, १९५३, पृ० २।